विषय सूची

भूमिका

'पृथ्वीराज रासो' हिंदी साहित्य का अत्यन्त महत्त्वपूर्ण ग्रंथ है। इसके संबंध में विद्वानों ने अनेक प्रकार के मत प्रकट किए हैं। कुछ लोग इसे एकदम अप्रामाणिक रचना मानते हैं और कुछ दूसरे लोग पूर्ण रूप से तो नहीं पर आंशिक रूप से इसे प्रामाणिक ग्रंथ मानते हैं। इस विचार के लोगों का विश्वास है कि चंद नाम का कोई कवि सचमुच ही पृथ्वीराज के काल में उत्पन्न हुआ था और उसने सचमुच ही कोई काव्य लिखा था जो अब प्रक्षेपों से स्फीत और विकृत हो गया है। प्रामाणिकता और अप्रामाणिकता का विवाद प्रधान रूप से इस प्रश्न पर केंद्रित है कि सचमुच ही पृथ्वीराज का समकालीन और सखा कोई चंद नामक कवि था भी या नहीं। पृथ्वीराज रासो की घटनाओं को ऐतिहासिक दृष्टि से देखनेवालों ने प्रायः निश्चित रूप से ही कह दिया है कि यह बात संभव नहीं दिखती। समकालीन कवि कभी ऐसी ऊल-जुलूल बातें नहीं लिख सकता। जो लोग पृथ्वीराज रासो को प्रामाणिक रचना समझते हैं वे उन घटनाओं की ऐतिहासिकता सिद्ध करने का प्रयत्न करते हैं। इस प्रकार प्रत्येक आलोचक ग्रंथागत घटनाओं की ऐतिहासिकता की जाँच में ही अपनी सारी शक्ति लगा देता है। अभी तक ग्रंथ की साहित्यिक महिमा के समझने का प्रयत्न बहुत कम किया गया है।

फिर भी पृथ्वीराज रासो के साहित्यिक महत्त्व को अनुभव किया जाता है। प्रत्येक विश्वविद्यालय अपनी उच्चतर कक्षाओं में रासो का कुछ अंश— जो अत्यन्त नगण्य हुआ करता है—पाठ्यक्रम में रखा करता है। इन अंशों से रासो की महिमा का बहुत मामूली परिचय ही मिल पाता है। पृथ्वीराज रासो इतना विशाल ग्रंथ है कि उसका संक्षिप्त रूप प्रकाशित करना भी कठिन कार्य ही है। परन्तु यह प्रत्येक विचारशील अध्यापक अनुभव करता है कि विभिन्न विश्वविद्यालयों में जो अंश पढ़ाए जाते हैं वे रासो का ठीक-ठीक परिचय नहीं दे सकते। संक्षेप करने में बहुत कठिनाइयाँ भी हैं। किस अंश को लिया जाय, किस अंश को छोड़ा जाय।

गत मार्च बिहार राष्ट्रभाषा परिषद् ने मुझे हिंदी साहित्य के आदिकाल

पर कुछ व्याख्यान देने के लिये आमंत्रित किया। उस अवसर पर रासो के संबंध में अपने विचार प्रकट करने का अवसर मुझे मिला। बहुत दिनों से मेरे मन में रासो के प्रामाणिक अंशों के संबंध में एक अस्पष्ट धारणा रही है। मैं उन विद्वानों के मत को ही अपना मत मानता रहा हूँ जो स्वीकार करते हैं कि रासो में कुछ-न-कुछ चंद की प्रामाणिक रचनाएँ हैं अवश्य। पुरातन प्रबंध संग्रह में कुछ छप्पयों के प्राप्त हो जाने से यह मत और भी विश्वास योग्य हो गया है। जब मुनि जिनविजय जी शान्तिनिकेतन में थे तो उनकी कृपा से मुझे कई जैन प्रबंधों को हिंदी में भाषान्तरित करने का सुयोग प्राप्त हुआ था। उनमें से एक का भाषान्तर (प्रबंध चिन्तामणि) सिंघी जैन ग्रंथमाला में प्रकाशित भी हो चुका है। बाकी अभी प्रकाशित नहीं हुए हैं। उस समय मुझे पुरातन प्रबंध संग्रह को भी भाषान्तरित करने का अवसर मिला था। तभी से मेरे मन में रासो के मूल रूप के संबंध में जिज्ञासा उत्पन्न हुई थी। बिहार राष्ट्रभाषा परिषद् के व्याख्यानों में मैंने अपने विचारों को विद्वानों के सामने रख दिया। अभी भी उस पर पंडितों की प्रतिक्रिया नहीं मालूम हो सकी। उस व्याख्यान में मैंने रासो के मूल प्रामाणिक अंश माने जाने योग्य अंशों की ओर संकेत किया था। प्रस्तुत संक्षिप्त रासो उन्हीं विचारों पर आधारित है। केवल उन्हीं अंशों को संक्षिप्त किया गया है जिनकी प्राचीनता उन व्याख्यानों में प्रमाणित की गई है। यथासंभव इस बात का भी ध्यान रखा गया है कि विद्यार्थियों को रासो की पूरी साहित्यिक महिमा का परिचय मिल जाय। मेरे विचार विस्तार से तो 'हिंदी साहित्य के आदिकाल' नामक पुस्तक में आ गए हैं, परन्तु संक्षेप में उनका उल्लेख यहाँ किया जा रहा है।

काशी ना० प्र० सभा से प्रकाशित 'पृथ्वीराज रासो' में ढाई हजार पृष्ठ हैं

जो ६६ सर्गों में विभाजित हैं। सबसे बड़ा समय कनवज्ज युद्ध है जो संभवतः रासो का मूल कथानक है। यह विश्वास किया जाता है कि चन्द पृथ्वीराज का मित्र, कवि और सलाहकार था। रासो में वह तीनों रूपों में चित्रित है। इस ग्रंथ के अनुसार दोनों के जन्म और मरण की तिथि भी एक है। इस प्रकार सदा साथ रहनेवाले अभिन्न मित्र की रचना निश्चय ही बहुत प्रामाणिक होनी चाहिए। यही सोचकर सुप्रसिद्ध विद्वत्सभा रायल एशियाटिक सोसायटी ऑफ बंगाल ने इस ग्रंथ का प्रकाशन आरंभ किया था। कुछ थोड़ा-सा अंश प्रकाशित भी हो चुका था किंतु इसी समय डा० बूलर को पृथ्वीराज विजय की एक खंडित प्रति हाथ लगी। उस पुस्तक की परीक्षा करने के बाद डा० बूलर इस निष्कर्ष पर पहुँचे कि पृथ्वीराज विजय इतिहास की दृष्टि से अधिक प्रामाणिक ग्रन्थ है और पृथ्वीराजरासो अत्यंत अप्रामाणिक, क्योंकि पृथ्वीराजकालीन अभिलेखों से पृथ्वीराजविजय में वर्णित घटनाएँ तो मिल जाती हैं लेकिन पृथ्वीराजरासो में वर्णित घटनाएँ नहीं मिलतीं। उनका पत्र सोसायटी के प्रोसीडिंग्स (कार्य विवरण) में छापा गया और पृथ्वीराजरासो का प्रकाशन बंद कर दिया गया। उन दिनों के युरोपियन विद्वान् मध्यदेश की रचनाओं का महत्त्व दो दृष्टियों से आंकते थे—ऐतिहासिक तथ्यों को प्राप्त करने और भाषाशास्त्रीय समस्याओं को सुलझाने की दृष्टि से। रासो से यह उद्देश्य सिद्ध नहीं होता था। कितनी ही ऐसी अनमिल बातें इस पुस्तक में मिलीं जो इसके ऐतिहासिक रूप को निर्विवाद रूप से गलत साबित करती थीं। पृथ्वीराजविजय के अनुसार पृथ्वीराज सोमेश्वर और कर्पूरदेवी के पुत्र थे। कर्पूरदेवी चेदि-नरेश की कन्या थी। जब पुत्र पृथ्वीराज नाबालिग़ था तो माता ने कदम्बवास नामक मंत्री की सहायता से राज्य संचालन किया था। यह बात अभिलेखों से मिलती है। इधर पृ० रासो के अनुसार ये दिल्ली के राजा अनंगपाल की पुत्री के लड़के थे। मजेदार बात यह है कि पृ० विजय में चंदबरदाई नामक किसी कवि का नाम नहीं है। एक जगह चन्द्रराज कवि का उल्लेख अवश्य है परंतु उसे कुछ विद्वानों ने कश्मीरी कवि चन्द्रक से अभिन्न माना है। दूसरी भी बहुत-सी अनैतिहासिक बातें रासो में मिलती हैं।

सातवीं-आठवीं शताब्दी से इस देश में ऐतिहासिक व्यक्तियों के नाम पर काव्य लिखने की प्रथा खूब चली। इन्हीं दिनों ईरान के साहित्य में भी इस प्रथा का प्रवेश हुआ। इस काल में उत्तर-पश्चिमी सीमांत से बहुत-सी जातियों का प्रवेश इस देश में होता रहा। वे राज्य-स्थापन करने में भी समर्थ हुईं। पता नहीं कि उन जातियों की स्वदेशी प्रथा की क्या-क्या बातें इस देश में

चलीं। साहित्य में नये-नये काव्यरूपों का प्रवेश इस काल में हुआ अवश्य। संभवतः ऐतिहासिक पुरुषों के नाम पर काव्य लिखने या लिखाने की चलन भी उनके संसर्ग का फल हो। परंतु भारतीय कवियों ने ऐतिहासिक नाम भर लिया, शैली उनकी वही पुरानी रही जिसमें काव्य-निर्माण की ओर अधिक ध्यान था, विवरण-संग्रह की ओर कम; कल्पनाविलास का अधिक मान था, तथ्यनिरूपण का कम; संभावनाओं की ओर अधिक रुचि थी, घटनाओं की ओर कम; उल्लसित आनंद की ओर अधिक झुकाव था, विलसित तथ्यावली की ओर कम। इस प्रकार इतिहास को कल्पना के हाथों परास्त होना पड़ा। ऐतिहासिक तथ्य इन काव्यों में कल्पना को उकसा देने के साधन मान लिए गए हैं। राजा का विवाह, शत्रुविजय, जलक्रीड़ा, शैल-वन-विहार, दोला-विलास, नृत्य-गान-प्रीति—ये सब बातें ही प्रमुख हो उठी हैं। बाद में क्रमशः इतिहास का अंश कम होता गया और संभावनाओं का जोर बढ़ता गया। राजा के शत्रु होते हैं, उनसे युद्ध होता है। इतिहास की दृष्टि में एक युद्ध हुआ, और भी तो हो सकते थे। कवि संभावना को देखेगा। राजा के एकाधिक विवाह होते थे। यह तथ्य अनेकों विवाहों की संभावना उत्पन्न करता है, जल-क्रीड़ा, और वन-विहार की संभावना की ओर संकेत करता है और कवि को अपनी कल्पना के पङ्ख खोल देने का अवसर देता है। उत्तरकाल के ऐतिहासिक काव्यों में इसकी भरमार है। ऐतिहासिक विद्वान् के लिये संगति मिलाना कठिन हो जाता है।

वस्तुतः इस देश में इतिहास को ठीक आधुनिक अर्थ में कभी नहीं लिया गया। बराबर ही ऐतिहासिक व्यक्ति को पौराणिक या काल्पनिक कथा-नायक जैसा बना देने की प्रवृत्ति रही है। कुछ में दैवी शक्ति का आरोप करके पौराणिक बना दिया गया है—जैसे राम, बुद्ध, कृष्ण आदि—और कुछ में काल्पनिक रोमांस का आरोप करके निजंधरी कथाओं का आश्रय बना दिया गया है—जैसे उदयन, विक्रमादित्य और हाल। जायसी के रतनसेन, रासो के पृथ्वीराज में तथ्य और कल्पना का—फैक्टस् और फिक्शन का—अद्भुत योग हुआ है। कर्मफल की अनिवार्यता में, दुर्भाग्य और सौभाग्य की अद्भुत-शक्ति में और मनुष्य के अपूर्व शक्तिभांडार होने में दृढ़ विश्वास ने इस देश के ऐतिहासिक तथ्यों को सदा काल्पनिक रंग में रँगा है। यही कारण है कि जब ऐतिहासिक व्यक्तियों का भी चरित्र लिखा जाने लगा तब भी इतिहास का कार्य नहीं हुआ। अंत तक ये रचनाएँ काव्य ही बन सकीं, इतिहास नहीं।

फिर भी निजंधरी कथाओं से वे इस अर्थ में भिन्न थीं कि उनमें बाह्य तथ्यात्मक जगत् से कुछ-न-कुछ योग अवश्य रहता था। कभी-कभी मात्रा में कमी-वेशी तो हुआ करती थी पर योग रहता अवश्य था। निजंधरी कथाएँ अपने-आप में ही परिपूर्ण होती थीं।

जिस प्रकार भारतीय कवि काल्पनिक कथानकों में ऐसी घटनाओं को नहीं आने देता जो दुःख-परक विरोधों को उकसावे उसी प्रकार वह ऐतिहासिक कथानकों में भी करता है। सिद्धांततः काव्य में उस वस्तु का आना भारतीय कवि उचित नहीं समझता जो तथ्य और औचित्य की भावनाओं में विरोध उत्पन्न करे, दुःखोद्रेचक विषम परिस्थितियों – ट्रेजिक कंट्रेडिक्शंस—की सृष्टि करे; परंतु वास्तव जीवन में ऐसी बातें होती ही रहती हैं। इसलिये इतिहासाश्रित काव्य में भी ऐसी बातें आएँगी ही। बहुत कम कवियों ने ऐसी घटनाओं की उपेक्षा कर जाने की बुद्धि से अपने को मुक्त रखा है। यही कारण है कि इन ऐतिहासिक काव्यों के नायक को धीरोदात्त बनाने की प्रवृत्ति ही प्रबल हो गई है; परंतु वास्तविक जीवन के कर्त्तव्य-द्वंद्व, आत्मविरोध और आत्म-प्रतिरोध जैसी बातें उसमें नहीं आ पातीं। ऐसी बातों के न आने से इतिहास का रस भी नहीं आ पाता और कथानायक कल्पित पात्र की कोटि में आ जाता है। फिर, जीवन में कभी हास्योद्रेचक अनमिल स्वर भी मिल जाते हैं। संस्कृत-काव्य का कर्त्ता कुछ अधिक गंभीर रहने में विश्वास करता है और ऐसे प्रसंगों को छोड़ जाता है। ऐसे प्रसंगों को तो वह भरसक नहीं आने देना चाहता जहाँ कथा-नायक के नैतिक पतन की सूचना मिलने की आशंका हो। यदि ऐसे प्रसंगों की वह अवतारणा भी करता है तो घटनाओं और परिस्थितियों का ऐसा जाल तानता है जिसमें नायक का कर्त्तव्य उचित रूप में प्रतिभासित हो। सब मिलाकर ऐतिहासिक काव्य काल्पनिक निजंधरी कथानकों पर आश्रित काव्य से बहुत भिन्न नहीं होते। उनसे आप इतिहास के शोध की सामग्री संग्रह कर सकते हैं, पर इतिहास को नहीं पा सकते—इतिहास, जो जीवन्त मनुष्य के विकास की जीवनकथा होता है, जो कालप्रवाह से नित्य उद्घाटित होते रहने वाले नव-नव घटनाओं और परिस्थितियों के भीतर से मनुष्य की विजय-यात्रा का चित्र उपस्थित करता है, और जो काल के परदे पर प्रतिफलित होने वाले नये-नये दृश्यों को हमारे सामने सहज भाव से उद्घाटित करता रहता है। भारतीय कवि इतिहास प्रसिद्ध पात्र को भी निजंधरी कथानकों की ऊँचाई तक ले जाना चाहता है। इस कार्य के लिये वह कुछ कथानक-रूढ़ियों का प्रयोग

करता है जो कथानक को अभिलषित दिशा में मोड़ देने के लिये दीर्घकाल से प्रचलित हैं। इनसे कथानक में सरसता आती है और घटना प्रवाह में एक प्रकार की लोच आ जाती है। अस्तु।

जहाँ तक रासो की ऐतिहासिकता का संबंध है डा० बूलर, मारिसन, गौ० ही० ओझा, मुंशी देवीप्रसाद जी आदि प्रामाणिक इतिहास-लेखकों ने उसे अविश्वसनीय सिद्ध कर दिया है। अब इसकी लिखित घटनाओं को ऐतिहासिक सिद्ध करने का प्रयत्न बन्द कर देना ही उचित है। किंतु फिर भी रासो का महत्त्व है। बहुत दिनों तक विद्वानों में यह विश्वास था कि यद्यपि रासो में प्रक्षिप्त अंश बहुत हैं तथापि इसमें चन्द के कुछ-न-कुछ बचन अवश्य हैं जो काफी पुराने हैं। अब तक यही विश्वास किया जाता रहा है कि प्रक्षेपों के समुद्र में से मूल कविताओं के मोती चुन लेना असम्भव ही है। इधर हाल में मुनि जिन-विजय जी ने पुरातन प्रबंध संग्रह में जयचन्द प्रबंध नामक एक प्रबंध प्रकाशित किया जिसमें चन्द के नाम से ४ छप्पय दिए हैं। इसकी भाषा परिनिष्ठित साहित्यिक अपभ्रंश के निकट की भाषा है यद्यपि उसमें कुछ चिह्न ऐसे भी मिलते हैं जिनसे हम अनुमान कर सकते हैं कि संदेश रासक की भाषा के सदृश यह भाषा भी कुछ आगे बढ़ी हुई भाषा है। जिस प्रति से यह छप्पय उद्धृत किए गए हैं वह संभवतः पन्द्रहवीं शताब्दी की लिखी हुई है। इससे यह सिद्ध होता है कि पन्द्रहवीं शताब्दी में लोगों को चन्द के छप्पय का ज्ञान था और ये छप्पय परिनिष्ठित अपभ्रंश से थोड़ी आगे बढ़ी भाषा में लिखे गए थे। इन पद्यों के प्रकाशन के बाद से अब इस विषय में किसी को संदेह नहीं रह गया है कि चन्द नामक कोई कवि पृथ्वीराज के दरबार में अवश्य थे और उन्होंने ग्रंथ भी लिखा है। सौभाग्यवश वर्त्तमान रासो में भी ये छंद कुछ विकृत रूप में प्राप्त हो गए हैं। इस पर से यह अनुमान किया जा सकता है कि वर्त्तमान रासो में चन्द के मूल छंद अवश्य मिले हुए हैं।

पृ० रा० रासो का अध्ययन करने के बाद और नवीं-दसवीं शताब्दी में प्रचलित कथाओं के लक्षण और काव्यरूपों को ध्यान में रख कर देखने से ऐसा लगता है कि यद्यपि चन्द के मूल वचनों को खोज लेना अब भी कठिन है किंतु उसमें क्या-क्या वस्तुएँ थीं और कौन-कौन-सी कथाएँ थीं, इस बात का पता लगा लेना उतना कठिन नहीं है। उन दिनों की कथाएँ दो व्यक्तियों के संवाद के रूप में लिखी जाती थीं। चन्द ने भी रासो को शुक और शुकी के संवाद में लिखा था जैसे विद्यापति ने कीर्तिलता को भृङ्ग और भृङ्गी के

संवाद के रूप में लिखा था और कौतूहल कवि ने लीलावती कथा को कवि और कविपत्नी के संवाद के रूप में लिखा था। फिर चन्द वरदाई का यह काव्य रासक भी है जो गेय काव्य हुआ करता था जिसमें मृदु और उद्धत प्रयोग हुआ करते थे। संदेश रासक में जिस प्रकार कवि ने अपनी नम्रता प्रकट करते हुए कहा है कि बड़े-बड़े कवियों की रचनाएँ उपलब्ध हैं तो क्या छोटे कवि अपनी रचनाओं से आनंदित न हों। उसी प्रकार और उसी शैली में पृथ्वीराज रासो में भी यह बात कही गई है। इतना ही नहीं एक दो प्राकृत गाथाएँ तो रासो में भी प्रायः वही हैं जो संदेशरासक में हैं[1]।

फिर, संदेशरासक में बीच-बीच में कवि सूचना देता है कि अमुक पात्र ने अमुक छंद में अपनी बात कही। उसी प्रकार पृथ्वीराज रासो में भी बीच-बीच में कह दिया गया है कि अमुक पात्र ने अमुक छंद में अपनी बात कही। इन सब बातों पर विचार करने से ऐसा जान पड़ता है कि चन्द ने भी अपभ्रंश के रासकों की शैली पर ही अपना रासो लिखा। संदेशरासक में लगभग एक तिहाई पद्य रासक छंदों में है। पृथ्वीराजरासो में रासक छंद बहुत कम व्यवहृत हुआ है। पर संदेशरासक से यह तो सिद्ध हो ही जाता है कि रासक ग्रंथों में दूसरे छंदों का—विशेषकर दोहा और गाथा का—प्रचुर प्रयोग होता था। वीर-रस की प्रधानता होने के कारण चन्द ने छप्पय छंदों का अधिक प्रयोग किया था इस दृष्टि से विचार करने पर रासो के निम्नलिखित प्रसंग प्रामाणिक जान पड़ते हैं—

१—आरंभिक अंश, २—इंछिनी विवाह, ३ शशिव्रता का गन्धर्व विवाह, ४—तोमर पाहार का शहाबुद्दीन का पकड़ना, ५—संयोगिता का जन्म विवाह तथा इंछिनी और संयोगिता की प्रतिद्वन्द्विता और समझौता[2]।

इन अंशों में भाषा में उस प्रकार का बेडौल और बेमेल ठूँसठाँस नहीं है और कवित्त का सहज प्रवाह है। इनमें चन्द वरदाई ऐसे सहज प्रफुल्ल कवि के रूप में दृष्टिगत होते हैं जो विषम परिस्थितियों से भी जीवन रस खींचते रहते हैं। वे केवल कल्पना विलासी कवि ही नहीं निपुण मंत्र, दाता के रूप में भी सामने आते हैं। चाहे रूप और शोभा का वर्णन हो, चाहे ऋतु-वर्णनकी

---

[1] विशेष विस्तार के लिये देखिये—हिंदी साहित्य का आदि काल, पटना, १९५२।

[2] विशेष विस्तार के लिये हिन्दी साहित्य का आदिकाल देखिए।

उत्फुल्लता का प्रसंग हो, या युद्ध की भेरी का प्रसंग हो, चन्द बरदाई सर्वत्र एक समान अविचलित और प्रसन्न दिखाई पड़ते हैं। रूप और सौंदर्य के प्रसंग में उनकी कविता रुकना ही नहीं जानती। निस्संदेह उन्होंने काव्यगत रूढ़ियों का बहुत व्यवहार किया है और परंपरा प्रचलित उपमानों से सौंदर्य की अभिव्यञ्जना उनके साहित्य का प्रधान कौशल है तथापि वह कवि के आनन्द निर्भर चित्त को पूर्णरूप से प्रकट करती है। कथानक रूढ़ियों की दृष्टि से तो चन्द का काव्य बहुत ही महत्त्वपूर्ण है और परवर्तीकाल में जिन लोगों ने उसमें प्रक्षेप किया है वे चन्द की इस प्रवृत्ति को बहुत अच्छी तरह पहचानते थे इसीलिये प्रक्षेप करनेवालों ने चुन-चुन करके कथानक रूढ़ियों और काव्य रूढ़ियों का सन्निवेश किया है।

साधारणतः भारतीय कथाओं में कथानक को अभीष्ट दिशा में मोड़ने के लिये निम्नलिखित कथानक रूढ़ियों का व्यवहार हुआ है :—

१—स्वप्न में प्रियमूर्ति दर्शन, २—कहानी कहनेवाला सुआ, ३—शिकार खेलते समय घोड़े का जंगल में मार्ग भूलना ४—मुनि का शाप ५—रूप परिवर्तन ६—लिंग परिवर्तन ७—परकाय प्रवेश, ८—आकाश वाणी। ९—अभिज्ञान या साहिदानी १०—परिचारिका का राजा से प्रेम और उसका राजकन्या रूप में अभिज्ञान। ११—नायिका का चित्र, १२—नायक का औदार्य १३—विरहवेदन १४—चौर्य प्रेम और फिर विवाह १५—नट-नटी द्वारा रूप श्रवण और प्रेम १६—संदेशवाहक हंस या कपोत १७—विजनवन में सुन्दरियों से साक्षात्कार, १८—उजाड़ शहर का मिल जाना और वहाँ नायक का राजा हो जाना। १९—शत्रु-संतापित सरदार की प्रिया को शरण देना और युद्ध मोल लेना, २०—अतिप्राकृत दृश्य से लक्ष्मी प्राप्ति का शकुन इत्यादि-इत्यादि।

लगभग इन सभी कथानक रूढ़ियों का प्रयोग पृथ्वीराज रासो में किया गया है। महत्वपूर्ण प्रत्येक विवाहों के समय नट का नर्तकी का स्वप्न दर्शन का, चित्र दर्शन का, हंस दौत्य या शुक दौत्य का उपयोग किया गया है। शशिव्रता या संयोगिता इन दोनों मुख्य रानियों को अप्सरा का अवतार बताया गया है। प्रत्येक विवाह में आगे या पीछे कुछ-न-कुछ युद्ध का प्रसंग अवश्य आता है और प्राचीन निजंधरी कथाओं के समान कन्याहरण प्रधान रूप से वर्णित हुआ है। शोभा चाहे प्रकृति की हो या मनुष्य की हो, परंपरा-प्रचलित रूढ़ उपमानों के सहारे ही निरूपित है और अधीनस्थ सामन्तों की स्वामिभक्ति और पराक्रम

अत्यंत उज्ज्वल रूप में प्रकट हुआ है। छंदों का परिवर्तन बहुत अधिक हुआ है पर कहीं भी अस्वाभाविकता नहीं आई है। १२वीं-१३वीं शती के अपभ्रंश साहित्य में छंदों का यह परिवर्तन बहुत अधिक प्रचलित हो गया था। जो छंद परिवर्तन के लिये केशव को दोषी समझते हैं वे बहुत ऊपर से काव्य रूपों की आलोचना करते हैं। वस्तुतः केशव की रामचन्द्रिका तक आते-आते यह छंदोबहुला प्रथा निर्जीव और विकृत हो गई थी। अत्यधिक प्रक्षेप होते रहने के बाद भी पृथ्वीराजरासो में यह प्रथा सजीव रूप में वर्त्तमान है। अनुकरण करनेवालों ने भी चन्द की शैली को ठीक रूप में पकड़ा है और वर्त्तमान रूप में भी रासो के छंद जब बदलते हैं तो श्रोता के चित्त में प्रसंगानुकूल नवीन कंपन उत्पन्न करते हैं।

वर्तमान रासो में युद्धों का प्रसंग बहुत अधिक है, और शहाबुद्दीन तो इसमें हर मौके-बेमौके अनायास आ पड़ता है। अधिकतर भट्टभणन्त और गलत तिथियों का हिसाब ऐसे प्रसङ्ग में ही आता है। ऐसा कहने में कुछ भी संकोच मालूम नहीं पड़ता, कि ये युद्धों के अनावश्यक विस्तारित वर्णन, चौहान और कमधुज्ज के सरदारों के नामों की सूची आदि बातें परवर्ती ठूँसठाँस हैं। मूल रासो शुक और शुकी के संवाद रूप में ही लिखा गया था, और संभवतः कीर्तिलता के समान प्रत्येक समय के आरंभ में शुक और शुकी प्रसंग उसमें भी था। इधर रासो के अनेक संक्षिप्त संस्करणों का पता लगा है, और पंडितों में यह जल्पना-कल्पना आरंभ हुई है कि इन्हीं छोटे संस्करणों में से कोई रासो का मूल रूप है या नहीं। अभी तक इन संस्करणों का जो कुछ विवरण देखने में आया है, उससे तो ऐसा ही लगता है कि ये सब संस्करण रासो के संक्षेप रूप ही हैं।

इन्हीं विचारों के अनुसार वर्त्तमान संक्षिप्त रूप का संकलन किया गया है। मेरा यह दावा नहीं है कि यह रासो का मूल रूप है। यह निर्णय करना अब बड़ा कठिन है कि चंद का वास्तविक रचनाएँ कौन-सी है पर मेरा विश्वास अवश्य है कि चंद की मूल रचना कुछ इसी के आस-पास होगी। विद्यार्थी को इस संक्षिप्त रूप से रासो की सभी विशेषताओं को समझने का अवसर मिलेगा और वह उस ग्रन्थ की साहित्यिक महिमा के प्रति अधिक जिज्ञासु और आग्रह-वान् होगा। इसी विश्वास से यह श्रम किया गया है।

काशी विश्वविद्यालय, बनारस
अक्षय तृतीया, सं० २००६

हजारी प्रसाद द्विवेदी

आदि पर्व

साटक ॥ ॐ ॥

आदी देव प्रनम्य नम्य गुरयं, वानीय वंदे पयं ।
सिष्टं धारन धारयं वसुमती, लच्छीस चरनाश्रयं ॥
तं गुं तिष्टति ईस दुष्ट दहनं, सुरनाथ सिद्धिश्रयं ॥
थिर चर जंगम जीव चंद नमयं, सर्वेस वदीमयं ॥ १ ॥

॥ भुजंगप्रयात ॥

प्रथमं भुजंगी सुधारी ग्रहंनं । जिने नाम एकं अनेकं कहंनं ॥
दुती लभ्भयं देवतं जीवतेसं । जिनैं विश्व राख्यौ वली मंत्र सेसं ॥
चवं वेद वंभं हरी किति भाखी । जिनैं ध्रम्म साध्रम्म संसार साखी ॥
तृती भारती व्यास भारत्थ भाख्यौ । जिनैं उत्त पारथ्थ सारथ्थ साख्यौ ॥
चवं सुक्खदेवं परीखत्त पायं । जिनैं उद्धर्यो अव्व कुवंस रायं ॥
नरं रूप पंचम्म श्रीहर्ष सारं । नलैराय कंठं दिने पद्ध हारं ॥
छटं कालिदासं सुभाषा सुवद्धं । जिनैं वागवानी सुवानी सुवद्धं ॥
कियो कालिका मुक्ख वासं सुसुद्धं । जिनैं सेत वंध्योति भोज प्रवंधं ॥
सतं डंडमाली उलाली कवित्तं । जिनैं बुद्धि तारंग गंगा सरित्तं ॥
जयदेव अठ्ठं कवी कव्विरायं । जिनैं केवलं किति गोविंद गायं ॥
गुरं सव्व कव्वी लहू चंद कव्वी । जिनैं दर्सियं देवि सा अंग हव्वी ॥
कवी किति कित्ती उकती सुदिख्खी । तिनैं की उचिष्टी कवी चंद भख्खी ॥ २ ॥

॥ दूहा ॥

उचिष्ट चंद छंदह वयन । सुनत सु जंपिय नारि ॥
तनु पवित्र पावन कविय । उकति अनूठ उधारि ॥ ३ ॥

॥ कवित्त ॥

कहैं कंति सम कंत । तंत पावन वद कव्विय ॥
तंत मंत उच्चार । देवि दरसिय मझ्झि हव्विय ॥
तंत वीर उग्रंत । रंग राजन सुख दाइय ॥

अवलंब उकति उच्चार करि। जिहित मोहि कोविद रहै ॥
सम ब्रह्मरूप या सब्द कहुँ। क्यों उचिष्ट कवियन कहै ॥ ४ ॥

॥ कवित्त ॥

सम वनिता वर वंदि। चंद जंपिय कोमल कल ॥
सबद ब्रह्म इह सत्ति। अपर पावन कहि निर्मल ॥
जिहित सबद नहि रूप। रेख आकार ब्रन्न नहिं ॥
अकल अगाध अपार। पार पावन त्रयपुर महिं ॥
तिहिं सबद ब्रह्म रचना करों। गुरु प्रसाद सरसें प्रसन ॥
जद्यपि सु उकति चूकों जुगति। तो कमल बदनि कवितह हँसन ॥ ५ ॥

॥ कवित्त ॥

तुम बानी वरचंद। नाग देखंत विमल मति ॥
छंद भंग गन रहित। कंठ कौमार काव्य कृत ॥
बुधि तरंग सम गंग। उकति उच्चार अमिय कल ॥
सुरन सुनत विहसंत। मंत जनु वस्य करन बल ॥
अवतार भूप प्रिथिराज पहु। राज सुख तिन सम लहहिं ॥
बीराधि बीर सामंत सब। तिन सु गल्ह अच्छी कहहिं ॥ ६ ॥

॥ कवित्त ॥

गज गवनी प्रति चंद। छंद कोमल उच्चारिय ॥
मनहरनी रस वेलि। सुरन सागर रस धारिय ॥
बंक नयन वय बाल। प्रान वल्लभ सुखदाइय ॥
अगुन निगुन गुरु ग्रहनि। गवरि पूजा फल पाइय ॥
भए आदि अंत कविता जिते। तिन अनंत गति मति कहिय ॥
अनेक ग्रंथ तिन वरनयत। यों उचिष्ट मति मैं लहिय ॥ ७ ॥

॥ दूहा ॥

कृति कित्ति चहुआन की। जुग्गनि जुग्ग निवास ॥
अप मत्ति सरसें सबल। मनि करों कवि हास ॥ ८ ॥

॥ गाहा ॥

पय सक्करी सुभत्तो। एकत्तो कनय राय भोयंसी ॥
कर कंसी गुज्जरीय। रब्बरियं नेय जीवंति ॥ ९ ॥

सत्त खनै आवासं। महिलानं मद सद नूपरया ॥
सतफल बज्जुन पयसा। पव्वरियं नैव चालंति ॥१०॥
रब्बरियं रस मंदं। क्यूं पुज्जति साध असियेन ॥
उकति जुकत्तिय ग्रंथं। नथि कत्थ कवि कत्थिय तेन ॥११॥
याते वसंत मासे। कोकिल भंकार अंब बन करयं ॥
वर बब्बूर निरष्पं। कपोतयं नैव कलयंति ॥१२॥
सहसं किरन सुभाउ। उगि आदित्य गमय अंधरं ॥
अग्ग्यं उमा न सारो। भोडलयं नैव झलकंति ॥१३॥
कज्जल महि कस्तूरी। रानी रेहंत नयन श्रंगारं ॥
कां मसि घसि कुंमारी। किं नयने नैव अंजंति ॥१४॥
ईस सीस असमानं। सुरसुरी सलिल तिष्ट नित्यानं ॥
पुनि गलती पूजारा। गडुंवा नैव ढालंति ॥१५॥

॥ दूहा ॥

कहां लगि लघुता बरनवों। कविन दास कवि चंद ॥
उन कहि तें जो उब्बरी। सो वकहों करि छंद ॥१६॥
सरस काव्य रचना रचौं। खल जन सुनि न हसंत ॥
जैसे सिंधुर देखि मग। स्वान सुभाव भुसंत ॥१७॥
तौ पनि सुजन निमित्त गुन। रचिये तन मन फूल ॥
जूका भय जिय जानिकैं। क्यों डारियै दुकूल ॥१८॥

॥ साटक ॥

मुक्ताहार विहार सार सुबुधा, अब्धा वुधा गोपिनी ॥
सेतं चौर सरीर नीर गहिरा, गौरी गिरा जोगनी ॥
वीना पानि सुवानि जानि दधिजा, हंसा रसा आसिनी ॥
लंबोजा चिहुरार भार जघना, विघ्ना घना नासिनी ॥१९॥
छत्रंजा मद गंध राग रुचयं, अलिभूराछादिता ॥
गुंजा हार अथार सार गुनजा, झंझा पया भासिता ॥
अग्रेजा श्रुति कुंडलं ऽकार करस्तुदीर उदारयं ॥
सोयं पातु गनेस सेस सफलं, पृथ्राज काव्यं कृतं ॥२०॥

॥ गाहा ॥

आसा महीव कव्वी। नव नव कित्तीय संग्रहं ग्रंथं ॥
सागर सरिस तरंगी। वोहथ्थयं उक्तियं चलयं ॥२१॥

॥ दूहा ॥

काव्य समुद्र कवि चंद कृत । मुगति समप्पन ग्यान ॥
राजनीति बोहिथ सुफल । पार उतारन यान ॥ २२ ॥
छंद प्रबंध कवित्त जति । साटक गाह दुहथ्थ ॥
लहु गुर मंडित खंडियहि । पिंगल अमर भरथ्थ ॥ २३ ॥

॥ कवित्त ॥

अति ढंक्यौ न उघार । सलिल जिमि सिष्पि सिवालह ॥
बरन बरन सोभंत । हार चतुरंग विसालह ॥
विमल अमल बानी विसाल । बानी बर ब्रंनन ॥
उक्तिन चयन विनोद । मोद श्रोतन मन हरनन ॥
युत अयुत जुक्ति विचार विधि । बयन छंद छुट्यौ न कह ॥
घटि बढ्ढि मति कोई पढइ । तौ चंद दोस दिज्जो न वह ॥ २४ ॥

॥ श्लोक ॥

उक्ति धर्म विशालस्य । राजनीति नवं रसं ॥
षट् भाषा पुराणं च । कुरानं कथितं मया ॥ २५ ॥

॥ कवित्त ॥

चरन नाम अच्छिर सुरंग । लहु गुरु विधि मंडिय ॥
सुर विकास जारी सु सुष्प । उक्ति रस गौरव नि छंडिय ॥
जुगति छोह विस्तरिय । सोढियन घाट सु बढिय ॥
महि मंडन मेधान । याहि मंडन जस सहिय ॥
घन तर्क उतर्क वितर्क जति । चित्र रंग करि अनुसरिय ॥
विश्वकर्म कवि निर्मइय । रत्तिय सरस उच्चरिय ॥ २६ ॥

॥ अरिल्ल ॥

तर्क वितर्क उतर्क सु जत्तिय । राजसभा सुभ भासन भत्तिय ॥
करि आदर सादर बुध चाहौं । पटि करि गुन रासौ निर्वाहौं ॥ २७ ॥
धर्म्म अधर्म्म न बुद्धि विचारौं । नयन नारि निय नेह निहारौं ॥
कोक कला कल केलि प्रकासौं । अरथ करौं गुन रासौ भासौं ॥ २८ ॥
पारासर जौ पुन विलासह । सनवंनी अम्भं गुर भासह ॥
प्रत्र अठार सता लर लर्गौ । तौ भारथ गुर सत्त विमर्षै ॥ २९ ॥

॥ कवित्त ॥

रासौ वर बुद्धि सिद्धि। सुद्धि सो सव्व प्रमानिय ॥
राजनीति पाइयै। ग्यान पाइयै सु जानिय ॥
उकति जुगति पाइयै। अरथ घटि वढि उन मानिय ॥
या समान गुन आप। देव नर नाग बखानिय ॥
भविछत भूत अतह गुनित। गुन त्रिकाल सरसइय ॥
जो पढय तत्त रासौ सुगुर। कुमति मति नहिं दरसइय ॥ ३० ॥

॥ दूहा ॥

कुमति मति दरसत तिहिं। विधि विना न अव्वान ॥
तिहिं रासौ जु पवित्र गुन। सरसौ अन्न रसान ॥ ३१ ॥

॥ दूहा ॥

सत सहस नष सिष सरस। सकल आदि मुनि दिष्य ॥
घट वढ मत कोऊ पढौ। मोहि दूसन न वसिष्य ॥ ३२ ॥

॥ गाहा ॥

अरथं ढंकिन सहसा। उघारै वनथ्थि एकलया ॥
मझ्झं मझ्झ प्रमानं। चतुर स्त्री हारयं जेमं ॥ ३३ ॥

॥ दूहा ॥

अनग पाल पुत्री उभय। इक दीनी विजपाल ॥
इक दीनी सासेस कौं। बीज वचन कलि काल ॥ ३४ ॥
एक नाम सुर सुंदरी। अनि अर कमला नाम ॥
दरसन सुर नर दुल्लही। मनों सु कलिका काम ॥ ३५ ॥

॥ कवित्त ॥

ज दिन व्याहि सोमेस। त दिन असरन मन उद्दित ॥
त दिन वीर वेताल। काल कलहागम कुद्दित ॥
त दिन अवनि उमहीय। पुत्र इहि भार उतारै ॥
छत्र तेज छित छज्जि। देव दानव पुंतारे ॥
ता दिन सु सार सज्या समह। भ्रम अंतर कायर कपे ॥
मानिक राह अनगेस घर। पानि ग्रहन ज दिन थपे ॥ ३६ ॥

॥ कवित्त ॥

कितिक दिवस अंतरह । रहिय आधान रानि उर ॥
दिन दिन कला बढ़ंत । मेघ ज्यों बढ़त सद्द धुर ॥
चन्द्र कला सित पष्य । जेम बाढ़ंत दिनं दिन ॥
मुगधा जोवन चढ़त । मिलन भरतार पिनंपिन ॥
उदिन अधान सुभ गाननह । जेम जलधि पुन्निम बढ़हि ॥
हुल्लसंत हीय जे प्रीय त्रिय । जिम सु जोति जनिता चढ़हि ॥ ३७ ॥

॥ दूहा ॥

सोमेसर तोअर घरनि । अनगपाल पुत्रीय ॥
तिन सु पिथ्थ गर्भ धरिय । दानव कुल छत्रीय ॥ ३८ ॥

॥ कवित्त ॥

प्रथम पुत्र सोमेस । गंधपुर दुढा गढ़्ढिय ॥
भई सुद्धि गंध्रवन । पुहप मंगल दुज पढ़्ढिय ॥
अद्ध रैनि अनु जानि । लियौ बालुक सिर खिढ्ढिय ॥
गयन बयन घन सद्द । युद्ध जीवन जय दिढ्ढिय ॥
सित सुभट सूर छह सथ्थ चलि । चंद भट्ट कीरति करन ॥
संजोगि जोति तप गपि सत । बरष तीस दस्सह बरन ॥ ३९ ॥

। कवित्त ॥

बल तापस तप तपिय । श्राप बीसल सिर धारिय ॥
बरष असी तीन सै । गुहा ढिल्ली ढिग तारिय ॥
तिन अंतर रजनीय । पुरनि गंध्रव पग धारिय ॥
अवतार लियौ प्रिथिराज पहु । ता दिन दान अनंत दिय ॥
कनवज्ज देस गज्जन पट्टन । किलकिल्लंत कानंकनिय ॥ ४० ॥

॥ कवित्त ॥

त दिन जनम प्रिथिराज । परिग बज्जह कनवज्जह ॥
त दिन जनम प्रिथिराज । त दिन गज्जन पुर भज्जह ॥
त दिन जनम प्रिथिराज । त दिन पट्टन वै सल्लिय ॥
त दिन जनम प्रिथिराज । त दिन सन कालन पल्लिय ॥
त दिन जनम प्रिथिराज सौं । ता दिन भार धर उत्तरिय ॥
दससीस गंम अंसन ताम । सौ जुगे जुग उत्तरिय ॥ ४१ ॥

॥ कवित्त ॥

पुहवै अनग नरेस । व्यास जग जोत बुलाइय ॥
लगन लिद्धि अनुजा सुत । नाम चिहु चक्क चलाइय ॥
पुप्फ पानि धरि धूप । पिथ्थ पाहन दो अंसह ॥
कलि अवतार कुनाह । अंसपति पारन कंसह ॥
बहु जुद्ध रुद्ध कलि जुग्ग वर । भित्त सित्त दैतन भिरन ॥
कवि चंद दिली थह कारने । इह अपुब्ब अवतार लिन ॥ ४२ ॥
पुत्री पुत्र उछाह । दान मानह धन दिद्धिय ॥
धाम धाम गावत धमारि । मनहु अहि मनि लिद्धिय ॥
कनवज जैचंद मात । भयौ संभरि वहनी सुत ॥
तिन पर्वत दुज पठिय । थार जर चीर थपिय थुत ॥
पहिराइ परीवह दान दुज । किय समाप सव्वन विवरि ॥
दस दिवस रष्पि अप्पन अवर । अति उछाह आनंद करि ॥ ४३ ॥

॥ दूहा ॥

सुनि सोमेस वधाइ दिय । है गै चार गुराव ॥
अति उछाह अनंद भरि । न्रप मुप चढ्ढिय आव ॥ ४४ ॥

॥ दूहा ॥

तब बुलाय सोमेस वर । लौहानी अरु चंद ॥
लै आवहुँ अजमेर धर । पहौंते घरह सु इंद ॥ ४५ ॥

॥ दूहा ॥

करि आनौ उछ्छाह किय । चलिय राज अजमेर ॥
सहस बाजि है सुभर वर । सत्त सपी मनि मेर ॥ ४६ ॥

॥ कवित्त ॥

वरप वधै बिय वाल । पिथ्थ वद्धै इक मासह ॥
घरी दीह पल पप्प । मास लप्पय न्रप तासह ॥
मनिगन कंठला कंठ । मद्धि केहरि नप सोहत ॥
घूघरवारे चिहुर । रुचिर वानी मन मोहत ॥ ४७ ॥
केसर सु मंडि सुभ भाल छवि । दसन जोति हीरा हरत ॥
नह तलप इक्क थह पिन रहत । हुलसि उठि उठि गिरत ॥ ४८ ॥

॥ दूहा ॥

रज रंजित अंजित नयन। घूंटन डोलत भूमि ॥
लेत बलैया मात लषि। भरि कपोल मुष चूमि ॥ ४९ ॥

॥ पद्धरी ॥

अंगुरिन लग्गि रगि चलत लाल। सर मद्धि उठन गज हंस बाल ॥
मिलि बाल जाल कवि रही केलि। बढि रही दूंद जनु बीज बेलि ॥ ५० ॥
जनु रमत कमल आत कमल अग्ग। तप तेज बढ्ढि मुष पित्र नग्ग ॥
सब देव तेज देषंत अंग। उच्छार अंग अद्भुत प्रसंग ॥ ५१ ॥
सँग बाल बैठि भोजन्न करंत। परिवार वस्तु लै हठ धरंत ॥
आदर अदव्व सथ्थान देत। बगसीस करन पिय परम हेत ॥ ५२ ॥
है हथ्थि चढत वढ्ढत आनंद। मन मौज चौज कवि पढत छंद ॥
जिन हृदय कमल बिचाह हेत। छल छेद भेद तिन बुद्धि लेत ॥ ५३ ॥
पाइक संग कायक्क केलि। धरि धूप हथ्थ बाँहंत मेलि ॥
गहि ब्रग्ग हथ्थ फेरत तुरंत। नट न्रत्य निपुन धावन्न कुरंग ॥ ५४ ॥
जल केलि करत मिलि सजन संग। अल्लोल कलभ जनु सरति रंग ॥
पकवांन पांन सूगंध पूर। मादक्क सुमोद सुप सुपन्न नूर ॥ ५५ ॥
पेलत अपेट संग श्वानडोर। बग्गु बधंत पर गोस कोर ॥
सुप घरिय पहर दिन पष्य मास। सोमेस सूर चित बढत आस ॥ ५६ ॥
जिम राम कृष्ण सुख नंद गेह। संभरिय राव तिम दसा देह ॥ ५७ ॥

॥ कवित्त ॥

कै दसरथ ग्रह राम। कै धाम वसुदेव कृष्ण वर ॥
कै कलि कस्यप कूप। जानि उपज्यौ किरनाकर ॥
कृष्ण ग्रेह कै काम। कै काम अंगज जनु अनुरध ॥
कै नल कस्यप अवतार। किधौं कौमार इश्व रुध ॥
लषिन बतिस बहुतरि कला। बाल वेस पूरन सगुन ॥
क्रीडत गिलोल जब लाल कर। तब मार जानि चाँपक सुमन ॥५८॥

॥ दूहा ॥

छुटत गिलोला हथ्थ तें। पारत चोट पयल्ल ॥
कमल नयन जनु कामिनी। करत कटाछ्छ छयल्ल ॥५९॥

॥ दूहा ॥

कोइक दिन गुर राम पैं। पढ़ी सु बिद्या अप्प ॥
चवदसु बिद्या चतुर वर। लई सीप पट लिप्प ॥६०॥

॥ पद्धरी ॥

लिषि सिष्य कुंअर प्रिथिराज राज। गुरु द्रोन पास सुत ध्रम्म ताज ॥
ॐ० नमो सिद्धि प्रथमं पढाय। सव भाव भेद अष्पर वताय ॥६१॥
दस पंच दिन्न अध्येंन कीन। दस च्यारि सार सब सपि लीन ॥
सीपी सु कला दस अठ्ठ च्यारि। तिन नाम कहत कवि अग्ग सारि ॥६२॥
गुरु गीत वाद बाजित्र नृत्य। सोचक सु वाच्य सविचार वृत्य ॥
मनि मंत्र जंत्र वास्तुक विनोद। नैपथ विलास सुनि तत्त मोद ॥
साकुन्न कला क्रीडन विसार। चित्रन सु जोग कवि चत्रत चारु ॥
कुसुमेप कला जुत इन्द्र जाल। सुचि क्रम विहार आहार लाल ॥६४॥
सौभग प्रयोग सूगंध वस्त। पुनरोक्त छंद वेदोक्त हस्त ॥
वानिज्ज विनय भापित्त देस। आवद्ध जुद्ध निर्जुद्ध सेस ॥६५॥
बरनंत समय हस्ती तुरंग। नारी पुरुष्य पंपी विचंग ॥
भू भू कटाछ सुल्लेप सत्य। वृप छद्य प्रष्ण उत्तर विजत्य ॥६६॥
सुभ सास्त्र कहे गनिकह पढन्न। लिषतव्य चित्र कविता वचन्न ॥
व्याकन्न कथा नाटक्क छंद। अविधांन दरश अलंकार वंध ॥६७॥
घातक सु कर्म सुभ अर्थ जानि। सुर सरी कला वहुतरि वपान ॥६८॥

॥ दूहा ॥

पाघ विराजत सीस पर। जरकस जोति निहाय ॥
मनों मेर के सिपर पर। रह्यौ अहप्पति आय ॥६९॥
ता पर तुररा सुभत अति। कहत सोम कवि नाथ ॥
मनु सूरज के सीस पर। धिपन धर्‍यौ धनु हाथ ॥७०॥
श्रवन विराजत स्वाति सुत। करत न वनै वपान ॥
मनु कमल पत्र अग्रज रहै। ओस उडगान आन ॥७१॥
कंठ माल मोतीन की। सोभत सोभ विसाल ॥
मेरु सिपर पारस फिरत। जानि नछित्रन माल ॥७२॥
मिस भींने सु मयंक मुप। निपट विराजत नूर ॥
मनौं बीर उर काम के। उगे आनि अंकूर ॥७३॥

॥ गाथा ॥

समयं इक निसि चंदं । वाम वत्त वदि रस पाई ॥
दिल्ली ईस गुनेयं । कित्ती कहो आदि अंताई ॥७४॥

॥ दूहा ॥

कह्यौ भांमि सों कंत इस । जो पूछै तत मोहि
कान धरौ रसना सरस । त्रत्ति दिपाऊं तोहि ॥७५॥

॥ दूहा ॥

सुकी कहै सुक संभरौ, कही कथा प्रति प्रान ।
पृथु भीरा भीमंग पहु, किम हुअ वैर विनान ॥ ७६ ॥

॥ कवित्त ॥

कुंअरप्पन प्रथिराज । तपै तेजह सु महावर ॥
सुकल वीजु दिन हुतें । कला दिन चढत कलाकार ॥
मकर आदि संक्रमन । किरन वाढैं किरनाकार ॥
यों सोमेस कुँआर । जोति छिन छिन अति आगर ॥
हय हत्थि देत सकै न मन । पल पंडन गढ गिरन वर ॥
चिहु ओर जोर दसहूं दिसा । कीरति विस्तरि महिय पर ॥ ७७ ॥

॥ कवित्त ॥

भोरा भीम भुअंग । तपै गुज्जर धर आगर ॥
है गै दल पायक्क । पग्गबल तेजह सागर ॥
काका सारंगदेव । देव जिम ताम वड़ाइय ॥
तासु पुत्र परताप । सिंघ सम सत्त सु भाइय ॥
परतापसीह अरसीह बर । गोकुलदास गोविंद रज ॥
हरसिंघ स्याम भगवान भर । कुल अरेह सुप नीर सज ॥ ७८ ॥

॥ दूहा ॥

जोरावर जुरि जङ्गमति; भरे बथ्थ नभ गाज ॥
हुकम स्वामि छुट्टत सु इम, मनौं तितर पर बाज ॥ ७९ ॥
तिन पर तुट्टै बीज जौं, जिन पर राज अरुट्ठ ॥
राजकाज संमुह भरन, दई न कबहू पुट्ठ ॥ ८० ॥

॥ दूहा ॥

सारंग दे सुरलोक गत, भौ प्रतापसी पाट ॥
सात भ्रात सेवा करैं, तपै तेज थिर थाट ॥ ८१ ॥

॥ दूहा ॥

भोरा भीम भुआल के, कोई एक मैवास ॥
तिन उज्जारत देस कौं, परि पुकार नृप पास ॥ ८२ ॥

॥ गाथा ॥

प्रात समै पूकारं, आई नरिंदं भीम दरबारं ॥
करि नीसान सुधावं, चढि राजं साजि आतुरयं ॥ ८३ ॥

॥ दूहा ॥

चालुक्कह गुज्जर धरा, ईस नेति किय भीम ॥
सो उम्मैं तिहु पुर सुवर, को चंपै अरि सीम ॥ ८४ ॥

॥ छंद पद्धरी ॥

चढ़ि चलन राज आवाज कीन। नीसान नद्द बज्जे वजीन ॥
चिहु ओर भरनि छुट्टे तुरंग। सजि सिलह भाँति नाना अभंग ॥८५ ॥
धम धमकि धरनि धाने सुभंग। गज्जिय अकास कै गहर गंग ॥
भय हूह हाक आतंक जोर। सह सुरन फेरि भेरीन घोर ॥८६॥
उडि रेन सेन मुंदिग अकास। परि रोर सोर जहँ तहँ मवास ॥
धरि रोस मुच्छ मुररंत भीम। रस वीर वक्र संक्रोध हीम ॥८७॥
चंपी सु सीम अरियन सुजाम। डेरा सुदीन नृप सरिन ताम ॥
जुररा सिकार तीतर बटेर। पेलंत सरित तट भइ अवेर ॥८८॥
इहि समय ताम परतापसीह। लहु बंधु साथ अरसी अबीह ॥
ए हुते सकल बाहुर ते वेर। नय मभ्भ आइ पेलन अवेर ॥८९॥
गजराज नाम साहन सिंगार। सरितान मभ्भ वह पियै वार ॥
सुनि सोर दान छुट्टे हुँकार। जनु भूत भंति भय भीत भार ॥९०॥
जमुना कि जग्गि काली करार। सिर धूंनि महावत दियौ डार ॥
गज एक वारि पीवंत दूरि। तिन पर सु तुट्टि जनु सिंघ चूरि ॥९१॥
धरि पंप पक्ख जनु धप्पि धाय। भुज पर्यौ नम्म वदर सुमाय ॥
दिषि दुरद उनहि आवंत आन। धुनि करि सु डारि उन पीलवान ॥९२॥

धायौ ति समुह साहन सिंगार । जनु बंध जंम उप्पर अपार ॥
कज्जपंत पाइ जनु पवन आइ । हल हले पव्व जित तित त्रिठाइ ॥९३॥
जम रूप दूअ जनु जंम द्वार । द्रय भ्रात बीच घेरे असार ॥
इक ओर वारि द्रह गहर गूल । इक जोर जोर वर उंच कूल ॥९४॥
परताप सनंमुप पर्‍यौ जाइ । डारंत अश्त्र असि कियौ घाइ ॥
बहि सीस परन दो हथ करार । परवूज जांनि विफर्‍यौ विफार ॥९५॥
जगनाथ हंडि जनु वंटि दोइ । इह भंति कुंभ कुंभी न होइ ॥
गज पर्‍यौ धरनि साहन सिंगार । किन्नो अकाम परताप पार ॥९६॥
अरसीह पुट्ठ जग धर्‍यौ देप । सनमुप्प क्रम्यौ सम सीह भेप ॥
गज गही दौरि सिर पग्ग सुंड । दिय गुरज चीर द्रय हथ्थि मुंड ॥९७॥
फर्‍यौति सीस भइ पंच फारि । गज ढर्‍यौ जानि गिरवर त्रिसार ॥
सुनि बत्त राज भोरा सु भीम । पायौ अनंत दुप आप हीम ॥९८॥
कह वाव कियौ नृप अप्प साम । तुम सो न हमहि चाकरह काम ॥९९॥

॥ दूहा ॥

भा उभय अहंकार करि, हन्यौ सुबर गजराज ॥
दोस हमहि लग्यौ नहीं, आप हि कीन अकाज ॥१००॥

॥ दूहा ॥

सात भ्रात निज बात सुनि, भए अप्प चलचित्त ॥
पृथीराज सुनि कुंअर ने, आप बुलाये हित्त ॥१०१॥
दिये हथ्थ लिपि गाम पट, रहे वास थिर आनि ॥
चालुक चातुर वीर वर, जिन उंपत मुप पानि ॥१०२॥

॥ सोरठी दूहा ॥

सभ इक सोम कुमार, सम सामंतन सूर सम ॥
सोभ सीस भुअ भार, सो बैठे सुभ सभा रचि ॥१०३॥

॥ छंद मोतीदाम ॥

रची सुभ सोम सभा पृथिराज । विराजित मेरु जिसे भर साज ॥
भुजा सम कन्ह रजे चहुवान । तिनैं मुछ राजत है मुह पान ॥१०४॥
जिनैं चष चाहि कंपै भर मांन । कंपे जनु मोरन अप्प विवांन ॥
रहै चप वारि सुरातन एम । जवा अन प्रात कियो सक जेम ॥१०५॥

तहां वर चांवंड राइ रजंत। जुधं मधि चांवंड रूप सजंत ॥
नृसिंघ विराजत सिंघ जिसौह। विभीषन भा कयमास जिसौह ॥१०६।
सबै भर ओर उतथ्थ सुभंत। तिनं मधि पीथ कुंआर रजंत ॥
मनौं सुकलं पप बीज कौ चंद। तिया रस राजत तारन वृंद ॥१०७॥
प्रतापसि सातउ भ्रात सरीस। प्रथी पति आइ नमाइअ सीस ॥
ति सोइत मानुस तं सत मेर। किधौं सत सिंधु सुहंत उजेर ॥१०८॥
सनंमुप कन्ह प्रतापसि आइ। टई तिन वैठक साल सुभाइ ॥
कहै भर भारथ वत्त स वांन। धर्यौ परतापसि मुच्छन पांन ॥१०९॥
लषी चहुआंन सु कंन्ह अपंन। कढी असि तत्र असंप भपंन ॥
दई असि दौरि जनेउ उतारि। इही धर अद्ध उपंम विचारि ॥११०॥
मनों सत्र नागर साबु कटंत। इही जनु गंठि बिचैं त्रिच तंत ॥
पर्यौ परताप प्रथी पर आप। भई भर मध्य सुजोर अमाप ॥१११॥

॥ दूहा ॥

भई हूह मभमह महल, पर्यौ भुंमि परताप ॥
हाक वीर वज्जे विषम, अरसी कुप्पौ आप ॥११२॥

॥ कवित्त ॥

भई हूह परताप। पर्यौ दिष्यौ अरसी वर ॥
उठ्यौ कढ्ढि तरवारि। दई भुज कन्ह वाम कर ॥
इक्क सीह वर ओर। गैर पष्पर गहि डारी ॥
एक अगनिता मद्धि। आनि कंपी घृत धारी ॥
चहुआन कन्ह अग्गै सुवर। ता पच्छै लोहनदग्यौ ॥
गाजुलित सत्त वर वीर मति। वीर वीर रस सौं छग्यौ ॥११३॥

॥ दूहा ॥

उट्ठि कुंवर पृथिराज लषि, गयौ महल निज मद्धि ॥
दै किवाट मिलि थाट जुध, मच्यौ कलह सभ मद्धि ॥११४॥

॥ गाहा ॥

कढ्ढी असि अरसिंघं। नरसिंघस्य स्फारयं सीसं ॥
दई गुरज गुर अड्डं। वड गुज्जरं रंभ क़ंद्राइं ॥११५॥

॥ चालि ॥

दिपि चावंडं। पिजि चावंडं ॥
लोह चावंडं॥ मन चावंडं॥ चावंडं ॥११६॥

॥ कवित्त ॥

बढिय जंग उत्तंग । जंग जनु दाह जुलग्गिय ॥
परिय रौर गात्र रन । जुरिय जुध कन्ह अभिग्गिय ॥
मारि डारि अरिसीह । हक्यौ गोयंद मेह गति ॥
कढ्ढि हथ्थ जम दढ्ढ । दर्इ चहुआंन कूप घत ॥
करि रोस कन्ह कर चंपि सिर । दो हथ्थन भेजी उडिय ॥
निकसीय प्रान गोविंद उर । जोति भेदि जोतिह मिलिय ॥११७॥

॥ दूहा ॥

कोलाहल दरबार भौ । सुनि चालुक भ्रत सथ्थ ॥
धसिय पौरि गज मत्त सम । पुच्छत-पुच्छत ,कथ्थ ॥११८॥
छिछ रुधिर उछ्रत गिरिय । परिय सत्र परिधारि ॥
दिपि चालुक भ्रत नेह टग । कुलह बाजि जनु डारि ॥११९॥

॥ कवित्त ॥

संकर सिव कि छुट्टि । छुट्टि इन्द्रह कि गरुअ गज ॥
कि महिप छुट्टि मय मत्त । भरिय दीयौ कि दुष्ट कजि ॥
भौ कि हास रस रोस । मढ्ढि रावत्त विरच्चिय ॥
कोलाहल वल कूक । मज्झ रावर हल मच्चिय ॥
चालुक पवास ताकथ्थ कथि । कोलाहल इन जानि घर ॥
छंडिय सयल बोहिथ नृपति । हनिग कन्ह सारंगहर ॥१२०॥

॥ दूहा ॥

भर प्रताप दरबार के । द्वार परे मत मत्त ॥
सुनत बत्त इह कहि परे । मनु निस तुट्टि नछत्त ॥१२१॥

॥ करषा ॥

सार सिर मार विकरार रत्तन झरत ॥
परत धरनीय ढरैं जरकि जूपी ॥
चक्का चहुवांन चालुल्क भृत उपर चर ॥
कोपियं कंन्ह मनौं काल रूपी ॥१२२॥
रुंड भकरुंड किय तुंड मुंडन रुरत ॥
वाहि सिर सार मनौं मेह वुढ्ढै ॥

कूह करि जूह संमूह को कोक हर ॥
रोस रिम राह जुम जीव छुट्टै ॥१२३॥
पांनि करि पांनि अरि पांनि करनीय हक ॥
सीस अरी पारि सब पेत सीच्यौ ॥
भ्रात सोमेस नृघ्घात भंजन भरम ॥
पेत पयकार पय काल पीज्यौ ॥१२४॥

॥ श्लोक ॥

हनिनं निनायकं सेना, कथितं न च पूर्वयम् ॥
अयुद्धं चक्रतं एषां, विना स्वामि रणे युधम् ॥१२५॥

॥ दूहा ।

नीठ विसासत अप्प भर, गह्यो कन्ह चहुआंन ॥
गए ग्रेह लै सकल मिलि, पृथीराज अकुलान ॥१२६॥
पारि भ्रित्त चालुक्क भर, मध अजमेर प्रमान ॥
सात भ्रात भीमह हते, रन जीत्यौ भर कांन ॥१२७॥
वत्त सुनी तब कन्ह नें, पिज्यौ कुंअर प्रथिराज ॥
वैठि रहे तब निज सुघर, ऐदरबार समाज ॥१२८॥
तीन दिवस अजमेर में, परी हट्ट हटनार ॥
हूह कोह वज्यौ विषम, लग्यौ सु भूत भुआर ॥१२९॥
मधि बजार चलि रुधिर नदि, रुरत तुंड धन मुंड ॥
वरकि कन्ह चहुआंन करि, तिल तिल सम तन तुंड ॥१३०॥

॥ कवित्त ॥

साल दिवस जब गए। कन्ह दरबार न आए ॥
तब पृथिराज कुंआर। अप्प मनए ग्रह जाए ॥
तुम ऐसी क्यौं करौ। अप्प सिर चढिय सुकाई ॥
कहिहैं सब चहुआंन। हने चाल्लुक सुराई ॥
आएति विविं अप्पन सुघर। सो रावर ऐसी करिय ॥
इह दोस अप्प लग्यौ खरौ। वत्त वित्तरिय जग वुरिय ॥१३१॥

॥ दूहा ॥

कही कन्ह चहुआंन तब। मो वैठें कोइ आनि ॥
सभा मद्धि संभरि अवर। मुन्छ धरै क्यौं पानि ॥१३२॥

करी अरज प्रथिराज वर । जो मानौ इक कन्ह ॥
सभा बुराई जौ मिटै । चप बांधि पट्ट रतंन ॥१३३॥
तब प्रथिराज विचार करि । चप आर्यौ हो पट्ट ॥
बहुरि कोई भर भोरही । धरत परै इह बट्ट ॥१३४॥
मनी बत्त सुसत्य मन । लै जराव को पट्ट ॥
राजन कन्ह चप बंधही । मनौं सिरी गज घट्ट ॥१३५॥

॥ कवित्त ॥

पाव लष्प परिमान । मोल किंमति ठहराइय ॥
तौल टंक इकईस । नयन आकार सवारिय ॥
जरिय जवाहर मद्धि । अरक उद्योत प्रकासिय ॥
दिष्टि मंडि देपत । दुअन उर अंदर त्रासिय ॥
कंचन किलाव लगाय कल । पट्टी बंधिय चंद भट ॥
तिहिं वेर कन्ह अहुआंन चप । रूप प्रगटि अति पित्रि वट ॥१३६॥

॥ दूहा ॥

पाटी बंधिय कन्ह चष । इह ओपम करि अप्पि ॥
तन सरवर जल बीर रस । ओटा बंधि सुरष्षि ॥१३७॥

॥दूहा॥

सो पट्टी निस दिन रहै । छोरि देइ द्वै ठाम ॥
कै सिज्या वामा रमत । कै छुट्टत संग्राम ॥१३८॥

॥ दूहा ॥

अति दुख मन्यौ भीम हिय । लिखि कग्गद चहुआंन ॥
सत्त भ्रात मेरे हते । इहै वैर अप्पांन ॥१३९॥
सुनिय राज चहुआंन वर । दिय कग्गद फिरि तेह ॥
जब तुम मंगौ बैर वर । तब हम वैर सुदेंह ॥१४०॥

कवित्त

वँचि कग्गद चालुक । रोस लग्यौ अयान कह ॥
करो सेन सब एक । चलो अजमेर देस रह ॥
तब कह्यौ वीर परधान । मास पावस्स रहें घर ॥
करि कातिप वन कटक । हनैं चहुआंन सोम वर ॥
सुनि राज अप्प मन्यौं सुहिय । भ्रत्तरु सब जन अवर नर ॥
उपसम्म रोस चालुक्क नृप । पिन पिन वित्तय जेम थिर ॥१४१॥

॥ दूहा ॥

रहै राज अजमेर महि । संभरेस चहुआंन ॥
निसि दिन यौं क्रीला करै । ज्यौं अवतार सुकान्ह ॥१४२॥

॥ दूहा ॥

संभरि वै चहुआंन कै, अरु गज्जन वै साह ॥
कहौं आदि किम वैर हुअ, अति उतकंठ कथाह ॥१४३॥

॥ कवित्त ॥

बंधव साहि सहाव । मीर हुस्सेन बान धर ॥
निज्ज वान सु प्रमान । वान नीसान वधै सुर ॥
गान तान सुज्जान । बाहु अज्जान वान वर ॥
भेव राज परवान । उच्च जस थान जुभक भर ॥
उद्दार चित्त दातार अति । तेग एक वंदै विसव ॥
संकेत साहि साहाव तिन । तेज अजै जयमंत भव ॥१४४॥

॥ कवित्त ॥

इष्पि वधु आचार । मीर उमराव जंपि जस ॥
एक पात्र साहाव । चित्ररेषा सु नाम तस ॥
रूप रंग रति अंग । गान परमान विचष्पन ॥
वीन जान वाजान । आनि वत्तीसह लच्छन ॥
दस पंच वरप वाचा सुवच । सुप्रसाद साहाव अति ॥
आसिक्क तास हुस्सेन हुअ । प्रीति परसपर प्रान गति ॥१४५॥

॥ कवित्त ॥

एक सुदिन सुविहांन । साह हुस्सेन सुवुल्लिग ॥
वे काफर आतस्स उतँग । दह दिसि नह डुल्लिग ॥
पैसंगी पासंग । लप्प लप्पां नलवाही ॥
सांई सौं संग्राम । हक्कि हैवर गुरदाही ॥
गर्दन गुराव महि महि मपां । पां पवास अप्पिय घरह ॥
अन हल्ल नाल लब्भय रवन । करौं तुच्छ तुभ्मी वरह ॥१४६॥

॥ दूहा ॥

सुनिअ बैन साहाब तब । प्रीत न छंडी बाम ॥
कोपि कह्यो सुरतान तव । हनौं कि छंडौ ग्रांम ॥१४७॥

॥ कवित्त ॥

सुनिय वत्त हुस्सेन । सेन अप्पन साधारिय ॥
छंडि नयर निस्संक । संक मन साह नसारिय ॥
निसा जाम इक आदि । लई सो पात्र परम गुन ॥
तरुनि पुत्र परिवार । सज्जि सब साज सु अप्पन ॥
परिगह सु अप्प अग्गैं करिय । षांन पांन बंधी सिलह ॥
संचर्‌यौ नैर नागौर इह । तजिय देस निज गंठ ग्रह ॥१४८॥

॥ दूहा ॥

लै परिगह हुस्सेन गय । दिसि प्रथिराज नरिंद ॥
संभरि वै संभारि कैं । मनु आयौ ग्रहदंद ॥१४९॥

॥ दूहा ॥

भोजन भप्पे विविध वर, बहु आदर विधि कीन ॥
मान महातम रष्पि रज, राज उभय हय दीन ॥१५०॥

॥ कवित्त ॥

आपेटक चहुआंन । पास हुस्सेन संपत्तौ ॥
वार आइ चहुआंन । भाइ घन ताहि दिपत्तौ ॥
नीति राव कुटवाल । तास ग्रह राज सु अप्पिय ॥
वर कैथल हांसि हिंसार । राजपट्टौ दै थप्पिय ॥
इह चरित देपि सब दूत तब । जाइ संपते साहि दर ॥
चरवर चरित जुग्गिनी पुरह । कहिय बत्त सें सुप्पंधर ॥१५१॥

॥ छंद पद्धरी ॥

संभरिय वत्त साहाबदीन । उच्चरिय वैन अति कोप कीन ॥
मुक्कलौं इत चहुआन पास । कढ्ढौ हुसैन जो जीव आस ॥१५२॥
बोलयौ पांन तातार तब्ब । संजाव पांन उमराव सब्ब ॥
पुच्छी सु वत्त किय इत सार । थप्पी सु बत्त पुरसान बार ॥१५३॥

आरब्ब सेष लीनौ बुलाइ। वैन्नद्ध ब्रद्ध बुद्धी सुताइ ॥
वंछै सुपेम सक लेहिं साहि। लज्जी अनंत आदब्ब थाहि ॥१५४॥
उच्चर्‌यौ वैन साहाब्र भास। आरब्ब जाहु चहुआंन पास ॥
अप्पै जु पात्र हुस्सेन जाम। लै आउ सम्म हुसेन ताम ॥१५५॥
मुक्कों सुगुनह कीनौ पसाव। मैं दीन पच्छ करि पिमा दाव ॥
छंडै न पात्र हुस्सेन सब्ब। चहुआंन मिलै सामंत सब्ब ॥१५६॥
जंपियौ वयन चहुआंन साइ। कढ्ढौ हुसेन नागौर थाइ ॥
अज्जीज पांव तुम सच्च उच्च। लिष्यौ सु पत्र हम परम रुच्च ॥१५७॥
कढ्ढौ हुसेन तुम देस अंत। वंछौ जो पेम मानौं सुमंत ॥
रष्या हुसेन जो असु परेस। चतुरंग सेन सज्जौं विसेस ॥१५८॥
भंजौं सुनैर नागौर देस। जीवंत वंदि वंधौं नरेस ॥
सामंत सूर सब करौं अंत। वंधौं सुवंध सा तरुनि कंत ॥
उच्चरि गुमान तन बत्त थूल। संपेप कहैं मानौं स मूल ॥
तुम जाउ सिघ्र नागौर वाम। मति करौ एक पिन वर विश्राम ॥१५९॥
सै तीन दीन असवार सथ्थ। आरुहन दीन नरयान रथ्थ ॥
संचर्‌यो सेख आरब्ब राह। दो पष्प पत्त नागौर थाह ॥१६१॥

॥ दूहा ॥

गय आरब नागौर धर। मिल्यौ साह हूसेन ॥
भोजन भष्य सुभाव किय। विवध प्रसन्निय वैंन ॥१६२॥

॥ दूहा ॥

कही बत्त हूसेन सम। जो कहि साह सहाब्र ॥
नह मंनिय सामंत हिय। दिय आरबूब जबाब ॥१६३॥

॥ दूहा ॥

गयो सेप आरब्ब दर। लही पबर प्रथिराज ॥
बोलि सम्भूफ मंडिय महल। सामंतन सब साज ॥१६४॥

॥ दूहा ॥

उठि गोरी दिन्ने वहुरि। गयौ सु अंदर साह ॥
वहुरि पांन मीरं वरा। अति चंचल तुर ताह ॥१६५॥
तपै साहि गोरी सबर। चित सालै चहुआंन ॥
वैरोचन की साप ज्यौं। कीटी भ्रंग प्रमान ॥१६६॥

॥ अरिल्ल ॥

जग्गत निसि झंपत सुरतानह। घरी सत्त रहि सेष प्रमानह ॥
जगि आयस दिय दोन निसानह। चिता साहि चढी चहुआनह ॥१६७॥

॥ छंद मोतीदाम ॥

भए सुर तीन धुनक निसान। चढ्यो अश्व सज्जि सिल्है सुरतान॥
चढ़े सब षांन सु उम्मर मीर। सजे सहनाइ बजे रस बीर ॥१६८॥
बजे सब बाज भयानक भाइ। चितैं हिय बुद्धि जिनें जन नाइ॥
चढ्यौ सब सज्जिय सेन गरिष्ट। परी दस दिग्ग सुधूधरि दिष्ट ॥१६९॥
सब्बद सिग्राँन सुसेन कपोत। सनंमुष साहि दिष्यौ दल दोत॥
भयौ दिसि बामिय कग्ग करार। रुक्यौ दिबि धोमय धूम गभार ॥१७०॥
सनंमुष देषिय जंबुक सेन। बिरोमिलि चंपहि मग्गहि तेन॥
क्रमें तस उप्पर गिद्ध असंप। चवै सुर रुद्र पसारिय पंप ॥१७१॥
गही सुरतान सु आरब बग्ग। रहौ दिन आज सगुंन न जग्ग॥
रहैं कुछु अज्ज ततार सुदिन्न। गही चढ़ि चल्लहु मन्नि सगुन्न ॥१७२॥
कहै सुरतान अहो तुम क्रूर। भयें भय म्रित्यु सु झंपहु नूर॥
कहा बल जुद्ध कहो प्रथिराज। कितौ बल सामत जुद्धिह साज ॥१७३॥
हनौं रन सूर जिके चहुआंन। गहौं जुध राज सु पंडिय प्रान॥
कहा डर काफर दाषहु सुझ्झ। कहा भर आवध आगरि जुझ्झ॥१७४॥
नमंनि चमंकि चढ्यौ सुरतान। टमंकिय गज्जिय नद्द निसान॥
जलथ्थल होय थलं जल भार। अमग्गह मग्ग चलै गहि लार ॥१७५॥
मिल्यौ इक साहन लष्प समुंद। समुझ्झिझन कंन भयो सुर मुंद॥
चल्यौ सुरतान मिलान मिलान। बढी अति चिंत दुनी चहुआंन ॥१७६॥

॥ दूहा ॥

गयौ साहि चहुआंन घर। दिए मिलान मिलान॥
गए सुचर नागौर पुर। कही पबरि सुरतान ॥१७७॥

॥ दूहा ॥

देषि चरित नृप साह चर। गए पास सुरतान॥
कहैं सेन संमुप रजै। चढि आयौ चहुआंन ॥१७८॥

॥ दूहा ॥

सुनि चरित्त साहाब चर। दिय निरघोप निशान॥
चढ्यौ सेन सज्जे सिलह। करिब फौज सुरतान ॥१७९॥

॥ छंद मोतीदाम ॥

चढ्यौ सुरतान सुसज्जिय फौज । बजे वर वज्जन वीर असोज ॥
भयं गज घुंमर घंट निघोर । मनौं झुकि कंन्न भयौ सुर रोर ॥१८०॥
गजैं गज मद्द मनौं घन भद्द । चिकार फिकार भए सुर रुद्द ॥
तुरंग महींस कडक्क लगांम । खरक्किय पष्पर तोन सुनांन ॥१८१॥
चमंकत तेज सनाह सनाह । करैं धर पद्धर राह बिराह ॥
झलक्कत टोप सुटोप उतंग । मनौं रज जाति उद्योत विहंग ॥१८२॥
दमंकत तेज कमान कमान । चितं चित मीर रही मइमान ॥
भले भर सांइय ध्रंम सगत्ति । लपैं धर जीयन जत्तिन गत्ति ॥१८३॥
नमैं निज सांइय पंच वषत्त । सिपारह तीस पढ़ै दिन रत ॥
नमैं निज सेप धरंम सरंम । क्रमैं रह रीति कुरान करंम ॥१८४॥
दिढवर वाचरु काछह मीर । तरुंनिय एक रतें वर वीर ॥
सवद्दय वेध करैं तम तांह । भमंतिय पंषि हनैं छित छांह ॥१८५॥
धरै इक एक अनेक सुवान । झलक्कत मुंड तवल्लह मान ॥
धरैं धर नाहिय स्याहिय सोस । सिरक्कहि चंवर धुंमर दीस ॥१८६॥
अनेक सुवान अनेकह रंग । चढ़े सब मीरह सेन अभंग ॥
अने सुवान अनेकय व्रंन । समुझ्झिन हीय समुझ्झिन क्रंन ॥१८७॥
पयं भर अग्ग अनेक सुभार । अनेक सुजाति अनेक सुतार ॥
सिरं किय मुंडिय मुंड सुअद्ध । जुवट्टिय उट्टिय जानि अनद्ध ॥१८८॥
करं तिय झंड्डिय रंग अनेक । फुरक्कहि झंपहि झंपह तेग ॥
चले धर वान सुसद्धिय दिठ्ठ । अगें हथ नारि अभूल गरिठ्ठ ॥१८९॥
अगें किय मद्द सरक्क सुभार । मनौं पय चल्लत पव्वत लार ॥
ढलें सिर ढाल अनेक सुरंग । फरैं फरहारि उभारिय अंग ॥१९०॥
वरंनह झंडय मंडय जूव । मनौं पट रित्ति अनंगह रूव ॥
भई पुर डंबर अंबर रेंन । जलं थल पद्धरि संक्रनि सेन ॥१९१॥

॥ अरिल्ल ॥

जगि मंत्री कैमास महा भर । गंठिय चित्त चरित्त कहिय वर ॥
जग्गिय सथ्थ सज्ज निस सेनं । गयो राज यह सज्जि द्रुगेनं ॥१९२॥

॥ दूहा ॥

चरित लष्प साहाव चर । गए पास सुरतान ॥
सजी सेन सामंत पति । आयो जोजन थान ॥१९३॥

॥ अरिल्ल ॥

जग्गत निसि झंषत सुरतानह। घरी सत्त रहि सेप प्रमानह ॥
जगि आयस दिय दोन निसानह। चिता साहि चढी चहुआनह ॥१६७॥

॥ छंद मोतीदाम ॥

भए सुर तीन धुनक निसान। चढ्यो अश्व सज्जि सिल्है सुरनान॥
चढ़े सब पांन सु उम्मर मीर। सजे सहनाइ वजे रस बीर ॥१६८॥
बजे सब बाज भयानक भाइ। चितैं हिय बुद्धि जिनें जन नाइ॥
चढ्यौ सब सज्जिय सेन गरिष्ट। परी दस दिग्ग सुधूधरि दिष्ट ॥१६९॥
सबद्द सियाँन सुसेन कपोत। सनंमुष साहि दिष्यौ दल दोत॥
भयौ दिसि आमिय कग्ग करार। रुक्यौ दिवि धोमय धूम गभार ॥१७०॥
सनंमुप देषिय जंबुक सेन। बिरो मिलि चंपहि मग्गहि तेन॥
क्रमे तस उप्पर गिद्ध असंप। चवै सुर रुद्र पसारिय पंप ॥१७१॥
गही सुरतान सु आरब वग्ग। रहौ दिन आज सगुंन न जग्ग॥
रहै कुहु अज्ज ततार सुदिन्न। गही चढ़ि चल्लहु मन्नि सगुन्न ॥१७२॥
कहै सुरतान अहो तुम क्रूर। भयें भय म्रित्यु सु झंपहु नूर॥
कहा बल जुद्ध कहौ प्रथिराज। कितौ बल सामत जुद्धिह साज ॥१७३॥
हनौं रन सूर जिके चहुआंन। गहौं जुध राज सु पंडिय प्रान॥
कहा डर काफर दापहु मुझ्झ। कहा भर आवध आगरि जुझ्झ॥१७४॥
नमंनि चमंकि चढ्यौ सुरतान। टमंकिय गज्जिय नद्द निसान॥
जलथ्थल होय थलं जल भार। अमग्गह मग्ग चलै गहि लार ॥१७५॥
मिल्यौ इक साहन लष्प समुंद। समुझ्झिन कंन भयो सुर मुंद॥
चल्यौ सुरतान मिलान मिलान। बढी अति चिंत दुनी चहुआंन ॥१७६॥

॥ दूहा ॥

गयौ साहि चहुआंन घर। दिए मिलान मिलान॥
गए सुचर नागौर पुर। कही पत्त्रि सुरतान ॥१७७॥

॥ दूहा ॥

देखि चरित नृप साह चर। गए पास सुरतान॥
कहैं सेन संमुप रजै। चढि आयौ चहुआंन ॥१७८॥

॥ दूहा ॥

सुनि चरित्त साहाब चर। दिय निरघोष निशान॥
चढ्यौ सेन सज्जे सिलह। करिव फौज सुरतान ॥१७९॥

॥ छंद मोतीदाम ॥

चल्यौ सुरतान सुसज्जिय फौज । बजे वर बज्जन वीर असोज ॥
भया गज घुंमर घंट निघोर । मनौं झुकि क्रंम भयौ सुर रोर ॥१८०॥
गजैं गज मद्द मनौं घन भद्द । चिकार फिकार भए सुर रुद्द ॥
तुरंग महींस कडक्क लगांम । खरक्किय पष्पर तोन सुतांन ॥१८१॥
चमंकत तेज सनाह सनाह । करैं धर पद्धर राह बिराह ॥
झलक्कत टोप सुटोप उतंग । मनौं रज जाति उद्योत बिहंग ॥१८२॥
दमंकत तेज कमान कमान । चितं चित मीर रही मइमान ॥
भले भर सांइय ध्रंम सगत्ति । लपैं धर जीयन जत्तिन गत्ति ॥१८३॥
नमैं निज सांइय पंच वपत्त । सिपारह तीस पढ़ैं दिन रत्त ॥
नमैं निज सेप धरंम सरंम । क्रमैं रह रीति कुरान करंम ॥१८४॥
दिढंबर वाचरु काछह मीर । तरुंनिय एक रतैं वर वीर ॥
सबद्दय वेध करैं तम तांह । भमंतिय पंषि हनैं छित छांह ॥१८५॥
धरै इक एक अनेक सुबान । झलक्कत मुंड तवल्लह मान ॥
धरैं धर नाहिय स्याहिय सीस । सिरक्कहि बंबर धुंमर दीस ॥१८६॥
अनेक सुबान अनेकह रंग । चढ़े सब मीरह सेन अभंग ॥
अने सुबान अनेकय बंन । समुझ्झिझन हीय समुझ्झिझन क्रंन ॥१८७॥
पयं भर अग्ग अनेक सुभार । अनेक सुजाति अनेक सुतार ॥
सिरं किय मुंडिय मुंड सुअद्ध । जुयट्टिय उट्टिय जानि अनद्ध ॥१८८॥
करं तिय झंड्डिय रंग अनेक । फुरक्कहि झंपहि झंपह तेग ॥
चले धर वान सुसद्धिय दिठ्ठ । अगें हथ नारि अभूल गरिठ्ठ ॥१८९॥
अगें किय मद्द सरक्क सुभार । मनौं पय चल्लत पब्बत लार ॥
ढलैं सिर ढाल अनेक सुरंग । फरैं फरहारि उभारिय अंग ॥१९०॥
बरंनह झंडय मंडय जूथ । मनौं पट रित्ति अनंगह रूथ ॥
भई पुर डंबर अंबर रैंन । जलं थल पद्धरि संक्रनि सेन ॥१९१॥

॥ अरिल्ल ॥

जगि मंत्री कैमास महा भर । गंठिय चित्त चरित्त कहिय वर ॥
जग्गिय सथ्थ सज्ज निस सेनं । गयो राज यह सज्जि द्रुगेनं ॥१९२॥

॥ दूहा ॥

चरित लष्प साहाब चर । गए पास सुरतान ॥
सजी सेन सामंत पति । आयो जोजन थान ॥१९३॥

॥ छंद विअष्परी ॥

सुनि चरित्त साहाब तासचर । वोलि मीर उमराव महा भर ॥
दिय निरघात घाव नीसानं । चल्यौ सेन सज्जै सब्बनं ॥१६४॥
वाजित्र वीर अनेक सुबज्जे । धर पडिहाय सुगोमह गज्जे ॥
डग्यौ सूर चल्यौ सुरतानं । बज्जि निहाव नाल गिरि बानं ॥१६५॥
फौज सुपंच सजी साहावं । उलट्यौ सेन समुद्रह आवं ॥
दच्छिन दिसा सज्जि तत्तारं । दिसि वांई पुरसान सुधारं ॥१६६॥
हाजिय राजिय गाजिय पानं । सनमुप सेन सजी सुरतानं ॥
मीर जमांस पांन कंमानं । महवति मीर पुठ्ठि सजि तामं ॥१६७॥
पान मरुस्तम रुस्तम पानं । मद्धि फौज रज्जे सुरतानं ॥
सहते वीस वीस सजि फौजं । तुंबा पंच रचे अहहौजं ॥१६८॥
चिहुवप्पां गज घूमहि डंमर । हथ्थ नारि गिर बांन असंबर ॥
रिन रन तूर घोर नीसानं । भेरी श्रृंग गरुड थन थानं ॥१६६॥
नफ्फेरी त्रिय त्रिध सुर डंडं । जोमप पट्ट बजे घन दंडं ॥
आवन झुम्भझ डहक्क ठहक्किय । है वर हींस दरक गहक्किय ॥२००॥
गज चिक्कार फिकार सवद्दं । तंदुल तब्बल मृदंग रवद्दं ॥
जंगी वीर गुंडीर अनेकं । वाजित्र अनेक गने को वेगं ॥२०१॥
फौज पंच साजी साहावं । मीर अनेक गने को नावं ॥
देस देस मिलि भाप अनंतं । तब्बीयन नाम अनेक गनंतं ॥२०२॥
फौज पंच सजि चल्यौ जु साहं । गज्जैं धरनि गैंन पुर गाहं ॥
सारुंडै सज्ज्यो दिसि वामं । पद्धर सद्धर उत्तिम ठामं ॥२०३॥

॥ दूहा ॥

उत्तिम पंथरु पुठ्ठि जल । तप्पी जीय सुथान ॥
सारुंडौ दिसि वांम दै । सजि ठाढौ सुरतान ॥२०४॥
उड्डि रेन डंबर अमर । दिप्यौ सेन चहुआन ॥
सुनिग कंन वाजित्र त्रहक । सजे सीस असमान ॥२०५॥

इंछिनी-विवाह प्रसंग

॥ दूहा ॥

जंपि सुकी सुक पेम करि । आदि अंत जो वत्त ॥
इंन्छिनि पिथ्थह ब्याह विधि । सुष्ष सुनंते गत्त ॥१॥

॥ कवित्त ॥

तपै तेज चहुआन । भान ढिल्ली इच्छा वर ।
वीर रूप उप्पज्यौ । पन्न रष्पै जुग्गिन भर ॥
आबू वै अनभंग । जंग पंगौ पल दारुन ॥
जोग भोग पग मग्ग । नीर पित्री अवधारन ॥
कित्ती अनंत सलपेज भुअ । धुअ प्रमान पन रष्पई ॥
चव बरन सरन भुजदंड भर । दल दुज्जन भिर भष्षई ॥२॥

॥ दूहा ॥

जैत पुत्र सलपेज लघु । इंन्छिनि नाम कुमारि ॥
वर मंदोदरी सुंदरि । त्रियन रूप उनिहार ॥३॥

॥ गाथा ॥

सो अप्पी वर भट्टं । रुद्रं वर माल थानयं भेवं ॥
सिद्धं सिद्ध सुपुत्रं । नामं जास भीमयं रायं ॥४॥

॥ कवित्त ॥

अनहलपुर आभ्रंन । राज भोरा भीमंदे ॥
देसां गुज्जर पंड । डंड दरिया से वंदे ॥
सेन सवल चतुरंग । वीर वीरा रस तुंगं ॥
अति उतंग अनभंग । वियन पुज्जै वल जंगं ॥
कलि काल किंत्ति मित्ती इतिय । पलटि प्रीति क्रत जुग करन ॥
भोरा नरिंद भीमंग वल । उभै दीन तक्कै सरन ॥५॥

॥ कवित्त ॥

जहोंरा पारक्क । सर्व सोढा पज्जाई ॥
बारी बंभन वास । ठाम ठठ्ठा छड्डाई ॥
माही माल्हन हंस । पालि आबू घर लग्गा ॥
आगेंही सलपान । दई मंदोदरि सग्गा ॥
आचंभ रूप इंच्छिनि सुनी । जन जन बत्त बषानियां ॥
भोरा अभंग लग्यौ रहसि । काम करक्कै प्रानियां ॥६॥

॥ कवित्त ॥

तिन प्रधान पट्ठाइय । लिष्यि आबू दिसि रायं ॥
तुम बड्डे घर बड़े । बानि बड्डे चित्त चायं ॥
सैंध सगप्पन सध्यौ । चूरि चालुक परिहारां ॥
पज्जाई दो बार । बाल बांरू रूकारां ॥
नग हेम मुत्ति मानिक्क घन । कहि न जाइ लष्षा लिषां ॥
इंच्छिनि सुचित चहुआन बर । तौ आबू गिरि सर भषां ॥७॥

॥ दूहा ॥

कै इंच्छिनि परनाय मुहि । रष्पि सगप्पन संधि ॥
जौ चित्तै चहुआन कों । गढ़ तें नष्षौं वंधि ॥८॥

॥ कवित्त ॥

जै अब्बू वै भार । लाज अब्बू गज रष्यौ ॥
मान प्रमान समदान । अंग कवितन कवि सष्यौ ॥
डोलौ लंमन होइ । धाइ बज्जै रस भीरं ॥
सलप सुतन पामार । समद लज्जा मुप नीरं ॥
मिलि मंत तंत इक्क सु करन । करक क्रसस सगुनं सुब्बर ॥
संवरन मंत मंतह रवन । भान दान दिष्ये सुब्बर ॥९॥

॥ दूहा ॥

इम कहि जैत सुतात सम । गढ वपु रष्यौ सच्छ ॥
हम तुम जाइ सुराज पै । लैआवैं बर पच्छ ॥१०॥

॥ कवित्त ॥

गय सलपानी राव । वीर अग्गर गढ रष्षै ॥
वर आबू की लाज । पेम कंनह सिर भष्षै ॥

बंधो राव धरंनि । वीर पामर सुर सष्षी ॥
प्रजा पुलंत नरेस । ग्राम पट्टू दिसि रष्षी ॥
वर मुक्कि वीर धारह धनीय । हथ्थराज परवान लिपि ॥
सोमेस पुत्र प्रथिराज कों । दै इंछिनि सगपन सुविपि ॥११॥

॥ कवित्त ॥

वर उद्धरन नरिंद । पेम क्रंनह गढ साहिय ॥
जोग मग्ग लभ्भियन । पग्ग मग्गह मुति पाइय ॥
बहुत सिद्ध साधन सुमांडि । आरंभ विचरिय ॥
मुक्कि त्रिगुन गुन गहै । छिमा सद्धै क्रमनारिय ॥
हम परत भूमि पंचह सुधर । पहिलै मोधर चंपिहै ॥
गोइंद परै बड़ गुज्जरैं । आबू आनि सुजंपिहै ॥१२॥

॥ दूहा ॥

चालुक्का चहुँआन सौं । बंधे तोरन माल ॥
ते कविचंद प्रकासिया । जे हूँदे दल हाल ॥१३॥

॥ दूहा ॥

सुनि कग्गर नृपराज प्रथु । भौ आनंद सुभाइ ॥
मानौं वल्ली सूकते । वीरा रस जल पाइ ॥१४॥

॥ कवित्त ॥

पंच हस्ति सत बाजि । द्रव्य दीनो सत पंचं ॥
धरमत्ती मेवात । दियो हिंसार सुपंचं ॥
तेग एक पुरसानि । इक्क माला गुन दानं ॥
आदर संजुत बोल । मुक्कि मंत्री अगिवानं ॥
संभाग राज सोमेस सुअ । सलप राज कीनौ गवन ॥
सुनि वात राय भोरंग हिय । मनौ घाव दीनौ लवन ॥१५॥

॥ दूहा ॥

करि जुहार भीमंग सौ । चल्यो जैत कुंआर ॥
पेमकरन पंगार कौं । दै सिर उप्पर भार ॥१६॥

॥ दूहा ॥

गढ साह्यौ सुनि भीम ने । कन्यावर प्रथिराज ॥
बोलि मंत्रि सज्जन कह्यौ । दुहूं वाजएँ वाज ॥१७॥

॥ छंद पद्धरी ॥

जं बात सुनिय सलेपज बीर। परि तत्त तेल जनु बूंद नीर॥
प्रजरंत रोस चालुक्क भान। धर धरिग धरा पल संक मान॥१८॥
बंधू समेत पाताल मेत। जमराज पून को करे हेत॥
डंकिनी पास पीठी मिडाइ। को तिरै समुद बिन हथ्थ पाइ॥१९॥
को हथ्थ सिघ पुच्छी जगाइ। को लेइ नाग मनि सीस लाइ॥
को काल ग्रेह गहै पंचि हथ्थ। घालै जु कौन तत अग्गि वथ्थ॥२०॥
रष्पै सु कौन चालुक्क पूंन। संभर्‌यौ कौन त्रैलोक हून॥
मैं सुन्यौ कंन जुग्गिनि पुरेस। परमार रष्पि अपमध्यदेस॥२१॥
ज्यौं पियौ कृष्ण दावानलेस। त्यौं पिंड गढ्ढ आबूअ देस॥
गढ चढै मान मन धरिग भार। सम करों जारि संपारसार॥२२॥
मुक्कले दूत ढिल्लीय थान। रष्पै न सरन ज्यौं चाहुआन॥२३।

॥ कवित्त ॥

जपि भोरा भीमंग। अंग कंप्पै रस बीरह॥
त्रिषम भार उद्धार। बारि बोरें अरि नीरह॥
दिसि दिसान कग्गर। प्रमान पट्टे पट्टनवै॥
बारिधि बंदर सिंधु। बाज सोरठ ठट्टनवै॥
कच्छे न जथ्थ जद्दव जहर। सेन इक्क भए आनि भर॥
चालुक्क राइ चालंत दल। अम्मर घुम्मर घुमर बर॥२४॥

॥ कवित्त ॥

वर गिरनार नरेस। कियो साहस चालुक्की॥
लोहानो कट्टीर। सेन बंधे भुअलुक्की॥
आबू उप्पर कूच। वीर भीमंदे दिज्जै॥
वर निसान सुर गज्ज। गच्छि जैजै अरि पिज्जै॥
सहनाइ नफेरिय वीर वजि। सिधुअ राग सु आदरी॥
पंमार भीम पूजी सहर। वजो कूह गुन गद्दरी॥२५॥

॥ छंद भुजंगप्रयात ॥

धरा धूरि पूरं। सिरं सेत नेतं। पहं पंड पंडं। उडी रेन रेतं॥
मदं गंध भारं। लगे भौर भारं। मनौं कज्जलं कूट। कलपंठ थारं॥२६॥

ढलं ढाल ढालें । चलै ब्रंन ब्रंनं । मनौं केलि पंचं । रगंचा सुत्रनं ॥
चलें चौंर चावद्दिसं वात पत्तं । मनौं भौरयं भौर वासंत मत्तं ॥२७॥
नवं नद्द नीसान बज्जं अघातं । गजै गैन कै सिंघ कै गिगिंरातं ॥
नवं नद्द नफ्फेरि भेरी सभालं । तरक्कंत तेगं मनौ ब्रिज्जु नालं ॥२८॥
करक्के नरं पाल पग्गं पनक्कें । मनौं काल हथ्थं सुविज्जू झलक्कें ॥
जलं चेथलं वेथलें तथ्थ नीरं । मनौं नंपियं वान रघुनाथ वीरं ॥२९॥
जलं वेत पुट्टी वनं वेत तुट्टी । थलं वेत छुट्टी फनं वेत उट्टी ॥
धरं रेन उड्डी सुलग्गै अभानं । दलं वेत वढ्ढी पयानं पयानं ॥३०॥
करी आनि सेना सु आबू गिरद्दं । मनौं पारसं चंद आभा सरद्दं ॥
कवी बीय ओपंम चित्तं बिचारी । उरं हूव्र माला सिवं ज्यौ अधारी ॥३१॥
चिहूं कोर डेरा कहूँ पीत सेतं । मनौं ग्रीपमं अंत उट्ठि मेघ मेतं ॥३२॥

॥ गाथा ॥

आभा सरदं प्रमानं । सेनं सज चालुकं वीरं ॥
छिति छत्रीयं छत्रं । जनु वद्दलं छुटि संकरं मेघं ॥३३॥

॥ छंद भुजंगी ॥

मिले सेन पंमार चालुक्क एतं । कुहू रैन जुट्टैं मनौं प्रेत हेतं ॥
झरं सीस तुट्टैं विछुट्टैं विहारं । करैं गल्ल ग्रजें पिसाचं चिहारं ॥३४॥
तरक्कंत घायं परैं पाइ कच्छी । मनौं नीर मुक्कैं तरप्फंत मच्छी ॥
कियौ जुंहरं जालि वालानि तत्थैं । चढ्यौ राउ भोरा सिरैं अव्वु मत्थैं ॥३५॥
चपं चच्चरंची सुरंची झनक्कै । वज्यौं जानि घरियार संभया ठनक्कै ।
रुध्रि धार पारं भई भूमि रत्ती । रमैं जानि वासंत निस्संक छत्ती ॥३६॥

॥ कवित्त ॥

परे झुभिझ रन वीर । मरन ज्यौं जानि जम्म घर ॥
पुत्र मित्र सज्जन सुलच्छि । टरे नन काल काल कर ॥
धरी लच्छि धर धर्यो । धारि उद्धार पमारं ॥
मह परिगह छह पुत्त । तुट्टि धाराधर धारं ॥
धुअ धाइ भीम लीनौ सुगढ । सुकल पच्छ पुंनिम सुदिन ॥
जय दंद व्रत्त चालुक्क सुनि । नभ लग्यौ सलपान तन ॥३७॥

॥ दूहा ॥

एक मास दिन पंच रहि । गढ़ मुक्यौ तिन वार ॥
पट्टनवै पट्टन गयौ । अव्वूवै सिर भार ॥३८॥

॥ भुजंगी ॥

थपी थान थानं सुअव्वू प्रमानं । गश्रौ राज पट्टं सु पट्टं निधानं ॥
दियं कग्गदं साहि सुरतान गोरी । करौं भेद बत्तं बधौं पिथ्थ जोरी ॥३९॥
धप्यौ साहि गौरी सुसारूंड आवै । हमं सव्व सेनं पसौ कित्ति धावै ॥
दऊं गढ्थ अव्वू रुजंवू निधानं । हनौ साहि चौहान करि पग्ग पानं ॥४०॥
तहां मुक्कल्यौ वीर मकवान राजं । लिषे कग्गदं चालुकं राजकाजं ॥४१॥

॥ दूहा ॥

पूत परिग्गह बंधु सह । मैं मुक्कलि सग लोग ।
एकै इच्छिनि कारनह । मति सलषानि अजोग ॥४२॥

॥ गाथा ॥

मम मनरंजन भंजौ । सजौं सेनाइं संभरी देसं ॥
जो मिलई सुरतानं । भंजौं राज दिल्लियं पानं ॥४३॥

॥ कुंडलिया ॥

कग्गर गुरिय सहाबदिस । भरि लिपि भोरा राइ ॥
तुम धरि संभरि उत गहौ । हम नागौर निहाइ ॥
हम नागौर निहाइ । बंधि संभर गिरि अव्वू ॥
जो मिलंत मुहि आइ । देउं धन अंबर दव्वू ॥
पहु पारक पटनेर । सीम भप्पर ही अग्गर ॥
गुज्जरवै गरू अत्त । लिपे गोरी दिस कग्गर ॥४४॥

॥ कवित्त ॥

चाहुआन सामंत । मंत कैमास उपाइय ॥
वंदि लग्न हुंकार । बंध वंधान उचाइय ॥
दस गुंनां वल देपि । साजि साधन सु सुगंधह ॥
दुहु मुष्षांहीं लग्गि । वीच चंप्पौ सुभ्रदंगह ॥
गोरीय एक गुज्जर धनी । मुप विचित्र धनि संभरी ॥
हज्जार दून द्वादस भरह । दो मिलग्गि दुहु दिसि वुरी ॥४५॥

॥ कवित्त ॥

सारुंडै साहाव । दीन सुरतान विलग्गा ॥
सोमत्ती भर भीम । रात लप्पह असदग्गा ॥

नागौरँ सामंत। ईस चहुआन पिथाई ॥
अस पति गुज्जर पती। जानि मिरदंग बजाई ॥
दो बीच हजारी अट्ठ चव। ग्रेहा मंत परठ्ठयौ॥
चामंड राइ कैमास सम। पीची पग्ग वरठ्ठयौ ॥४६॥

॥ छंद भुजंगी ॥

त्रँटी फौंज दूनौं चढ़ै चाहुआनं। भरं स्वामि दूनों भरे चित्त बानं।
तिनं की उपंमा कवी चंद पढ्ढै। मनौ कर्क अरु मक्र निसिदीह बढ्ढै ॥४७॥
दुई इक मन्नैं उमन्नै नसाई। करी संभरी भ्रत्य दूनो दुहाई ॥
भ्रितं मुष्प उंचं दिवै चाहुआनं। मनौं डंमरी बाल उग्गो विभानं ॥४८॥
फिरै उंच तेजं तुरं गंति ताजी। जिनै देपतै नैन गत्यैं न लाजी ॥
पचै बाग उट्ठे चुटक्के हरेवं। मनौं मंडियं मौज केकी परेवं ॥४९॥
पहू पाइ मंडं तनं चित्त इंपी। मनौं कज्जलं कूट धावै धरत्ती ॥५०॥
पिनं उप्परं ढाल नेजे सुरंगं। तिनं ओपमां चंद चिंती सुचंगं ॥
जरे पाटनारी विचैं हेम गुंथे। मनौ पज्जुरी केलि जुग मेर मंथे ॥५१॥
ठनक्कंत घंटा चलैं अंग मोरैं। मनौं कूलटा छैल चित चालि चोरैं ॥
झँमैं दंत दंती सुनेनं विराजै। मनौं विज्ज लत्ता नभं मध्य छाजै ॥५२॥
मुपं सूर सूरं सुमुच्छी विराजै। तिनं चंद बीजं गतं देपि लाजै ॥
पटे वीय पासं उपंमा सुकव्वी। मनौं राह वीयं रनं चंपि रव्वी ॥५३॥
सजे आवधं सूर छत्तीस डव्वे। मनौं राह रूपं ससी कोटि दव्वे ॥
करी सेन गोनं मिलानं दवानं। बढी वेय वाजू सरित्ता किजानं ॥५४॥
गह्यौ मुष्प गोरी प्रथीराज राजं। मनौ राह अरु भांन मिलि जुद्धसाजं॥
मुषं रोकि सुर्तान को चाहुआनं। उते रोकि कैमास भोरा मुहानं ॥५५॥

॥ दूहा ॥

पीची पग्ग परट्ठि वर। वर भीमँग चालुक्क॥
तिहुँ दिस तिहुँ वर धाइया। ज्यौं पच्छिमी आरक्क ॥५६॥

॥ कवित्त ॥

मिले मल्ल आलंग। जंग भोरा भुअंग जगि ॥
कै कुलाह कंतार। धारा डंडूर पूर लगि ॥
है हुलाह छुट्या कि। सिंघ मँगल मैं मत्ता ॥
कै अप्पां अप सेन। राव रावत्त विरत्ता ॥

आवृत सेन उत्तर दिसा। ईसानै लग्गिय लहरि ॥
धावंत धाम सामंत सों। सूर समर लग्गे समरि ॥५७॥
चंडिय देवि पसाइ। हस्ति तोरै मै मत्ते ॥
चढ्यौ राव भीमंग। चौर मौरह सिलहंते ॥
कै अप्पानी रारि। काह वाम कि डंडूरिय ॥
कै छुट्टा संग्राम। सिंघ संकर निज्जूरिय ॥
कै वीर धाम धुज्जिय धरा। कै कलाल कलपंत हुअ ॥
जा जंपि जंपि जंपन कहै। जपै राज भीमंग भुअ ॥५८॥
नां अप्पानी रारि। नाहि वाइ सुडंडूरिय ॥
नां छुट्टा संग्रांम। सिंघ संकर निज्जूरिय ॥
है हक्कां धर कंप। चंप उत्तर थी लग्गिय ॥
चौकी गस्त गुराइ। कोट कोटन इत भग्गिय ॥
सा द्रुग्ग देव सत्तरि पती। पति पहार ठेल्यो करिय ॥
आहंन हंन हंतेव हठ। निसि निसान सद्दह भरिय ॥५९॥

॥ दूहा ॥

सद्दां सद्द उसद्द भय। वज्जा वज्जिय लग्ग ॥
जूना जंजर हैर वल। भई सुरासुर जग्ग ॥६०॥
संभरि सों लग्गे समर। अंमर कौतिग एव ॥
घरी सत्त सत्तमि दिवस। उग्यौ उडग्गन देव ॥६१॥

॥ भुजंगप्रयात ॥

घरी सत्त सत्तं उग्यौ चंद मानं। वरं वीर चालुक्क पग्गं पगानं ॥
वजी जूह कूहं कलं कोकनद्दं। मनों गज्जियं मेघ नद्दं प्रसद्दं ॥
कुलं वीर जग्गे सुपं नीर भारी। परे लोह आवृत्त सा व्रत सारी ॥
वहै पग्ग धारं गजं सीस भारी। मनों धूम समझे उठे अग्गि झारी ॥
तमी तेज भग्गे जगे तेज पग्गं। वजै जंग नीसांन ईसांन मग्गं ॥
करं अप्प अप्पं नृपं वे दुहाई। नचे रंग भैरूं ततथ्थेन धाई ॥
वहै वांन आवत्त सावत्त तेजं। तहां चंद कव्वी उपंमां कहेजं ॥
लगें अंग अरि गंजि सुग्रीव भारी। फिरंतं ज जंगंम दीसै उतारी ॥
परें संध बंधं असंधं निनारे। मरोरंत चौरं मनों मूर वारे ॥
फिरें मद्धि ढालं रिनं मंझ रोनी। तिनं मुक्कियं कुन वारी नित्रती ॥६२॥

इंच्छिनी-विवाह प्रसंग

॥ कवित्त ॥

हैगै पग रथ अरथ। वढ़ि वढी नर लग्गा ॥
कै घायां घन नंत। भयें भंभरि भर भग्गा ॥
चालुक्कां चंप्यो सयंन। सें दल सामंता ॥
गोरीरद कैमास। भूप भोरा धावंता ॥
रथ सत्थ सिलह सज्जन कह्यौ। गहकि गज्जि भोरा सुभर ॥
को करै काल सों चाल क्रत। महन रंभ मानों अमर ॥६३॥

हक्कारयो रा भीम। मत्त मैं गल गज्जानां ॥
सहस पंच साहन समंद। ढालै ढल्लानां ॥
जंत्र मंत्र गोला गहक्क। छोनी सब संकिय ॥
साहन वाहन वर विरद्द। आव्रत उत्तं किय ॥
लल्लरिय लोह अप्पां अपन। झर उभार लग्यौ गयन ॥
हल हले सेन सामंत दल। मनों अंत जम जुध्य पन ॥६४॥

ना छुट्टा रासिंघ। डांम डंडूरन उठ्यौ ॥
ना हंकाया आप। सेन भारथ्थ न जुट्यौ ॥
सा मंतारी हाक। धाक उत्तर दिसि लग्गी ॥
अप्पांनी सेना सुमंत। भारत भिर भग्गी ॥
सन्नाह राय सज्जी सुकसि। विन्न विधान लग्गिय अमर ॥
चालुक्क राइ चित धूंमरी। सार सार लग्गी समर ॥६५॥

महन रंभ आरंभ। जग्गि भोरा सनाह सजि ॥
तव लगि दल रुक्कयौ। राज कंठीर कन्ह रजि ॥
भर अभंग चालुक्क। रोस आकास प्रमानं ॥
हाला हल तंमस्यौ। तमसि तामस तम भानं ॥
चैनेत जगि प्रलैकाल जनु। वंधि वंधि गज्जे उभय ॥
वंभांन जग्य जे उप्पने । करों सोइ निर्व्वीर मय ॥६६॥

पग उभारि दल रारि । तारि कढ्ढन दुज्जन वै ॥
औडन हंथह नंपि । धंपि भ्रत चाल्लुक नरवै ॥
कढि कव्वंध धर लुट्टि। लुथ्थि पर लुथ्थि अहुट्टिय ॥
श्रोन धार पल हलिय। मोह माया भ्रम छुट्टिय ॥

॥ अरिल्ल ॥

जित्यौ वे जित्या चौहानं। भग्गा सेन सन्या सुरतानं॥
तेरह पांन परे परमानं। सारुंडै तोर्‌यौ तुरकानं॥छं०॥८६॥

॥ कवित ॥

साह डंड डंडयौ। मेह मंड्यौ नागोरिय॥
भट्टिय रा भटनेर। राव सिंघात्तन तोरिय॥
जा रानी जग हथ्थ। मंड़ि मंडोवर पाग्गह॥
जै जै जै जैप्रथिराज। देव सद्देति अकासह॥
आरज्ज लज्ज सुरतांन कहि। फिरि मिलांन दीनौं पुरां॥
जो सत्थ कत्थ कैमास किय। चालुक्कां सोभति धरां॥८७॥

॥ दूहा ॥

सुकी सरस सुक उच्चरिय। प्रेम सहित आनंद॥
चालुक्कां सोभति सच्यौ। सारूंडैं में चंद॥८८॥

इंछिनि व्याह कथा

॥ दूहा ॥

कहै सुकी सुक संभलौ । नींद न आवै मोहि ॥
रयनि रवांनिय चंद करि । कथ इक पूछौं तोहि ॥१॥
सुकी सरिस सुक उच्चर्‌यौ । धर्‌यौ नारि सिर चत्त ॥
सयन संजोगिय संभरै । मन में मंडय हित्त ॥२॥
धन लद्धौ चालुक संध्यौ । वंध्यौ पेत पुरसांन ॥
इंछनि व्याही इच्छ करि । कहौं सुनहि दै कांन ॥३॥
मुक्कि साह पहिराइ करि । दंड दियौ सलपांनि ॥
लगन पठाइय विप्र करि । वर व्याहन पिथ्थांन ॥४॥
पठयो प्रोहित भांन कर । कनक पत्र लिखि लग्न ॥
श्रीफल वहुल रत्तन जरि । पिष्पि होत जिहि मग्न ॥५॥

॥ कवित्त ॥

अब्बवै अब्ब समप्पि । सीम वंधी दह गुन्निय ॥
पावारी इंछनिय । व्याह सोधन वर मन्निय ॥
लच्छि ग्रेह कूवेर । अंत ग्रीपम दिन धारी ॥
परनि राज प्रथिराज । हथ्थ श्रीफल अधिकारी ॥
नर नाग देव गंधर्व गुन । गांन जांन मोहें सकल ॥
अछै उतंग लच्छन सहज । थांन नंधि वंधी विकल ॥६॥

॥ दूहा ॥

प्रथु पूछत वंभननि सुनि । कहौ वाल किन वेस ॥
कितक रूप गुन अग्गरी । सुनत मोहि अंदेस ॥७॥

॥ साटक ॥

वाले तन्वय मुग्ध मध्यत इमं स्वपनाय वै संधयं ॥
मुग्धे मध्यम स्यांम वांमति इमं मध्यान्ह छाया पगं ॥
वालप्पन तन मध्य जीवन इमं सरसी अवग्गी जलं ॥
अंगं मद्धि सुनीर जे मल ससी सुम्भै सुसैसव इमं ॥८॥

॥ साटक ॥

वीरं जा वर वीर भीमति वरं कामं तनं उप्पया ॥
पंथे वानति वान मानति वरं कुरनंद केवं कुरू ॥
धाता मानय वीर वामन वलि पूरोरवा भथयं ॥
नू पती प्रथिराज कालांति रहं कालं जसं वर्तते ॥२१॥

॥ कवित्त ॥

सुनि आवत चहुआंन । करिय अग्यौन सलप बर ॥
हय गय लच्छि सुअच्छि । आदि उम्महिय राज दर ॥
पट अंबर रुजराश्र । जेव नंगन जगमग्गिय ॥
फुल्लिय मानहु संभि । चित्त चकचोंधिय लग्गिय ॥
चहुआंन रत्त तोरन समय । लगन गोधूरक संधयौ ॥
जानै कि अर्क राका दिवस । इक्क थांन उगि रुंधयौ ॥२२॥
जिम सावन भादव सिंधु । घुमरि घन घटा मिलत दुअ ॥
जनु समुद्र अरु गंग । उमडि मिलि दुहुंन थोभ हुअ ॥
जनु सुर अरु सुक्र । सिगि रिपि गननि गगन मिलि ॥
जनु दधि मथि सुर असुर । करन मधुपांन पिभिर ठिलि ॥
तिम संभरेस अच्चूयनी । अनी वनी रस त्रिरस भरि ॥
नग जोति जरकज दीप दुति । नहीं श्रवन बाजंव करि ॥२३॥
पंच हस्ति मद वहि गिरंद । गरजंत मेघ जनु ॥
तुरी वीस ऐराक । तेज तन अगिन पवन मनु ॥
जर कंमर जंनेउ । हथ्थ संकर नग मंडित ॥
सत्त मुपम पर काल । हेम तं तन तन छंडित ॥
वारोठि विवह वस्तह समभि । सह चक्रत पिप्पत रहिय ॥
विवहार विबुध जोतिग गिनत । सलप किति जान न कहिय ॥२४॥

॥ दूहा ॥

तोरन कर वर चंद तह । मुत्तिय अच्छित डारि ॥
मनों चंद त्रिय भेप धरि । अच्छित अच्छ उछार ॥२५॥

॥ साटक ॥

वंदे विद कनम्स तोरन वरं तुंगे रसं मन्मथं ॥
मुण्पं माजंति मक चक्रति कला निमाह नु माहनी ॥

इंछिनी ब्याह कथा

जां निज्जै त्रैलोक उम्मति पुरे वंदे कवी उप्पमे ॥
दुअ पासं दुअ नारि दिष्यत वरं मनो नैर वर दिष्पयं ॥२६॥

॥ कवित्त ॥

नृपति काज अलि दिषहिं। अलिन दिष्पत नर नारिय ॥
जनु मिलतराज प्रथिराज। नयर त्रिय बांह पसारिय ॥
जनु वन्ही गुर देव। सत्ति स्वाहा हाहा हुअ ॥
जै जै जै उच्चार। राज रवनी रंजत रुअ ॥
पंसार सलप वंदत वलिय। दिष्पि कला मनमथ्थ पिथ ॥
दिष्पै सुत्रिया दुरि दुरि नयन। मनहु तरंग कि काम तिय ॥२७॥

॥ छंद पद्धरी ॥

चित काम वीर रज्जियं और। संकुर्यौ जांचि मनमथ्थ जोर ॥
दुरि दिपं बाल झीनेति वस्त्र। उपमान चंद जंपंत तत्र ॥
जाने कि जार परि मध्य मीन। पुज्जै कि दीप भोडल प्रवीन ॥
इक करन पलटि इक करन लंत। घुंघट्ट वदल लज्जा सुभंत ॥२८॥
घुंमलिय रैन जनु वदल जोट। उझकंत चंद जनु आंनि कोट ॥
कर उंच बाल अच्छित उछारि। जनु कमल वाइ वसि ओस झारि ॥
गावंत गान बहु विधि सवारि। कलयंठ कंठ जनु रति धमारि ॥
मुसकंत हास दिपियै विसाल। विकसंत कमल जनु चंद ताल ॥
तनु ऐंठि मैंठि भोंहै कि बाल। मूरछ्यौ मैन जग वही ष्याल ॥२९॥

॥ दूहा ॥

कलस वंदि सुभगा सिरह। महुर मद्धि सय मेलि ॥
बहुरि सुहाग सुहागिनी। वई कांम रस बेलि ॥३०॥
कनक थार आरति उदित। सुभग सुवासिनि लाइ ॥
जनु कि जोति तम हर परह। नव ग्रह करत वधाइ ॥३१॥
महुर पंच सै थार धरि। दुति दूलह जिय जांनि ॥
कांम कसाए लोइननि। हन्यौ मदन सर तांनि ॥३
सपिन ओट सलपह घरह। दूलह दुति दृग दैपि ॥
कोटि काम छवि पिष्पि पिथ। जनम सफल करि लेपि ॥
महल झुंड महलनि बहुरि। जनवासह जुरि जांनि ।
सोभि सास सामंत सह। जनु त्रिटन शनि भांमि

॥ छंद पद्धरी ॥

वहुरी वरात जनवास थांन । छवि सोभ सुवन भुवभंति भांन ॥
संग सुभट सामंत सूर । बलवंत मंत दिपियै करूर ॥
अंग अंग अंग उल्हास हास । जनु लच्छि लाह सोभा प्रकास ॥
सत पन अवास साला सुरंग । सुभथांन जैत आवू दुरंग ॥३५॥
जालीन गोप सोभा न पार । रवि सोभ क्रंति क्रनन प्रसार ॥
पंच रंग श्रंन चित्रत सुवेस । वहु गरथ रूप भंडित जुदेस ॥
रेसंम गिलम दुल्लीच मंडि । तिन जोति होति दुति चित्र पंडि ॥३६॥
द्वादसह सेज विछाय पंचि । तिन ढिग्ग मूढ गादीय संचि ॥
प्रति सेज सेज फूलन अमार । तिन सोभ गंध रग रंग पार ॥
इक लाप पांन वीरा बनाइ । घनसार मद्धि वीरन लगाइ ॥
कुंमकुमन कुंभ जहं तहं छुटंत । वातीन अगर धूपन लुटंत ॥
कद्दमन जप्प मन्त्रि कीच भूमि । नाना सुरंगे रहि गंध धूमि ॥
मस्साल दीप प्रज्जरि फुलेल । केतकी करन वेली गुलेल ॥
ऊडत कपूर पवनं पपांनि । तिन सरस गंधि सक्कि न बपांन ॥
सूरंत क्रंति सोभा विसाल । सोमंत जुरे तहं श्रव भुआल ॥३८॥
प्रथिराज कुंअर कुअरन नरिंद । धरि भूप रूप अवतार इंद ॥
मनु कांम रूप रति भ्रमन चित्त । अश्विनि कुमार ससि सोभ मित्त ॥
नग कनक मंडि वासन विचित्र । ससि सूर सोभ सुभ सज्जि छत्र ॥
वर विप्प अप्प गज गाह धारि । जनु सोम उभय आरति उतारि ॥३९॥
आसंन अस्स प्रथिराज आह । तहां पंच सवद वाजे वजाइ ॥
संग एक कुंअर जल पान धार । ड्योढी न रूकि सामंत भार ॥
गुर राम चंद कवि ढिग्ग आइ । परधान कन्ह काइथ अताइ ॥
पुनि कंन्ह काक गोइंद राइ । परिपुर्न क्रोध जे लगत लाइ ॥४०॥
पुंडीर धीर पावस्स संग । दाहिम दूव जम जोर जंग ॥
जैनसी सलप लप्पनह सिंघ । छिनि छत्र भ्रंम जे इप्पि रंघ ॥
वलिभद्र सिंघ कूरंभ राइ । अनि नांम सूर कित्तक गिनाइ ॥
प्रथिराज इंद दिकपाल सूर । अंग अंग वद्धि सव जोति नूर ॥४१॥

॥ दूहा ॥

गयप जाल महलनि महल । फिरे चारु मन सर्व ॥
सोज सोभ अंनन लही । दिप्पत भग्गत गर्व ॥४२॥

महलनि सालनि महल मंडि । दासी सालनि गांन ॥
मंडप मंडित वेद धुनि । सुभटन सोभ समांन ॥४३॥
जहां तहां आनंद उमग । अनँग उछाह अनंत ॥
वंस छत्रीस छत्रीन छह । भाट विरद्द भनंत ॥४४॥

॥ छंद मोतीदांम ॥

गहने नग जोतिन हीरन लाल । पटंमर पूर झरप्पिय झाल ॥
मनि मांनिक मोतिन हीरनि हार । भगीरथ भंति हिमग्गिरि धार ॥
रितं रित भूपन भांति अनेक । धरे धन पंतिय आनि धनेक ॥
रँगं रंग वारनि वारनि वार । धरे नवला नप भूपन भार ॥
तिते सव संचि सवारिस ओप । झलंमल झालन ढालन नोप ॥
सकुंकम कूएन वंदिन पोति । सुहाग सुमंगल अप्टन होत ॥४५॥

॥ दूहा ॥

अप्ट मंगलिक अप्ट सिध । नवनिध रत्न अपार ॥
पाटंवर अंमर वसन । दिवस न सुभ्भहि तार ॥४६॥
फिरिय चार करि फिरिय सव । भोजन कारन वोलि ॥
भाव भगति आदर अमित । देव पूजि सम तोलि ॥४७॥
जनवासें पधराइ वर । वरी सिंगार अरंभ ॥
जुरि जुव्वन सुर सुंदरी । जे रस जांनत डिंभ ॥४८॥

॥ छंद त्रोटक ॥

विन वस्तर अंग सुरंग रसी । सुहलै जनुसाप मदंन कसी ॥
लव लोनइ लोइ उवट्टनकौं । कि वस्यौ मनु कांम सुपट्टन कों ॥
द्रिग फुल्लिय कांम विरांमन कें । उघरे मकरंद उदै दिन कें ॥
विन कंचुकि अंग सुरंग परी । सुकली जनु चंपक हेम भरी ॥४९॥
सुभई लट चंचल नीर भरी । तिनकी उपमा कवि दिव्य धरी ॥
तिन सों लगि कें जल वूंद ढरैं । सुछुटै मनु तारक राह करें ॥
जु कछू उपमा उपजी दुसरी । मनों माटय स्यांम सुमुत्ति धरी ॥
अति चंचल ह्वै विछुटै सुपतं । मनों राह ससी सिसुता चपतं ॥५०॥
सुमनों सति स्वात असुत्त इयं । तिनकी उपमा वरनी न हियं ॥
कवहूँ गहि सुक्त सिपंड वरें । मनों नंपत केसन सिंदु सरें ॥
जु सितं सित नीर लिलाट धसैं । सुमनों भिदि सोमहि गंग लसैं ॥

जल में भिजि मूंह कला दुसरी । सु लरै मनु बाल अलीन परी ॥
बुधि चित्त उपंम कितीक कहौ । जिन पाट अमै व्रत वेद लहौ ॥५१॥

॥ दूहा ॥

मयति भत्त अस्नान करि । सुभ दंपति दिन सोधि ॥
चाहुआंन इंछिनि वरन । मयन रीति अवरोधि ॥५२॥
करि मंजन अंगोछि तन । धूप वासि बहु अंग ॥
मनों देह जनु नेह फुलि । हेम मोज जन गंग ॥५३॥
तन चंपक कुंदन मनों । कै केसर रंग जुक्ति ॥
पीय वास छवि छीन लिय । और छीन सब जुक्ति ॥५४॥
अंग अंग आनंद उमगि । उफनत बेंनन मांझ ॥
सषी सोभ सब वसि भई । मनों कि फूली सांझ ॥५५॥
निरषत नागिनि वसि भई । किनर जष्प कितेक ॥
सब सोभा ससि सांनि कै । सांची इंछिछिन एक ॥५६॥
प्राग माघ अस्नान किय । गज गंजे घन घाइ ॥
विश्वनाथ सेए सदा । पृथीराज तो पाइ ॥५७॥

॥ कवित्त ॥

कमल भाल जनु बाल । मकर कर मंडि इंछिनिय ॥
निरषि नेंन प्रतिबिंब । करहि निवछार निछिनिय ॥
प्रमुदित अगनि अनंग । कोक कूकन उच्चरत ॥
एक रमन रस रंग । बात बातन मुच्चारत ॥
गंधव्रर वस्त्र गहनै करनि । हास भास मंडीर रिय ॥
तिन मध्य पबारी पिष्पियै । जनु विधिना अप्पन वरिय ॥५८॥
श्रवननि लगत कटाच्छ । जनु पवन दीपक अंदोलति ॥
मुसकनि विकसत फूल । मधुर बरसति मुष बोलति ॥
इटलति अलसति लसति । सुरति सागर उद्धारति ॥
रति रंभा गिरजादि । पिष्पि तां तन मन हारति ॥
तिह अंग अंग छवि उक्ति बहु । छंद बंध चंदहु कहिय ॥
जीरंन जुग्ग महि अजर इह । कल एक कीरति रहिय ॥५९॥
कमल विमल लज्जा सुगंध । बाल त्रिस माल उर ॥

भूपन सोभ सुभंत। मनों सिंगार सुचिर धर॥
अंलप जलप रति मंद। चंद आरुनि कुल ताभनि॥
सो इंछिनि पामार। राज ललिय अति सारनि॥
सत च्यारि बरप बरनि सुंदरिय।-सुर विसाल गावत गरज॥
चहुँआंन सुअन सोमेस कहि। विधि सगपन साईं अरज॥६०॥

॥ छंद मोतीदाम ॥

सजे पट दून अभूषन बाल। मनों रति माल त्रिसालति लाल॥
धर्‌यौ तन वस्त्र सुकोर कुआँरि। मंडी जनु सिंभ मनंमथ रारि॥६१॥

॥ छंद कंठाभूषना ॥

इक गावही रस सरस रस भरि विमल सुंदर राजही॥
मनों वृंद उडगन राति राका सोम पाति विराजही॥
इक त्रित्त रंगन कांम अंगन अजस लज्ज कि सुंदरी॥
मनों दीप दीपक माल बालय राज राजन उच्चरी॥६२॥
सुभ सरल बांनिय मधुर ठांनिय चित्त भंजय जोगयं॥
द्रग निरपि निरपि कटाच्छ लग्गहि जुक्त रंभन भोगयं॥
अलि रूप नयनं मनहु बयनं चलिहि तिष्पि कटाष्पयं॥
छुट्टंत निकरहि वार पारह करत तक्कि तनतच्छयं॥६३॥

॥ कवित्त ॥

विधि विवाह दुज करिय। करिय तन अंग वाम जन॥
निरपि नयन मुप कंति। भयौ रोमंच स्त्रव्व तन॥
फुलिग नयन मुप वयन। भयौ आरूढ़ कांम मन॥
चित वसीकरन समह। भयौ आनंद स्त्रव्व तन॥
अभिलाप मिलन हित हिलन मन। का कवित्त कवित्तह करै॥
प्रथमह समागम मिलन कों। वहुत अडंवर विस्तरै॥६४॥

॥ दूहा ॥

सोंधा सुगंध घन डंमरी। सुमन सुदिष्ट पसार॥
धूप अडंमर धुंधरिय। झल मल जल समढार॥६५॥

॥ छंद पद्धरी ॥

वरवग्ग मग्ग चिहुँ दिसा दिष्षि। जहाँ तहाँति सुमन अति वैठि पिष्पि॥
कच मग्ग भूमि चिहुकोद गस्सि। नारिंग सुमन दारिम विगस्सि॥

प्रतिविंब तास दिष्पिय सरूप। उप्पंम एम जंपै अनूप ॥
नव वधू अंग नवजल प्रवेस। मुसकंत दंत दिष्पिय सुदेस ॥६६॥
प्रतिबिंब चंप देपे फुलीन। दीपक्क मांल मनमथ्थ दीन ॥
उप्पंम और उर एक लग्गि। संजीव मूरि जनु जोति जग्गि ॥
हल हलै लता कछु मंद वाय। नव वधू केलि भय कंप पाय ॥
उपमां उर कवि कहीय तांम। जुव्वन तरंग अंगि अंगि कांम ॥६७॥
पाटांन दिप्पि चकचौंधि होइ। ससि परह उठ्ठि घन घटा दोइ ॥
सुभ भाग सरल सूधी सुवानि। ससि कन्न चली घन छेकि जांनि ॥
फुल्ले सुगंध के वरनि फूल। देपंत वग्ग पावस्स भूल ॥
घन वर अनंद अग्गें निसव्व। जनु रंक इच्छ पासै सुदव्व ॥६८॥
नल नलनि नीरु चहवचनि उद्धि। धर धार गंग जनु उठि विरुद्धि
विट विटनि वेलि झुलि वेल फूलि। जनु काम ग्रह बाग तर छत्र भूलि ॥
कदलीन पत्र हलि पवन जोर। जनु करत पपा नृप पिथ्थ ओर ॥
निरतंत केक केकीन संग। पावसह जानि गिर रमत रंग ॥६९॥

॥ दूहा ॥

नंदन वन वैकुंठ जनु। इंद्र लोग सुर वाग ॥
वृंदावन भूलोग जनु। सोभा सुभग सुभाग ॥७०॥

॥ गाहा ॥

तिहि थांनं रजि राजं। उत्तरियं वीर सा साजं ॥
मव संवल विस्थान। जांनं वुद्धाइं वीजयौ चंदं ॥७१ ॥

॥ कवित्त ॥

कै कैंठो गुर राज। भांन सत्तम अधिकारी ॥
भांन नवम पृथिराज। राह अप्टम अधिकारी ॥
वर वज्जी नीसांन। वंदि लीनं नृप राजं ॥
प्रीय त्रिया हिन वंध। सांई इंछिनि वर पाजं ॥
त्रिवांह नान अरु वाल सह। उच्चरें मुप इंछिनि सुनहि ॥
धनि धन्नि गवरि पूजा लहयौ। सुघर सुघर सुंदर समहि ॥७२॥
क्रम वेद अहुय। अग्नि होतव वर राजय ॥
स्नान अगनि विवांह। रत्ति कामह गुन गाजय ॥
दुहिनि नाम दुहु गिंप। दुहुनि परहं दुंहं गोती ॥

राजं गुरु उच्चरै । सलप चहुँआन सकोती ॥
अंनेक भाव दिप्पहि सुदिव । दिव दिवांन दुंदुभि वजइ ॥
प्रथिराज राज राजन सुवर । तिहित लपै रतिपति लजइ ॥७३॥
कुंदन ओपति अंग । मंग जनु चंद किरनि सिर ॥
वैनी सुभग भुजंग । फूल मनि सीस मीस थिर ॥
पटि्टय घुंटित मैंन । तिमिर कज्जल छवि छीनिय ॥
भुअजुग गोस धनुष्प । वदन राका रुचि भीनिय ॥
सुक नास नैंत फूले कमल । कंबु कंठ कोकिल कलक ॥
दुल्लह सुचित्त फंदन मनहु । फंद मंडि रष्पिय अलक ॥७४॥

॥ दूहा ॥

फुनि पंडित मंडप मंडिय । वेद पाठ आधार ॥
पट करमी सरमी अनिध । गुर संगह गुर भार ॥७५॥
तिन . दूलह मंडप बुलिय । हम सत वमस निसांन ॥
जनु वद्दल व्रज क्रिस्न पर । सुरपति वहुरि ऋपि रिसांन ॥७६॥
देपि सोभ प्रथिराज त्रिय । वारत राई नोंन ॥
हर्ष हास मुप चप उदित । जनु कमल विकस रवि भोंन ॥७७॥

॥ कवित्त ॥

देसन देस नरेस । भेस अमरेस अमर भति ॥
सील सत्त गुनवंत । दांन पग कहन कोंन मति ॥
जरकस पसम जराउ । गंध रस सरस अमीवर ॥
तेजवंत उद्दार । वडम विवाहर ग्रंथ भर ॥
मंडप्प जांन दुअ दिसि मिलत । हास तर्क जात न गन्यौ ॥
दीपति नगनि निसि दोह भय । वर दाई दिव वर मन्यौ ॥७८॥

॥ दूहा ॥

साल अटा जालिन गवप । त्रिप्पत नव रनिवास ॥
छत्र छाह छवि करत जित । भमर मत रस वास ॥७९॥
नग मोती गहने अगन । गिरत न सुद्धि सम्हार ॥
कांम लहरि छवि छोल उठि । द्रुति दरियाव वेपार ॥८०॥
मंगल गावत झुंमकनि । कोकिल कंठी नारि ॥
सुवर पुरुप जोवन छके । सुनहि सुहाई गारि ॥८१॥

पटां बैठि पट गंठि गुह । पूजे प्रथम गनेस ॥
दुव कुल वारि विचार कर । ब्याही बांम नरेस ॥८२॥
ग्रहन पूजि ग्रहदेव पुजि । पूजि अगनि दुज देव ॥
सापोचार उचार श्रुति । प्रसन भए नृप वेव ॥८३॥
चंद सूर तहां साधि दिय । कन्ह बाहुन बुध वाइ ॥
प्रोहित गुर उपदेस करि । बांम अंग तव आइ ॥८४॥
पढि संकल्प विकलप तजि । भजि भगवति भगवंत ॥
नम सु पाइ परसाद करि । चिर जिओ इंछिन कंत ॥८५॥
अबूपति पट गंठि त्रिय । विनय जोर कर कीन ॥
इह कन्या नृप सोम सुत । दासप्पन पन दीन ॥८६॥
कहो कन्ह तव जैत सम । मंडन संभरि ग्रेह ॥
ज्यां गवरी मिव लच्छि प्रभु । त्यों तन वाढो नेह ॥८७॥
लगन साधि आराधि नृप । पुनि ज्योंनारि जिवाइ ॥
छ रस अंन अंतन लहो । क्यों कवि कहै बनाइ ॥८८॥
अगनि पक्व घृत पवन कर । दूध पक्व वेपार ॥
तेल पक्व लपिये नहीं । जहं तहं लूट अमार ॥८९॥

छंद भुजंगी

रहस्यं रहस्यं अनेकंत भंती । धनं जोति मिष्टांन पानं प्रभंती ॥
उडंदं पुडंदं गुडंदंति मासं । किते अंन प्रंगं किते वीर भासं ॥
किते स्वाद स्वादं प्रथी देव वंछै । तहां केवलं अंनि आवत्त गंछै ॥
मरे एक वारं भ्रितं पंड मद्धी । दिपे स्वाद राजं चलै देव वंधी ॥९०॥
घनं अंमरं टंमरं दिसि प्रमानं । उठै जत्र तीनों सुगंधं निधानं ॥
अंगं अंग अंगं सलच्छन नारी । महा लालचै कंम वसु भी निनारी ॥
हथं लेव राजं सुदंपत्ति वंधे । मनों मिस्स अगें गुरं जित्त संधे ॥
वधें अंचलं संचलं इन प्रकारं । मनों वंधियै मीन मनमथ्थ धारं ॥९१॥
लियो हथ्थ राजं त्रिया हथ्थ सोहै । मनों पेखि सत पत्र कंमोद सोहै ॥
तनं अंग अंवं चरं मालधारी । मनों काम अग्गं जु विद्या पसारी ॥
छितं छिन राजै नरं नाह नारी । मनों जोवनं कांम लज्जा उधारी ॥९२॥
परं पुव्व कथ्थं कथै कव्वि चंदं । रही लजि मानों रत्ति फिरि दून हद्दं ॥
दियं तिलक दछि अछि अछ्छन्न नारं । मनों उग्गि अंकूर मुप सेन भारे ॥
छिंरं फेरनं हथ्थ चहुआन राजै । मनों रत्ति वंध्यौ दई छाप छाजै ॥
गहे एक फेरं भरं अच्छ भारं । तहां वेद मंत्रं दुजं जा उचारं ॥९३॥

॥ कवित्त ॥

सुभत बीर तन तांम । बाल राजै दिसि वामं ॥
मनहु मुत्ति पहिचांन । रत्ति वंधी कर कांमं ॥
अति सोभा सोभई । चंद ओपम तहं वर वर ॥
मनों मकर मकरेस । आय चंपाई अप्प घर ॥
सज्जे सुरत्ति मनमथ्थ वर । कै इंद्रानी इंद्र परि ॥
संप्रति लच्छ लच्छिय सुवर । संपति तन सज्जेउ वर ॥९४॥

॥ दूहा ॥

वर सोभे वर राजपति । लिय दच्छिन हत वांम ॥
मनों व्याह पूरन करे । सुब्रित वीरतम हांम ॥९५ ॥
परनि वीर प्रथिराज वर । वहुत कहै रस जोइ ॥
कवि वर वरनन नां बनै । वर भूषन निन गोइ ॥९६॥

॥ छंद पद्धरी ॥

लज्याति मांन गुन ग्रत्र कटाछ । अलपहति जलप सुलपह सुलाछ ॥
भोंर भर अभय भंय सील नील । सरसाल पिम रस पिम चील ॥
गुंजंत ग्रांम सोभित कुआंरि । तिहि हरत हरनि मनमथ्थ रारि ॥
तन सात नितंबनि तहं प्रमान । वर हूरैं वरनि पिय लटि प्रमान ॥
सित असित सुवृत्त कटाछ बाल । शृंगार मध्य भूषन रसाल ॥
रस हास मध्य शृंगार होइ । संकर सुभाग उप्पनै लोइ ॥९७॥

॥ साटक ॥

कामं जा गढोइ लज्ज गढने भय भ्रत्त भय कोटकं ॥
घूघंट्टं पद डोढि वानति वले ऊधीं सुकागछ रसे ॥
जातिं जात न जाति जोगित वरं भंज मनं विभ्रमं ॥
नां दीसंत गता गतेस सैनं द्रगं चलं निश्चलं ॥९८॥

॥ छंद त्रोटक ॥

वरनं गुरु अच्छिर अंति पयो । इति तोटक छंदय नाग गयो ॥
त्रिय नाग सुवद्दिय वाहनयं । पग पत्ति विपत्ति सुगाहनयं ॥
वरनं वरनं वरनीन कथं । सु चढ्या जनु मेप प्रथंम रथं ॥
प्रग अंचल चंचल बाल ढंके । तिहि कांम विरामन बांन थुके ॥९९॥

नव बास सुनूपुर सद्द गुरं। नृप आगम जाइ वधाइ धरं ॥
गज ज्यौं मनमत्त जंजीर जरी। क्रम निठ्ठल निठ्ठय पाइ भरी ॥
दस पंच सपी नृप पास गई। ति मनों सुप श्रीफल हाथ दई ॥
करुनातिमुची रस भौर सता। श्रम भौ अभिलाप रु ग्रव्व जिता ॥१००॥
नृप पुठ्ठ सुपं अवलोक करे। सु मनों धन रंक विलोकि गुरे ॥
ति कंही न बनै कविचंद कथा। सु लज्जै रसना अरु वोर जथा ॥
सुकछूक कहों दिठि क्रंम क्रंम। सुमनो मनता वरनी न भ्रमं ॥१०१॥

॥ दूहा ॥

ऐन सैन रति मैंन सय। प्रथम समागम बाल ॥
नेह देह दुअ एक हुअ। परे प्रेम रस जाल ॥१०२॥

॥ गाहा ॥

इत्तं सुष्ष गनिज्जै। लज्जीजै जोहयौ कव्वी ॥
ज्यों वारिज वियनं मर्फं। सुभ्कै ना यहि गरुआयं ॥१०३॥
मूलं वर मकरंदं। विजो पुर पाई सुंदरी वीयं ॥
मालचि दंपंति वास। चहुआनं वीरयौ पत्ती ॥१०४॥
जं भ्रम भ्रमैति चित्तं। आवै नठ्ठेय ग्यांनयं चितयं ॥
जं भ्रमि भ्रमि सह रूपं। अवलोकं इछनी करियं ॥१०५॥
इक्क जगो विस वाले। काम मयंक पयौ द्रिगयं ॥
जानिज्जै गत्त सैसं। नैंनायं जोग व सनायं ॥१०६॥
उअर उरोजति सद्धे। वुद्धी बालाय दिठ्ठयौ नैनं ॥
कुच तुच्छ अंकुर उट्ठे। मनों श्रीउम विभ्राव हीयौ चढयं ॥१०७॥

॥ चौपाई ॥

नैंननि प्रथम प्रमांनिय पुव्व। सेवालय रोमावलि रुव्व ॥
अग्यानय जोवनति कुंआर। अब जांन्यौ सैसव चलि भार ॥१०८॥
इहिविधि मत्त गत्त भय रजनी। बाललता बल्हभ गहि सजनी ॥
यों डग डगमग सुंदरि विरुझाई। ज्यों वेलिय अवलंब लहाई ॥१०९॥

॥ दूहा ॥

पांवारी प्रथिराज वर। पुनि जनवांसे जाइ ॥
एक सहस हय हथ्थि वर। दीने तुरत लुटाइ ॥११०॥

महलनि सालनि महल मंडि । दासी सालनि गांन ॥
मंडप मंडित वेद धुनि । सुभटन सोभ समांन ॥४३॥
जहां तहां आनंद उमग । अनँग उछाह अनंत ॥
वंस छत्तीस छत्रीन छह । भाट विरद्द भनंत ॥४४॥

॥ छंद मोतीदांम ॥

गहने नग जोतिन हीरन लाल । पटंमर पूर झरप्पिय झाल ॥
मनि मांनिक मोतिन हीरनि हार । भगीरथ भंति हिमग्गिरि धार ॥
रितं रित भूषन भांति अनेक । धरे धन पंतिय आनि धनेक ॥
रँगं रंग बारनि बारनि बार । धरे नवला नप भूपन भार ॥
तिते सब संचि सवारिस ओप । झलंमल झालन ढालन नोप ॥
सकुंकम कूएन वंदिन पोति । सुहाग सुमंगल अष्टन होत ॥४५॥

॥ दूहा ॥

अष्ट मंगलिक अष्ट सिध । नवनिध रत्न अपार ॥
पाटंबर अंमर वसन । दिवस न सुभझहि तार ॥४६॥
फिरिय चार करि फिरिय सब । भोजन कारन बोलि ॥
भाव भगति आदर अमित । देव पूजि सम तोलि ॥४७॥
जनवासें पधराइ वर । वरी सिंगार अरंभ ॥
जुरि जुव्वन सुर सुंदरी । जे रस जांनत डिंभ ॥४८॥

॥ छंद त्रोटक ॥

विन वस्तर अंग सुरंग रसी । सुहलै जनुसाप मदंन कसी ॥
लव लोनइ लोइ उवट्टनकौं । कि वस्यौ मनु कांम सुपट्टन कों ॥
द्रिग फुल्लिय कांम विरांमन कें । उघरे मकरंद उदै दिन कें ॥
विन कंचुकि अंग सुरंग परी । सुकली जनु चंपक हेम भरी ॥४९॥
सुभई लट चंचल नीर भरी । तिनकी उपमा कवि दिव्य धरी ॥
तिन सों लगि कें जल बूंद ढरै । सुछुटै मनु तारक राह करै ॥
जु कछू उपमा उपजी दुसरी । मनों माटय स्यांम सुमुत्ति धरी ॥
अति चंचल ह्वै त्रिछुटै सुपतं । मनों राह ससी सिसुता वपतं ॥५०॥
सुमनों सति स्वात असुत्त इयं । तिनकी उपमा वरनी न हियं ॥
कवहूँ गहि सुत्त सिपंड वरें । मनों नंपत केसन सिंदु सरें ॥
जु सितं सित नीर लिलाट धसें । सुमनों भिदि सोमहि गंग लसें ॥

जल में भिजि मूंह कला दुसरी । सु लरै मनु बाल अलीन परी ॥
बुधि चित्त उपंम कितीक कहौ । जिन पाट अमै व्रत वेद लहौ ॥५१॥

॥ दूहा ॥

मयति मत्त अस्नान करि । सुभ दंपति दिन सोधि ॥
चाहुआंन इंछिनि बरन । मयन रीति अवरोधि ॥५२॥
करि मंजन अंगोछि तन । धूप वासि बहु अंग ॥
मनों देह जनु नेह फुलि । हेम मोज जन गंग ॥५३॥
तन चंपक कुंदन मनों । कै केसर रंग जुक्ति ॥
पीय बास छबि छीन लिय । और छीन सब जुक्ति ॥५४॥
अंग अंग आनंद उमगि । उफनत बेंनन मांझ ॥
सषी सोभ सब बसि भई । मनों कि फूली सांझ ॥५५॥
निरपत नागिनि बसि भई । किन्नर जष्ष कितेक ॥
सब सोभा ससि सांनि कै । सांची इंछिछिन एक ॥५६॥
प्राग माघ अस्नान किय । गज गंजे घन घाइ ॥
विश्वनाथ सेए सदा । पृथीराज तो पाइ ॥५७॥

॥ कवित्त ॥

कमल भाल जनु बाल । मकर कर मंडि इंछिनिय ॥
निरषि नेंन प्रतिबिंब । करहि निवछार निछिनिय ॥
प्रमुदित अगनि अनंग । कोक कूकन उच्चरत ॥
एक रमन रस रंग । बात बातन मुच्चारत ॥
गंधम्रर वस्त्र गहनै करनि । हास भास मंडीर रिय ॥
तिन मध्य पवारी पिष्पियै । जनु विधिना अप्पन घरिय ॥५८॥
श्रवननि लगत कटाच्छ । जनु पवन दीपक अंदोलति ॥
मुसकनि विकसत फूल । मधुर बरसति मुप बोलति ॥
इठलति अलसति लसति । सुरति सागर उद्धारति ॥
रति रंभा गिरजादि । पिष्पि तां तन मन हारति ॥
तिह अंग अंग छवि उक्ति बहु । छंद बंध चंदहु कहिय ॥
जीरंन जुग्ग महि अजर इह । कल एक कीरति रहिय ॥५९॥
कमल विमल लज्जा सुगंध । बाल त्रिस माल उर ॥
भूपन सोभ सुभंत । मनों सिगार सुचिर धर ॥

भूपन सोभ सुभंत। मनों सिंगार सुचिर धर।
अलप जलप रति मंद। चंद वारुनि कुल ताअनि॥
सो इंछिनि पामार। राज ललिय अति सारनि॥
सत च्यारि वरष वरनि सुंदरिय। सुर विसाल गावत गरज॥
चहुँआंन सुअन सोमेस कहि। विधि सगपन साइं अरज॥६०॥

॥ छंद मोतीदाम ॥

सजे पट दून अभूपन वाल। मनों रति माल विसालति लाल॥
धर्‌यौ तन वस्त्र सुकोर कुआँरि। मंडी जनु सिंभ मनंमथ रारि॥६१॥

॥ छंद कंठाभूपना ॥

इक गावही रस सरस रस भरि विमल सुंदर राजही॥
मनों वृंद उडगन राति राका सोम पाँति विराजही॥
इक त्रित्त रंगन कांम अंगन अजस लज्ज कि सुंदरी॥
मनों दीप दीपक माल वालय राज राजन उच्चरी॥६२॥
सुभ सरल बांनिय मधुर ठांनिय चित्त भंजय जोगयं॥
दृग निरपि निरपि कटाच्छ लग्गहि जुक्त रंभन भोगयं॥
अलि रूप नयनं मनहु वयनं चलिहि तिप्पि कटाप्पयं॥
छुट्टंत निकरहि वार पारह करत तकि तनतच्छयं॥६३॥

॥ कवित्त ॥

विधि विवाह दुज करिय। करिय तन अंग वाम जन॥
निरपि नयन मुप कंति। भयौ रोमंच सव्व्र तन॥
फुलिग नयन मुप वयन। भयौ आरूढ़ कांम मन॥
चित वसीकरन समह। भयौ आनंद सव्व्र तन॥
अभिलाप मिलन हित हिलन मन। का कविंद कवितह करै॥
प्रथमह समागम मिलन कों। वहुत अडंवर विस्तरै॥६४॥

॥ दूहा ॥

सोंधा सुगंध घन डंमरी। सुमन सुदिप्ट पसार॥
धूप अडंमर धुंधरिय। झल मल जल समदार॥६५॥

॥ छंद पद्धरी ॥

वरवग्ग मग्ग चिहुँ दिसा दिप्पि। जहाँ तहाँति सुमन अति वैठि पिप्पि॥
कच मग्ग भूमि चिहुकोद गस्सि। नारिंग सुमन दारिम विगस्सि॥

प्रतिबिंब तास दिष्पिय सरूप। उप्पंम एम जंपै अनूप ॥
नव बधू अंग नवजल प्रवेस। मुसकंत दंत दिष्पिय सुदेस ॥६६॥
प्रतिबिंब चंप देपे फुलीन। दीपक्क माल मनमथ्थ दीन ॥
उप्पंम और उर एक लग्गि। संजीव मूरि जनु जोति जग्गि ॥
हल हलै लता कछु मंद वाय। नव बधू केलि भय कंप पाय ॥
उपमां उर कवि कहीय तांम। जुव्वन तरंग अंगि अंगि कांम ॥६७॥
पाटांन दिष्पि चकचौंधि होइ। ससि परह उठ्ठि घन घटा दोइ ॥
सुभ भाग सरल सूधी सुबानि। ससि क्रन्न चली घन छेकि जांनि ॥
फुल्ले सुगंध के वरनि फूल। देपंत बग्ग पावस्स भूल ॥
घन वर अनंद अग्गें निसब्ब। जनु रंक इच्छ पासै सुदब्ब ॥६८॥
नल नलनि नीरू चहवचनि उद्धि। धर धार गंग जनु उठि बिरुद्धि
बिट बिटनि वेलि झुलि वेल फूलि। जनु काम ग्रह बाग तर छत्र झूलि ॥
कदलीन पत्र हलि पवन जोर। जनु करत पपा नृप पिथ्थ ओर ॥
निरतंत केक केकीन संग। पावसह जानि गिर रमत रंग ॥६९॥

॥ दूहा ॥

नंदन वन वैकुंठ जनु। इंद्र लोग सुर बाग ॥
वृंदावन भूलोग जनु। सोभा सुभग सुभाग ॥७०॥

॥ गाहा ॥

तिहि थांनं रजि राजं। उत्तरियं बीर सा साजं ॥
सब संबल वित्थानं। जांनं वुड्ढाइं बीजयौ चंदं ॥७१ ॥

॥ कवित्त ॥

कै केंद्री गुर राज। भांन सत्तम अधिकारी ॥
भांन नवम पृथिराज। राह अष्टम अधिकारी ॥
वर वज्जी नीसांन। बंदि लीनं नृप राजं ॥
प्रीय त्रिया हित बंध। सोई इंछिनि वर पाजं ॥
त्रियांह तात अरु बाल सह। उच्चरें मुप इंछिनि सुनहि ॥
धनि धन्नि गवरि पूजा लह्यौ। सुवर सुवर सुंदर समहि ॥७२॥
ब्रह्म वेद अद्धइय। अग्नि होतय वर राजय ॥
स्वाहा अगनि विवांह। रत्ति कामह गुन गाजय ॥
दुहिति नाम दुहु रिप्प। दुहुति परहं दुंहुं गोती ॥

राजं गुरु उच्चरै । सलप चहुँआन सकोती ॥
अंनेक भाव दिष्पहि सुदिव । दिव दिवांन दुंदुभि वजइ ॥
प्रथिराज राज राजन सुवर । तिहित लपै रतिपति लजइ ॥७३॥
कुंदन ओपति अंग । मंग जनु चंद किरनि सिर ॥
वैनी सुभग भुजंग । फूल मनि सीस मीस थिर ॥
पट्टिय घुंटित मेंन । तिमिर कज्जल छवि छीनिय ॥
भुअजुग गोस धनुष्प । वदन राका रुचि भीनिय ॥
सुक नास नेंत फूले कमल । कंवु कंठ कोकिल कलक ॥
दुल्लह सुचित्त फंदन मनहु । फंद मंडि रप्पिय अलक ॥७४॥

॥ दूहा ॥

फुनि पंडित मंडप मंडिय । वेद पाठ आधार ॥
षट करमी सरमी अनिध । गुर संगह गुर भार ॥७५॥
तिन दूलह मंडप वुलिय । हम सत घमस निसांन ॥
जनु वद्दल व्रज क्रिस्न पर । सुरपति वहुरि ऋपि रिमांन ॥७६॥
देषि सोभ प्रथिराज त्रिय । वारत राई नोंन ॥
हर्ष हास मुप चप उदित । जनु कमल विकस रवि भोंन ॥७७॥

॥ कवित्त ॥

देसन देस नरेस । भेस अमरेस अमर भति ॥
साल सत्त गुनवंत । दांन पग कहन कोंन मति ॥
जरकस पसम जराउ । गंध रस सरस अमीवर ॥
तेजवंत उद्दार । वडम विवाहर ग्रंथ भर ॥
मंडप्प जांन दुअ दिसि मिलत । हास तर्क जान न गन्यौ ॥
दीपति नगनि निसि दीह भय । वर दाई दिव वर मन्यौ ॥७८॥

॥ दूहा ॥

साल अटा जालिन गवप । त्रिप्पत नव रनिवास ॥
छत्र छाह छवि करत जित । भमर मत रस वास ॥७९॥
नग माती गहने अगन । गिरत न सुद्धि सम्हार ॥
कांम लहरि छवि छोल उठि । दुति दरियाव वेपार ॥८०॥
मंगल गावत भुंमकनि । कोकिल कंठी नारि ॥
सुघर पुरुप जोवन छके । सुनहि सुहाई गारि ॥८१॥

पटां बैठि पट गंठि गुह । पूजे प्रथम गनेस ॥
दुव कुल वारि विचार कर । व्याही बांम नरेस ॥८२॥
ग्रहन पूजि ग्रहदेव पुजि । पूजि अगनि दुज देव ॥
साषोचार उचार धुनि । प्रसन्न भए नृप वेत्र ॥८३॥
चंद सूर तहां साषि दिय । वन्ह ब्राम्हन बुध वाइ ॥
प्रोहित गुर उपदेस करि । बांम अंग तत्र आइ ॥८४॥
पढि संकलप विकलप तजि । भजि भगवति भगवंत ॥
तम सु पाइ परसाद करि । चिर जिओ इंछिन कंत ॥८५॥
अबूपति पट गंठि त्रिय । विनय जोर कर कीन ॥
इह कन्या नृप सोम सुत । दासप्पन पन दीन ॥८६॥
कहो कन्ह तत्र जैत सम । मंडन संभरि ग्रेह ॥
ज्यों गवरी सिव लच्छि प्रभु । त्यों तन बाढौ नेह ॥८७॥
लगन साधि आराधि नृप । पुनि ज्यौंनारि जिवाइ ॥
छ रस अंन अंतन लहो । क्यों कवि कहै बनाइ ॥८८॥
अगनि पक्व घृत पवन कर । दूध पक्व वेपार ॥
तेल पक्व लषियै नहीं । जहं तहं लूट अमार ॥८९॥

छंद भुजंगी

रहस्यं रहस्यं अनेकंत भंती । धनं जोति मिष्टांन पानं प्रभंती ॥
उडंदं पुडंदं गुडंदंति मासं । किते अंन प्रंगं किते बीर भासं ॥
किते स्वाद स्वादं प्रथी देव बंछै । तहां केवलं अंनि आवर्त्त गंछै ॥
मरे एक वारं भ्रितं पंड मद्धी । दिषे स्वाद राजं चलै देव बंधी ॥९०॥
घनं अंमरं डंमरं दिसि प्रमानं । उठै जत्र तीनौं सुगंधं निधानं ॥
अंगं अंग अंगं सलष्षत नारी । महा लालचै कंम बसु भौ निनारी ॥
हथं लेव राजं सुदंपत्ति बंधे । मनों मिस्स अग्गें गुरं जित्त संधे ॥
बधें अंचलं संचलं इन प्रकारं । मनों बंधियै मौंन मनमथ्थ धारं ॥९१॥
लियौ हथ्थ राजं त्रिया हथ्थ सोहै । मनों पैसि सत पत्र कंमोद सोहै ॥
जनं अंग अंबं बरं मालधारी । मनों काम अग्गं जु विद्या पसारी ॥
छितं छित्त राजै नरं नाह नारी । मनों जीवनं कांम लज्जी उधारी ॥९२॥
परं पुव्व कथ्थं कथै कव्वि चंदं । रही लजि मानों रत्ति फिरि दन हदं ॥
दियै तिलक दद्धि अछि अछत्त सारे । मनों उग्गि अंकूर सुप सेन भारे ॥
दिपै कंकनं हथ्थ चहुँआन राजै । मनों रत्ति बंध्यौ दई छाप छाजै ॥
रहै एक ग्रेहं घरी अद्ध भारे । तहां वेद मंत्रं दुजं जा उचारे ॥९३॥

॥ कवित्त ॥

सुभत वीर तन तांम । वाल राजै दिसि वामं ॥
मनहु मुत्ति पहिचांन । रत्ति वंधी कर कामं ॥
अति सोभा सोभई । चंद ओपम तहं वर वर ॥
मनों मकर मकरेस । आय चंपाई अप्प घर ॥
सज्जे सुरत्ति मनमथ्थ वर । कै इंद्रानी इंद्र परि ॥
संप्रति लच्छ लच्छिय सुवर । संपति तन सज्जेउ वर ॥६४॥

॥ दूहा ॥

वर सोभे वर राजपति । लिय दच्छिन हत वांम ॥
मनों व्याह पूरन करै । सुभ्रित वीरतम हांम ॥६५ ॥
परनि वीर प्रथिराज वर । वहुत कहै रस जोइ ॥
कवि वर वरनन नां वनै । वर भूषन तिन गोइ ॥६६॥

॥ छंद पद्धरी ॥

लज्याति मांन गुन भ्रव कटाछ । अलपहति जलप सुलपह सुलाछ ॥
भोंर भर अभय भय सील नील । सरसात पिम रस पिम चील ॥
गुंजंत ग्रांम सोभिल कुआंरि । तिहि हरत हरनि मनमथ्थ रारि ॥
तन सात नितंवनि तहं प्रमान । वर हरैं वरनि पिय लटि प्रमान ॥
सित असित सुवृत्त कटाछ वाल । शृंगार मध्य भूषन रसाल ॥
रस हास मध्य शृंगार होइ । संकर सुभाग उप्पनै लोइ ॥६७॥

॥ साटक ॥

कामं जा गढोइ लज्ज गढने भय भ्रत्त भय कोटकं ॥
घूघंट्ट पद डोढि वानति वले ऊधी सुकागछ रसे ॥
जातिं जात न जाति जोगित वरं भंज मनं विभ्रमं ॥
नां दीसंत गता गतेस सैनं द्रगं चलं निश्चलं ॥६८॥

॥ छंद त्रोटक ॥

वरनं गुरु अच्छिर अंति पयो । इति तोटक छंदय नाग गयौ ॥
त्रिय नाग सुवद्दिय वाहनयं । पग पत्ति विपत्ति सुगाहनयं ॥
वरनं वरनं वरनीन कथं । सु चढ्या जनु मेप प्रथंम रथं ॥
प्रग अंचल चंचल वाल ढंके । तिहि कांम विरामन वांन थुके ।६६॥

नव बास सुनूपुर सद्द गुरं । नृप आगम जाइ बधाइ धरं ॥
गज ज्यौं मनमत्त जंजीर जरी । क्रम निठ्ठत निठ्ठय पाइ भरी ॥
दस पंच सषी नृप पास गई । ति मनों सुप श्रीफल हाथ दई ॥
करुनातिमुची रस भौर सता । श्रम भौ अभिलाप रु अव्व जिता ॥१००॥
नृप पुठ्ठ सुपं अवलोक करै । सु मनों धन रंक विलोकि गुरै ॥
ति कंही न बनै कविचंद कथा । सु लजै रसना अरु बोर जथा ॥
सुकछूक कहों दिठि क्रंम क्रंम । सुमनो मनता बरनी न भ्रमं ॥१०१॥

॥ दूहा ॥

ऐन सैंन रति मैंन सथ । प्रथम समागम बाल ॥
नेह देह दुअ एक हुअ । परे प्रेम रस जाल ॥१०२॥

॥ गाहा ॥

इत्तं सुष्प गनिज्जै । लज्जीजै जोहयौ कव्वी ॥
ज्यों वारिज त्रिपनं मभं । सुभ्भै ना यहि गरुआयं ॥१०३॥
मूलं वर मकरंदं । त्रिजो पुर षाई सुंदरी वीयं ॥
मालचि दंपति वासं । चहुआनं वीरयौ पत्ती ॥१०४॥
जं भ्रम भ्रमैति चित्तं । आवै नठ्ठेय ग्यांनयं चितयं ॥
जं भ्रमि भ्रमि सह रूपं । अवलोकं इछनी करियं ॥१०५॥
इक्क जगो त्रिस वाले । काम मयंक पयौ द्रिगयं ॥
जानिज्जै गम सैसं । नैंनायं जोग व सनायं ॥१०६॥
उअर उरोजति सद्धे । बुद्धी बालाय दिठ्ठयौ नैनं ॥
कुच तुछ अंकुर उट्ठे । मनों प्रीतम विभ्राव हीयौ चढयं ॥१०७॥

॥ चौपाई ॥

नैंननि प्रथम प्रमांनिय पुव्व । सेवालय रोमावलि रुव्व ॥
अग्यानय जोवनति कुंआर । अब जांन्यौ सैसव चलि भार ॥१०८॥
इहिविधि मत्त गत्त भय रजनी । बाल लता वल्हम गहि सजनी ॥
यों डग डगमग सुंदरि विरुझाई । ज्यों वेलिय अवलंब लहाई ॥१०९॥

॥ दूहा ॥

पांवारी प्रथिराज वर । पुनि जनवांसे जाइ ॥
एक सहस हय हथ्थि वर । दीने तुरत लुटाइ ॥११०॥

होत प्रात जग्गिय सलप । भंत्रि अनेक तिभोग ॥
जु कछु देव देवंस मति । सो लभ्भै नहिं लोग ॥१११॥

॥ छंद भुजंगी ॥

सुइंदं सुइंदं सुइंदंति राजं । सुतौ देपियै कोटि कोटेक साजं ॥
लपं लष्य भाइं नटं नट्ट रागं । मनो देपियै यंद ग्रह ग्रहन आगं ॥
जिते तार झंकार नच्चे निनारे । मनों देपियै भांन ससि लष्प तारे ॥
सुभंगं सुतालं मृदंगं वजावै । हहा हूह सुग्गं सुगंधर्व गावै ॥११२॥
घनं पक्क पांनं समानंत नेहं । करै प्रथिराजं अपं अप्प देहं ॥
करै राज राजं सबै व्याह काजं । मनों दिष्पियै राजसूजग्य साजं ॥
परे अग्ग राजं छिती छत्र जोरी । मनों उन्नयौ मेघ आपाढ कोरी ॥
फिरै दास भारी वुलै राग बैनं । मनो नभ्भसो मास कै बीज गैनं ॥११३॥
वजै ग्राम नारी छतीसों सुरागं । मनो बोलयं मोर आपाढ गाजं ॥
वजै घुघ्घरू नारियं रंग भारी । मनों दादुरं जोति मनमथ्थ सारी ॥
रंगे कासमीरं सबै वस्त्रधारी । किधों ब्रहुतं रंग कै ग्रहन गारी ॥
किधों इंद्रबंद्ध चढ़ी नीर धारा । किधों राज वासंत भूपाल वारा ॥११४॥

॥ दूहा ॥

गति त्रिजांम भय प्रातवर । इह मनुहार प्रमांन ॥
वर दिष्पौ चहुआंन नृप । रत्ति काम उनमान ॥११५॥

॥ गाहा ॥

रत्ति काम दुअ दाहं । कै दुःपंकरी कत्तरी वाले ॥
सौ इंछनि पांवारी । लस्भी नृप मुक्तिका रूपं ॥११६॥

॥ छंद हनुफाल ॥

इति मुकति सकति सकोर । जिन लभि न पारस चोर ॥
जिन कांम वांन झकोर । गुन मुदित मुदित्त सथोर ॥
चित मित्त मित्तह जोर । मनों उदय निपत्रन चोर ॥
सुप जुगति भुगति उपाय । का करिहि मुक्ति अभाइ ॥११७॥
सुष करन दिन प्रति जीह । दिन सुकल घरियति ग्रीह ॥
प्रति राज राजन जोर । पावार सलपति ओर ॥
मनुहार मंडित थोर । नृप चलन ग्रेह सजोर ॥
है गैति रथ वर वाजि । नृप दए दांन विराजि ॥११८॥

॥ कवित्त ॥

सहस एक रथ साजि । दासि बिय तिपति इक्क सधि ॥
इक्क इक्क करि सथ्थ । किरनि पंचौ प्रति प्रति बधि ॥
सौ हाथी इह भांति । माल मुत्तिय उतंग बर ॥
लच्छि पटंबर अंग । दए राजिंद राजगुर ॥
इतनौ देत सकुच्यौ नृपति । तौ दिनता चरनन गहिय ॥
प्रथीराज राजन सुबर । सलप फेरि चल्यौ समिय ॥११९॥

॥ दूहा ॥

पंच दिवस च्यारौं बरन । भुजत अंन अपार ॥
छरस अंन छह रितिन सुप । अञ्भूवै आचार ॥१२०॥
पलकि चार अचार करि । समद करी सब सथ्थ ॥
है हथ्थी जरकस बसन । को कवि बरनै कथ्थ ॥१२१॥

॥ छंद पद्धरी ॥

पहिराइ राइ पावार सथ्थ । नह बुद्धि बरन बर विविध कथ्थ ॥
इक करी सत्त हय सोम राइ । अैराक जाति जे पवन पाइ ॥
सिर-पात्र पंच जरकस पसंम । सूतरू पोत रेसम नरंम ॥
सोइ विदा कीन दूलह बनाइ । जमदार सोंपि संभरि गनाइ ॥१२२॥
कलधूत कलस दस गढ़ित हथ्थ । इक उंच कुंडि जल न्हांन सथ्थ ॥
दस थार कनक प्रतिबिंब सूर । बाटका बीस बिन्न अमुत नूर ॥
ता सक्क पंच दुव मनह थार । बाजौठ एक हिम जटित लाल ॥
पालकनि हेम रेसम निवारि । अनि ठांम नंन्ह को लहै सार ॥१२३॥
कठलोंनि वीस सोवन मटाइ । पल्लांन ऊच दावन चढ़ाइ ॥
मन वीस पंच इह सोंज अब्ब । जिन कोय करौ छित्रीस मंब्ब ॥
दुअ हथ्थि साजि माझे जिजीर । रूपेन साज सज्जे वजीर ॥
हंडवाइ वीस मन साजु सुद्ध । उज्जल रज रज्जक जनु उफनि दूध ॥१२४॥
दस सहस हेम दासीन संग । तिन देपि रंग रँभ होत भंग ॥
सामंत सत्त इक रस्स अग्ग । पहराह तिनह नृप नमिय पग्ग ॥
इक तुरी जात अैराक थांन । अग्गीय अंग पग पवन मांन ॥
इक इक्क चतुअ मालाति इक । मुद्रकी इक इन पुहचि किक्क ॥१२५॥

सिर-पाव उंच जरकस अनूप। तिन दिष्पि होत हैरांन भूप ॥
बंभन वनंक कायथ्थ संग। पसवांन लोग जे रपिक अंग ॥
लघु दिघ्घ और असवार पाल। करि सुमन सव्व अच्चू भुआल ॥
पंच सै सोम रनिवास नांम। रेसंम सूत गनि पंच ठांम ॥१२६॥
सब हर्ष सहित समदे नरेस। सजि चले सुभट सब अप्प देस ॥
इंछनिय मद्धि पिथ वैठ ढाल। गज गाह घुरें दुहुँ अंग भाल ॥१२७॥

॥ दूहा ॥

चल्यौ व्याहि संभरि धनी। मंगन भए निहाल ॥
पुहचावन घन संग भए। नृपगुन चवें रसाल ॥१२८॥

पंच कोस परथिथ्थ कहु। विदा मंगि अबु ईस ॥
ओर देन तुम सोंभ कह। वांम तुम्हें हम सीस ॥१२९॥

नवमि मंडि वहुरे घरह। वे सज्जे अप देस ॥
नृपति व्याह दुअ रस रह्यौ। हिम गिरि जांनि महेस ॥१३०॥

आरिज आरिज सलप तें। इंछनि इछ्छा पूरि ॥
भुअ मंडल मंडित दिनह। सिर दधि अच्छित जूर ॥१३१॥

चलन राज प्रथिराज वर। बरनि पत्त वर राज ॥
मद्धि अमोलक सुंदरी। डोला सठ्ठित साज ॥१३२॥

यौं आयौ नृप ग्रेह बर। सुनि अवाज त्रिय कांन ॥
मानौं बीर दुहाइयां। कांमहि नंपन वांन ॥१३३॥

॥ कवित्त ॥

सोमेसर संभरिय। राज आवत्त प्रथिराजह ॥
है गै रंभ सुसाज। इंद चल्ल्यौ लप साजह ॥
कोटि कोटि मनु इंद। इंद दिप्पो इंदासन ॥
एक एक दंपतिय। वरह वंधै विधि साजन ॥
दुज मान वेद मंगल त्रियह। मुत्ति अछित वंदहि सुबर ॥
नृप मौर मुष्प मुत्तिय लगहि। सो ओपम कविराज धर ॥१३४॥

॥ अरिल्ल ॥

लगत मुत्ति अच्छित्त सु नृपती मुप वरं।
मनों भान उनग्रेह सुतारक ऊवरं ॥

मिलि सो फिरि चलहि ससि गन मांन कों।
मांनहु लपट्टै जांनि सु आनैं आंनकों ॥१३५॥

॥ दूहा ॥

बंदि लियौ बरनी सुबर। त्रिया हेत लजि गांन ॥
मांनों वैसंध सुंदरी। चलत समप्पत दांन ॥१३६॥
बहुरि सुकी सुक सों कहै। अंग अंग दुति देह ॥
इंछनि अंछ वषांनि कैं। मोहि सुनावहु एह ॥१३७॥

॥ छंद हनूफाल ॥

धन धवल गावहि बाल। मनमथ्थ तिथ्थ त्रिसाल ॥
बहु फुल्लि केवर फूलि। बग बैठि पावस भूलि ॥
धन धवल दै मनमथ्थ। आनंद अंगनि सथ्थ ॥
जनु रंक पाये दब्ब। नल नलन नीर चहब्ब ॥१३८॥
धर धार गंग कि उठ्ठि। फिर नम्भ परसि अपुठ्ठि ॥
वट बिटप वेलिय झुल्लि। ग्रिह वाग तरु छत्र झुल्लि ॥
नृप परनि पुत्रि पवार। जनु जुब्बन सैसुव रारि ॥
इह रूप राजित देव। इन्द्र इन्द्रनी अहमेव ॥१३९॥
सोइ सलष राज कुंआरि। नृप लसी ब्रह्म सवांरि ॥
लछि लच्छि पूर सहज्ज। ब्रत नाथ ब्रत करि कज्ज ॥
कविराज ओप प्रकारु। आवै न कोटि बिचारु ॥
सिप नष्प ब्रंन सुरत्त। किम करय मंद सुमत्त ॥१४०॥
जगि रंग जोवन गौर। वै स्यांम राजत और ॥
बनि केस देस सुवेस। कवि कहत उप्पम तेस ॥
चढि मेर नागिन नंद। ससि गहत संमुप फंद ॥१४१॥
उपम्म कवि कहि वाम। जुब्बन तरंग अंगि कांम ॥
पाटोय चक्कचुंधि होइ। सिसि परह उठि घट दोइ ॥
लिल्लाट आउ प्रकार। मनमथ्थ अंगन प्यार ॥
तिन मद्धि मुत्ति तिलक्क। कवि कहत ओपम थक्क ॥१४२॥
हरि कठिन गंगय मांन। ससि भेद ग्रस चलि जांन ॥
कविराज ओपम दीय। दछि पुत्रि ससि मिलि हीय ॥
तिन मध्य म्रगमद व्यंद। कवि जंपि उप्पम छंद ॥
ससि उड़त मद्धि कलंक। हरु अत्त अंकह अंक ॥१४३॥

लंछिन्न हरि तन ताह । ससि थांन बैठो राह ॥
अति हलत चपलह भौंह । कवि कहत उप्पम सौंह ॥
ससि धरत ज़ूप सु अंन । तिहि चलित चक्रित नैंन ॥
मन धरत उप्पम आंन । अमि संधि अलि सुन जांन ॥१४४॥

वर बाल नैंन झकोर । ग्रह जियन बातह जोर ॥
जिम भए भोंरह चोर । मैं भरैं धाम झकोर ॥
इक कही ओपम चाइ । पंजन कि उडि फल पाइ ॥
जनु बाग छुट्टिय अंन । तिम होत चक्रित नैंन ॥१४५॥

सित असित अंन उचार । मनों राह तारक चार ॥
तिन मझि सौभै रत्त । विधि धरिय मंगल्ल गत्त ॥
रसवास नासिक नीय । तिल पुहप चंपक दीय ॥
मनों लज्जि मंजरि मध्य । कल प्रगटि दीपक सध्य ॥१४६॥

नव रुलत मुत्तिय नास । तसु किंच ओपम भास ॥
रस ग्रहन अंमृत चाइ । तप करै ऊरध पाइ ॥
मुप कीर सौमित जोस । जनु चुनत कनव्रत ओस ॥
जगिनीय पुर मन रज्जि । कवि कही उप्पम सज्जि ॥१४७॥

अध अधर रत्त सुरंग । ससि वीय रंग तरंग ॥
उत्तंग रंग सुभाल । जनु फुलि कमुदिनि ताल ॥
कै पक्क विंव संभाल । सुक डसिय ग्रसिय न आल ॥
तिन मध्य दंतन कंत । जनु वज्र राजत पंत ॥१४८॥

फुनि कही ओपम साज । सुन स्वाति सीपय राज ॥
सति इक्क ओपन अछ्छ । वत्तेस लछ्छन लछ्छ ॥
इक अलक सुम्मत मुप्प । कवि कहत ओपम सुप्प ॥
ससि मुक्कि मधुरय अंक । वर भजत विभय कलंक ॥१४९॥

जनु जनम धारा रेप । कै मिल नगी चलि सेप ॥
कल ग्रीव रेप त्रिवल्लि । कवि राज ओपम भल्लि ॥
ससि मिलत पुव्वय वैर । गुरदेव सेव सुसैर ॥
गर पोति जोति विचारि । ससि चरन फंदय डारि ॥१५०॥

ससि समर दंद प्रमांन । जिति राह बैठो थांन ॥
कै सप श्रीवर जांनि । कर अंगुलि इक थांन ॥

कालंक दिठवन जौर। कवि इक्क उप्पम दौरि ॥
जनु कमल कोर प्रकार। सिसु भ्रंग बैठे बारं ॥१५१॥

रस सरस कुच कहि चंद। उर उकिर आनंद कंद ॥
ससि वदन्न मद्दन सु जोर। चित रहै चांहि चकोर ॥
कलिकाकि कंज अनूप। उर उदित रवनिय रूप ॥
करि कलभ कुंभ प्रमांन। छवि स्यांम रंग सुदांन ॥१५२॥

गुन गंठि मुत्तिय माल। कुच परस कंत विसाल ॥
त्रिय सिंभ सीस कि चंग। चढि चलिय गंग सुरंग ॥
नव रोम राजिय राजि। कही कवी ओपम साजि ॥
मनों नाभि कूप प्रमांन। भरि भूरि अंमृत थांन ॥१५३॥

अंमृत्त आवहि जाहि। पप्पील रंगहि चाहि ॥
उर उदित सुभगय बाल। आनंग रस ससि बाल ॥
जनु लछ्छि क्रीडे ताल। हिम फाव लग्गि रसाल ॥
सुभ निरषि त्रिवली तेह। कवि चंद ओपम एह ॥१५४॥

वय सिसु मिलनह बाल। सिढि मंडि कांम विसाल ॥
रिपु उभै सुम्मिय आंनि। छवि लंघि लंक प्रमांन ॥
नित्तंब उत्तंग रज्जि। मनमथ्थ चक्र विसज्जि ॥
पैरंग पिंडिय ढार। सित सीत उष्न तुसार ॥१५५॥

नव रंभ गति विपरीत। छवि पंभ देवल जीत ॥
गज सुंड सुलप सरूप। मनों कुंद कुंदन भूप ॥
किधौं करम कोर प्रकार। तिन मद्धि उतरत ढार ॥
मनों मीन चित्रत देह। छवि छरत पिडुर एह ॥१५६॥

घन घुंमि घुघ्घर हेम। कवि कहो ओपम एक ॥
मनो कमल सौरभ काज। प्रति प्रीत भमर विराज ॥
कह कहों अंग सुरंग। रति भूलि देपि अनंग ॥
लषि लछ्छि पूर सहज्ज। चित्त वृत्त मांनो रज्ज ॥१५७॥

सो सलप राज कुंआर। नृप लही ब्रह्म सचार ॥
इन लछ्छि इछनिय रूप। कुल वधू लछ्छिन भूप ॥
रति रूप रमनिय रज्जि। छवि सरल दुति तन सज्जि ॥
रसि रसित रंगह राज। तिह रमन हुअ प्रथिराज ॥१५८॥

॥ कवित्त ॥

नयन सुकज्जल रेप। तप्पि तिष्पन छवि कारिय॥
श्रवनन सहज कटाछ। चित्त कर्षन नर नारिय॥
भुज मृनाल कर कमल। उरज अंबुज कल्लिय कल॥
जंघ रंभ कटि सिंघ। गमन दुति हंस करी छल॥
देव अरु जष्पि नागिनि नरिय। गरहि गर्व दिष्पत नयन॥
इंछिनी इष्पि लज्जा सहज। कितक सक्ति कव्विय वयन॥१५९॥
दर्पन दल नप जोति। सुरग महदी मुचि रूरिय॥
एंडी इंगुर रंग। उपम ओपियै सु संचिय॥
सो तिन सकल सुहाग। भाग जावक तल वंधिय॥
विकसित अंग अंग अंग। चारु मुसकनि वै संधिय॥
दिष्पंत नैंन दंपति कनहि। हर्ष सोभ वर्षत अकल॥
रति कांम कांम गहि गछनिय। और उप्पम लुट्टिय सकल॥१६०॥
जेहरि नूपुर नद। सद घूघर कोतूहल॥
विछिय निसद निसाल। सद्द झिंगुर कल कूहल॥
अगुठनि जटित अनोट। पोंट कुंदन नग मंडित॥
निरषत द्रप्पन नैन। वदन वीरी रद पंडित॥
हाव अरु भाव संभ्रम विभ्रम। वड पुन्य करि प्रभु पिथ्थ लहि॥
इंछनिय इच्छ अच्छर अवनि। सुनिय सोभ ससि कव्वि कहि॥१६१॥
जरकस घुघर घमंड। जांनु रवि क्रिन्न कदलि ग्रह॥
कसुंभ लरे नीसार। रंग छवि छंडि हंड हर॥
पीत कंचकी संचि। पंडि कस अंग उपट्टिय॥
कंकन कर वर वरत। गंध हरदीय उपट्टिय॥
आलोल नैंन गति वचन वहु। सपिन सोभ मंडिय तनह॥
फुल्ली सु सांझ कवि चंद कहि। मनहु चोजु थरकी वनह॥१६२॥

॥ दूहा ॥

सुनत कथा अछि वत्तरी। गइ रत्तरी विहाइ॥
दुज्ज कही दुजि संभरिय। जिमि सुप श्रवन सुहाइ॥१६३॥
आरिजु आरि जस लपहीं। सो इंछिनि इछ्छा पूर॥
भुव मंडल मंडित दिनह। सिर दधि अछ्छित जूर॥१६४॥

शशिव्रता विवाह प्रस्ताव

पुच्छ कथा सुक कहौ । समह गंध्रवी सुप्रेमहि ॥
स्रवन मंमि संजोगि । राज सम धरी सुनेमहिं ॥
इम चितिय मन मज्झि । (चित्र सख गंध्रव ईसह) ॥
(कै) करो पति जुग्गनि ईसह । ईस पुज्जै सु जग्गीसह ॥
शुक चिंति बाल अति लघु सुनत । ततविन विस उपजै तिहि ॥
देव सभा न जदुव त्रपति । नालकेर दुज अनुसरहि ॥१॥
नालकेर दुज गहिय । द्वार जैजंद गयो बपु ॥
करी पव्वर हे जमह । अप्प अंदर बुलाइ त्रप ॥
नालकेर दुज आनि । कह्यो राजन अव धारी ॥
देव सु गिरि त्रिप भ्रात । पुंज ससिवृत्त कुमारी ॥
सो दइय बंध नृप वीर कहु । लगन मास दिन पंच वर ॥
सुनि श्रवन एह गंध्रव्व कथ । चल्यौ सु दच्छिन देव धर ॥२॥

॥ दूहा ॥

चल्यौ सु दच्छिन देव गिरि । जहां शशिवृत्त कुमारि ॥
विपन मद्धि क्रीड़ा करन । समह बाल चितचारि ॥३॥

॥ कवित्त ॥

हेम हंस तन धरिय । विपन मद्धे विश्राम लिय ॥
दिष्ष तास शशिव्रत । अतिहि अचरिज्ज मानि जिय ॥
बल कर गहिय सु तत्थ । हत्थ लै करि तिहि पुच्छिय ॥
कवन देव तुम थान । कवन माया तन अच्छिय ॥
उच्चर्यौ हंस ससिव्रत सम । मति प्रधान गन्धर्व हम ॥
सुरराज काज आए करन । तीन लोक हम वाल गम ॥४॥

॥ कवित्त ॥

कहै बाल सुनि हंस । कवन हम पुव्व जम्म कह ॥
कवन पत्ति हम लहँहि । लेप विच्चार लहो इह ॥
तवै हंस उच्चर्यौ । सुनहि शशिवृत्ता नारी ॥
चित्ररेप अपछरि । सगीन अति रूप धरारी ॥

तिहि गरव इन्द्र सम कलह करि । क्रोध देववंडी सुरम ॥
दच्छिन नरेस नृप तान बँधु । पुंज ग्रहै अवतार सुम ॥५॥

॥ चौपाई ॥

कहै हंस सुनि वाल विचारी । पंग बधुर वीर सु पुत्तारी ॥
तिहि तु दई मातु पितु बंधं । सो तुम जोग नहीं वर कंधं ॥६॥
तेम रहै वर वरण इक्क महि । हय गय अनत भुभिक्ष है समतहि ॥
तिहि चार करि तुमहि आयौ । करि करुना यह इन्द्र पठायौ ॥७॥
तव उच्चरिय वाल सम तेहं । तुम माता सम पिता सनेहं ॥
मुभक्ष सहाय अवरि को करिहौ । पानि ग्रहन तुम चित अनुहरिहौ ॥८॥

॥ चौपाई ॥

तव बोल्यो दुजराज विचारं । सुनि ससिवृत्त कत्थ इक सारं ॥
दिल्लीवै चहुवान महा भर । सो तुम जोग चिन्तयौ हम वर ॥९॥
सत सामंत सूर वलकारी । तिन सम जुद्ध सु देव विचारी ॥
जिन गहियौ सव वर गज्जनवै । हय गय मंडि छंडि पुनि हिय वै ॥१०॥
गुज्जरवै चालुक्क भीमतर । ते दिन राति डरै जंगल धर ॥
वरन जोग तुम तेह विचारं । सुनि की सुंदरि हरप अपारं ॥११॥
तहाँ तुम पिता कृपा करि जाउ । दिल्लीवै अनुराग उपाउ ॥
मांस पटह हों वृत्तह मंडों । तथ्थु ना आवै तौ तन छंडों ॥१२॥
तव उड़ि चल्यौ देह दिस उत्तरि । ढिग ससिव्रत रष्पि निज सुंदरि ॥
जुग्गिनि पुर आयो दुजराजं । सोवन देह नगं नगं साजं ॥१३॥

॥ कवित्त ॥

जय किसोर प्रथिराज । रम्य हा रम्य प्रकारं ॥
सेत पष्य विय चंद । कला उद्दित तन मारं ॥
विपन मध्य चहुआंन । हंस दिष्यौ अप अष्पिय ॥
चरन मग्ग दुति होत । हेम पछ्छी विय लष्पिय ॥
आचिज्ज देपि प्रथिराज वर । धाइ नृपति वर कर गहिय ॥
आपुव्व दुज्ज गति दूत कथ । रहसि राज सों सव कहिय ॥१४॥

॥ दूहा ॥

विपन मध्य आचिज्ज इह । दिष्पि राज प्रथिराज ॥
धूत दूत कलधौत तन । हंस सरूप विराज ॥१५॥

संझ सपत्तौ न्रपति पै । दूत सु जद्दव राइ ॥
वर कग्गद न्रप हथ्थ दै । कहि श्रोतान बधाइ ॥१६॥
राका अरु सूरज्ज विच । उदै अस्त दुहु वेर ॥
वर शशिवृत्ता सोभई । मनो शृंगार सुमेर ॥१७॥
इन वै इन रूपह तरुनि । इन गुन आवै मान ॥
सो वर बर कविचंद कहि । सुनहु तो कहूँ प्रमान ॥१८॥

॥ त्रोटक ॥

वय संधिरु बाल प्रमान त्रनं । कहि त्रोटक छंद प्रमान सुनं ॥
वय स्यांसऽरु शैशव अंकुरयं । अह अंत निसागम संकरयं ॥१६॥

॥ त्रोटक ॥

जल सैसव मुद्ध समान भयं । रवि बाल बहिक्रम लै अथयं ॥
वर सैसव जोवन संधि अती । सु मिलें जनु पित्तह बाल जती ॥२०॥
जु रही लगि सैसव जुब्बनता । सु मनों ससि रंतन राज हिता ॥
जु चलै मुरि मारुत भंकुरिता । सु भनों मुरवेस मुरी मुरिता ॥२१ ॥
कलकंठ सु कंठय पंप अली । गुन जंपि कवित्त सु चंद बली ॥२२॥

॥ कवित्त ॥

ससिर अंत आवन वसंत । बालह सैसव गम ॥
अलिन पंप कोकिल सुकंठ । सजि गुंड मिलत भ्रम ॥
मुर मारुत मुरि चले । मुरे मुरि वैस प्रमानं ॥
तुच्छ कोंपर सिस फुट्टि । आन किस्सोर रँगानं ॥
लीनी न अमि नक स्यांम नन । मधुर मधुर धुनि धुनि करिय ॥
जानी न वयन आवन वसत । अग्याता जोव्वन अरिय ॥२३॥

॥ कवित्त ॥

पत्त पुरातन झरिग । पत्त अंकुरिय उट्ठ तुच्छ ॥
ज्यों सैसव उत्तरिय । चढ़िय वैसव किसोर कुछ ॥
शीतल मंद सुगंध । आइ रिति राज अचानं ॥
रोमराइ सँग कुच नितंव । तुच्छं सरसानं ॥
यद्दै न मीत कटि छीन है । लज्ज मांन टंकनि फिरै ॥
ढंकै न पत्त ढंकै कहै । वन वसंत मन्त जु करै ॥२४॥

॥ दूहा ॥

श्रवनन भव श्रोतान नृप । मन वंछै चहुआन ॥
मनु ससिवृत्त कुंआरि कौ । पर्‌यौ उरद्धर वान ॥२५॥

॥ कवित्त ॥

निसि नरिंद चहुआन । चित्त मनोरत्थ विचारै ॥
भई दीह सब निशा । निशा सयनंतर धारै ॥
सयनंतर ससिवृत्त । चाटु चटु वैन उचारै ॥
चारु चारु बर बयन । मान मानिनि संभारै ॥
दैवान मनोरथ चित्त वर । भव भव छन्नन कह करै ॥
भौ प्रात दूत पुच्छै नृपति । जहोवै चित्तै धरै ॥२६॥

॥ दूहा ॥

वर वंध्यौ ससि वृत्त कौ । अरु नृप भान कुंआर ॥
वे ही दिन कमधज्ज कै । नाम वीरवर भार ॥२७॥

॥ कवित्त ॥

चित्र रेप वाला विचित्र । चंद्री चन्द्रानन ॥
स्वर्ग मग्ग उत्तरी । चित पुत्तरि परमानन ॥
काम वान सुंजुरी । वाल अंजुरी सु लच्छिय ॥
मार कलह उत्तरी । पुव्व अच्छरी सु लच्छिय ॥
लछिन बत्तीस लच्छी सहज । रति पति चित्त समंधरै ॥
संग्रहै वृत्त चहुआन कौ । गवरि पुज्ज दिन प्रति करै ॥२८॥

॥ दूहा ॥

वरनी जोग वरन्न को । वर भुल्लै करतार ॥
तिहि कारन ढुंढत फिरै । सत्त समुद्रह पार ॥२९॥
जा कारन ढुंढत फिरत । सो पायौ दीलीस ॥
अब जद्दव ससिवृत्त चढ़िय । दीनी ईस जगीस ॥३०॥

॥ दूहा ॥

हंस कहै राजन्न सुनि । इह उतपति अनुराग ॥
श्रवन सुनौ संभरि सु पहु । कहौं वृत्त संलाग ॥३१॥

॥ कवित्त ॥

देवागिरि नृपभान । सोम वंसी सुतपै नृप ॥
तिन अनंत बल तेज । बहुल है गै पैदल तप ॥
नयर मध्य कोटीस । बसै बानिक्क अनंत लछि ॥
धर्म तप्पनह पार । न कोऊ दास रहै इछु ॥
सा एक लष्प पयदल पुलख । पग्ग जोर पूंनं बहै ॥
जद्दव नारिंद सब गुन कुसल । धन प्रताप दिन दिन लहै ॥३२॥

तास पुत्र नरिन । पुत्रि ससिवृत्ता प्रमानं ॥
दुअ अनंत सूरत्ति । रूप मकरंद सु जानं ॥
भगिनि भ्रात दुअ प्रीत । पिता माता प्रिय मानं ॥
अति उछाह रंग रमै । असन इक ठाम प्रधानं ॥
सुव रिप्प भई सत्रहवरु दुअ । अति अभूत लच्छिन प्रबल ॥
ललित सरूप पिय चंद सम । राजकुंअरि राजै अतुल ॥३३॥

तिन राजन कै मंत्र । नाम आनंद चंद भर ॥
तिन भगिनी चंद्रिका । ब्याह ब्याही सु दूरि धरि ॥
नैर कोट हिस्सार । तास पित्रीय प्रमथ बर ॥
अति सु प्रीति नर नारि । सुष्प अनुभवै दीह पर ॥
कोइक्क दिवस भरतार वहि । तुच्छ दीह परलोक गत ॥
आनई कहनि फिर अप्प ग्रह । अति सु दुष्प निसि दिन करत ॥३४॥

॥ दूहा ॥

अति प्रवीन विद्या लहन । गान तान सुभ साज ॥
केइक दिन अंतर वहिग । गइ अंते बर राज ॥३५॥

तिन संगह ससिवृत्त सुअ । पठन विद्य सुभ काज ॥
देषि कुंअरि अद्भुत अवय । रंजित है अति लाज ॥३६॥

॥ कवित्त ॥

जब पित्रिन चंद्रिका । कहै गुन नित चहुआनं ॥
जेस पराक्रम राज । तेइ वरने दिन मानं ॥
राजकुंअरि जब सुनै । तबै उम्भरै रोम तन ॥
फिरि पुच्छै ससिवृत्त । सहि एकंत मत्त गुन ॥

जे जे सु पराक्रम राज किय । सोइ कहै पित्रिन समथ ॥
श्रोतान राग लग्यौ उअर । तो वृत्त लिनौ सुनौ सुकथ ॥३७॥

॥ दूहा ॥

यों वरष्प हुअ वित्ति गय । भइय वैस वर उंच ॥
तब कामन सु कलेव सुर । करे सेव सुचि संच ॥३८॥
हरि सेवा निस प्रति करै । मन वाचा क्रम वंध ॥
वर चहुआन सुकामना । सेवा ईस सुगंध ॥३९॥
वचन सिवा सिव वाच दिय । पति पावै चहुआन ॥
वर प्रमुदिय प्रथमाधिपति । हुअ सुपनंतर मान ॥४०॥
कै जानै मन अप्पनो । कै पित्रिन कै ईस ॥
और शिवा सुनि ईस प्रति । किय अस्तुति वर दीस ॥४१॥

॥ कवित्त ॥

हुअ प्रसंन सिव सिवा । वोलि हूँ पठय तुम्झ प्रति ॥
इह वरनी तुम जोग । चंद जोसना वान वृत ॥
ज्यों रुकमिनि हरि देव । प्रीति अति वढै प्रेम भर ॥
इह गुन हंस सरूप । नाम दुजराज भनिय चर ॥
वुल्लिय सु पिता कमधज्ज नर । व्याहन पठयौ सु गुर दुज ॥
आवै सु भ्रात जैचंद सुत । कमध पुंज व्याहन सुकज ॥४२॥

॥ दूहा ॥

ह्वै प्रसन्न वहु पंगुरै । दियौ हुकुम सुअ वंध ॥
प्रेरि सथ्थ जत्र अप्प पर । अति पर घर सुअ नंध ॥४३॥
सज्जि सेन चतुरंग नर । देवग्गिरि कज व्याह ॥
अति अगनित सथ द्रव्य लिय । नर उच्छव करनाह ॥४४॥

॥ दूहा ॥

कह संभारि वर हंस सुनि । कह जहाँ संकेत ॥
कौन थान हम मिलन है । कहत वीच संमेत ॥४५॥

॥ गाथा ॥

कह यह दुज संकेतं । हो राज्यंद धीर ढिल्लेसं ॥
तेरसि उज्जल माघे । व्याहन वरनीय थान हर सिद्धि ॥४६॥

॥ दूहा ॥

तब राजन फिरि उच्चरै। हो देवस दुजराज ॥
जो संकेत सु हम कहिय। सौ अप्पौ त्रिय काज ॥४७॥

॥ अरिल्ल ॥

सो अप्पिय हम नेम सु दद्दं। तुम अवस्य आवो प्रभु गद्दं ॥
सेत माघ त्रयोदसि सा वहि। हर सुकलेय थान सुति भावहि ॥४८॥

॥ दूहा ॥

इह कहि हंस सु उड़ि गयौ। लग्यो राज श्रोतान ॥
छिन न हंस धीरज धरत। सुख जीवन दुख प्रान ॥४६॥
दस सहस्र हैंवर चढ़िय। न्रप दिल्ली चहुआन ॥
हुकम सद्दि साहन कियौ। दै सूरन विलहान ॥५०॥

॥ छंद भुजंगी ॥

दियौ कन्ह चहुआंन मानिक्क वाजी। जिनैं देपतं चित्त की गत्ति लाजी ॥
मुपं मझ्झपायं कढै वाज राजं। मनो वग्ग भीपं कृतं कढ्ढि पाजं ॥५१॥
दियौ वाजि इंदं वरं जाम देवं। दिपै तेज ऐसैं चिरं पंप एवं ॥
धरै पाइ ऐसे इलं मझ्झि जैसे। सुनै जैन ध्रंमं धरै पाइ तैसे ॥५२॥
चढ्यौ राव कैमास चिन्त्तं तुरंगी। रहै तेज पासं उछद्दंत अंगी ॥
चमक्कंत नालं विसालं सुरंगी। मनो वीज छव्वी कि आभा अनंगी ॥५३॥
उड़े झार झारं पयं नाल झारी। समं वूंद धावै मानौं चार तारी ॥
चढ़े राजहंसं सुचामंड जोटं। मनो तेज वंधी मुनी वाइ मोटं ॥५४॥
डुलै कंन नांहीं सिलीका सुग्रीवं। मनौं जोति वंधी सुनिर्वात्त दीवं ॥
चढ्यौ राज पीर्चा प्रसंगं पहूपा। उड़ै वास ज्यों गाय वग्गै अनूपा ॥५५॥
वंध चौंर चित्तं चमक्कंत चाहं। हरद्वार छुट्टै कि गंग प्रवाहं ॥
चढ्यौ राज पट्टं अजानेत वाहं। कही कव्विराजं उपम्माति चाहं ॥५६॥
दियौ वीच तारी कोई नाहि पुज्जै। चलं ताहि दिप्पै सरित्ता अमुझ्झै ॥
दियौ मृग्गराजं चढ्यौ देवराजी। उडे पंखि पाजी रही पच्छ लाजी ॥५७॥
चढ्यौ निड्डुरं राह अंगं अभंगं। छुटै जानि तारान के व्योम मग्गं
चढ्यौ हाहुली राइ जंत्र् नारिंदं। चढ्यौ वांन ज्यों तज कम्मान चंदं ॥५८॥
चढ्यौ लंगरी राव लंगा सुवीरं। किधौं वाय चढ्यौ वुग्रं जानि धीरं ॥
चढ्यौ राज गोइंद आहुट्ट राजं। किधौं वाय वुंदं सा छुट्टीय साजं ॥५९॥

चढ्यौ राव लष्पं सु लष्षं पवारं । भ्रमें अंग ऐसे उपम्मा विचारं ॥
किधौं अग्गि दंडं व्रजं बाल फेरैं । किधों भोर हथ्थं किधों चक्र हेरैं ॥६०॥
किधों राति वोहिथ्थ भ्रमि भोर नारं । कही चंद कव्वी उपंमाति चारं ॥
चढ्यौ चंद पुंडीर राजीव नामं । तिनं ओपमा चंद देषी विरामं ॥६१॥
जिनें गत्ति जोती सयन्नं पगारं । चली अंपि के पंप चित्तं वधारं ॥
चढ्यौ अत्त ताई उतंगं तुरंगा । मनों वीज की गत्ति आभा अनंगा ॥६२॥
चढ्यौ राव रामं रघूवंस वीरं । गतिं सूर जित्ती मृगं चंद भीरं ॥
चढ्यौ दाहिमं देवनरसिंव कैसे । मनों चित्त के अर्थ की गत्ति जैसे ॥६३॥
चढ्यौ भोज राजं पहारं त्रिनैतं । फुटै सद्द तेजं आवाजं त्रितेतं ॥
चढ्यौ वीर जोद्धं कनक्कं कुमारं । चली कृत्य पूरब्ब आचार पारं ॥६४॥
चढ्यौ राव पज्जून कूरंभ वीरं । वढ़े लोह अग्गं धनं जैतपूरं ॥
चढ्यौ सामलौ सूर सारंग ताजी । गही होड वंधो वयं वाम पाजी ॥६५॥
चढ्यौ अलूहनं वीर वंधव्व पानं । चढयौ दान ज्यों ग्रहनं जुद्ध वानं ॥
चढ्यौ लष्पलष्षी सलष्षं वघेला । वढ्यौ नेत ज्यों देह देषै सु हेला ॥६६॥
चढ़े सव्व सामंत छल वलत वीरं । मनों भान छुट्टी किरन्नी कि तीरं ॥
चढ्यौ वाज राजं पृथीराजं राजं । तवै पष्परयो वाज साकत्ति साजं ॥६७॥
उडै सूर ज्यों हंस तुट्टै कमंधं । वरं ओपमा चंद जंपी कविंदं ॥
द्रुमं ज्यों मरोरै शिरं स्वामि हेतं । मयूरं कलावाज रची वंधि नेतं ॥६८॥
जगी जोगमाया सुजग्गीय थानं । प्रलीनं प्रलै ज्यों प्रजीनं प्रमानं ॥६९॥
जगें वीर वीराधि डोरू वजावें । नचै नदनंदी त्रिवाइ त्रिघावें ॥छं०॥७०॥

॥ दूहा ॥

अगम निगम जांनि कै । चलि न्रप सुक्रंवार ॥
माह वद्दि पंचमि दिवस । चढि चलिये तुर तार ॥७१॥

॥ छंद त्रोटक ॥

कवि चंद सु त्रंनन राज करं । सोइ त्रोटक छंद प्रमान धरं ॥
जिहि च्यार परे सगना सगनं । सुभ अच्छिर लाह तजै अगनं ॥७२॥
विवहार धरे वरनं सु वरं । पढि पिंगल वाहन केन हरं ॥
वर चोजन चारु सुरंग इलं । तहां भौर न मोर सुरंग हुलं ॥७३॥
गज उप्पर ढाल ढलक्कि तरं । सुकहों तहां केलि अचिज्ज वरं ॥
तहां पल्लव ललित रत्त वचं । तहां जे धन दंतिय पंति रचं ॥७४॥

झमकैं वर नंग अनूप कसी । निकसी तहां केतक सी विकसी ॥
सु चलें वर मंद सुगंध प्रकार । वढी दिसि दस्स सु उज्जल मार ॥७५॥

वजै महु रंग सु गंधन भ्रंग । वजे सहनाइ न फेरि उपंग ॥
हल वर लत्त पवन्न झकोर । घरघ्घर होहि पिलप्पित जोर ॥७६॥

बुलै कलै कंठ सु कंठह सद्द । तहां चढ कव्वि वसीठ उंवद्द ॥
सकेस कुसंम रु अंकुस पानि । हने ढर काम असो गज जानि ॥७७॥

अतसी वर पुफ्फ सु वादहि भृंग । वजै गज पांनि सु इंदुव रंग ॥
लता ललिताह हलावन ढाल । उतह जम लग्गय रूपतिताल ॥७८॥

विकासित केसर कुंकुम कांम । सरोज सुरंम अनूपम नांम ॥
उहां मिटि ताल तरंगिनि कांम । उहां चलि ते निय ना तिहि ठांम ॥७९॥

उहां वरहा जनु उप्परि केल । किने तत्र ढीठ हिया छवि मेल ॥
हले जनु नेजे पजूर वसंत । ढली वन राह सुढालह संत ॥८०॥

तजी वर वाल सुरंग सुभेस । चल्यौ प्रथिराज सु दष्पिन देस ॥
विरदै चहु विप्र कहै कविचंद । सही चहुआन प्रथी पर इंद ॥८१॥

॥ दूहा ॥

चढ्ढि चलिय प्रथिराज वर । देवग्गिरिधर राज ॥
तत्र सुकन्ह वरदाय वर । पुच्छिय विगत सुकाज ॥८२॥
एक लष्प दस अग्ग । सेन सज्जे कमधज्जं ॥
वीय सहस वारुन्न । सत्त हज्जार फवज्जं ॥
अद्ध लष्प पैदल्ल । अद्ध साइक्कं वहंतं ॥
सजि समूह चतुरंग । दिसा दक्छिन परजंतं ॥
सुनि श्रवन कुंअरे शशिवृत्त लिय । सुनि अवाज वर वीर घन ॥
चहुआन वृत्त लीनी अधम । प्रान हीन कढ्ढन सुमन ॥८३॥

॥ दूहा ॥

वाल प्रान कढ्ढत सुपुनि । सगुन एक मन मान ॥
वढि अवाज चहुआन की । अली सुन्यौ अप कान ॥८४॥
यों सु सुनिय नप भांन नें । पुत्रि प्रलय व्रत कीन ॥
चर पिष्षिय चहुआन पैं । जदव मोकल दीन ॥८५॥

॥ कवित्त ॥

दुहूं पास नृप नयर। राज दिष्पै प्रति राजं ॥
मनों हथ्थ घर नयर। राज संमुह प्रति साजं ॥
कोट कठिन मेखल सु। कटि ग्रिग पलक उघारिय ॥
राज किति, संभरन। गोप श्रवनन संभारिय ॥
किंकिनि सुपाइ घुंघर सु गज। राज निसान सवद्द प्रति ॥
चहुआन राव आगम सुव्रत। कमल हीय वढ्ढिय सुरति.॥८६॥

॥ दूहा ॥

यों करंत दुत्तिय त्रियौ। कथा श्रवन सुनि मंत ॥
जाकौ तें पतिवृत्त लिय। सो आयौ अलि कंत ॥८७॥
श्रवन नयन को मेल कै। भय चंचल चल चित्त ॥
श्रोतानं दिष्टांन अरु। मिलि पुच्छै दोइ मित्त ॥८८॥

॥ चंद्रायना ॥

कर्न प्रयंत कटाछ सुरंग विराजही।
कछु पुच्छन कों जाहि पै पुच्छत लाजही।
नैंन सैंज में वात जु स्रवनन सों कहै ॥
काम किधों प्रथिराज भेद करि ना लहै ॥८६॥

॥ दूहा ॥

नैन श्रवन्नन पूछई। तुम जानौ वहु मंत ॥
मेर जीय अंदेस है। कही न मैं पिय जंत ॥६०॥
श्रवनन सन नेंना कही। तुम जानौ चहुआन ॥
काम नृपति कौ रूप धरि। आवत है इन थान ॥६१॥
ताम हंस आयौ समपि। कह्यो अहो शशिवृत्त ॥
चाहुआन आयौ प्रछन। मिलन थांन हर सित्त ॥६२॥

॥ कवित्त ॥

वेरि गांम जद्दव नरिंद। उम्मे चिहु पासं ॥
पल नंपिय रंभा सु। करन आरंभ प्रशासं ॥
एक एक गुन करहि। सव्व फूले सत पत्रं ॥
तिन मध्यह शशिवृत्त। भई कम्मोदनि मंत्रं ॥
पित पुच्छि पुच्छि परिवार सव। पुच्छि वंध रज्जन सकल ॥
आवृत्त तात अग्या सुमहि। भईय वाल वुध्या त्रिकल ॥६३॥

॥ दूहा ॥

विकल वाल जहं सकल हुअ । वुद्धि विकल प्रति साज ॥
भान वचन सच्चै सुकरि । जिन अप्पी प्रथिराज ॥९४॥

॥ गाथा ॥

वीरं चंद सुव्याहं । सो व्याहं जोगिनीपुरयं ॥
संभरि क्रन शशिव्रतं । अगम वीराइमं जनंत तयौ ॥९५॥

॥ कवित्त ॥

पुच्छि मात पित पुच्छि । पुच्छि परिवार स्नेह सव ॥
मैं वृत लियौ निवद्ध । गवरि पुज्जनं वाल जव ॥
तिन थानक सव देव । नीति आरंभ व्रत लीनौ ॥
तव प्रसाद उप्पनौ । मोहि इच्छा व्रत दीनौ ॥
तिन काल व्रत्त लीनौ सु मैं । गवरि प्रसाद सु पुज्ज फल ॥
वारंज वात तुअ मोह हुअ । कहै और अव लहिअ फल ॥९६॥

॥ दूहा ॥

दुप देवल कौ छंडनह । उर सिंचन अंकूर ॥
दीह काल वल वीचि वदि । लिय समान संपूर ॥९७॥
वाला वेनी छोरि करि । छुट्टै चिहर सुभाइ ॥
कनकु थंभ तें ऊतरी । उरग सुता दरसाइ ॥९८॥

॥ छंदत्रोटक ॥

मय मंजन मंडिन वाल तनं । घनसार सुगंध सुवोरि घनं ॥
नव लोइन अंजित मंजि चली । कि मनो कम कुंदन पंभ हली ॥९९॥
सुभ वस्त्र सुअंग सुरंगनसी । सुहली मनु साप मदन्न कसी ॥
जरि जेहरि पाइ जराइ जरी । मजि भूषन नम्म मनौ उतरी ॥१००॥
सिगरी लट यों विथरी विगसं । शशि के मुख तें अहि सं निकसं ॥
रंग रत्त उवट्टन उज्जल कैं । तिन मैं कछु सेन सुधा चलि कै ॥१०१
नव राजिय रोम विराज इसी । जमना पर गंग सरस्वति सी ॥
परि पान सुकुंकुम मज्जन कैं । नव नीरज अंजन नैननि कै ॥१०२॥

॥ कुंडलिया ॥

करि मज्जन सज्जन सुक्रम । आभूषन न समान ॥
देहं कांकि कोटि द्रिमि । नजि सपि नैन कमान ॥

सजि सपि नैन कमान। केश वागुरि विस्तारिय॥
हावभाव कट्टाच्छ। ठुंकि पुट्टी दिय भारिय॥
वैठि नैन नृप मूल। पेम देपन गह सज्जन॥
मन मृग पिय कुन काज। ताकि वंधन किय मज्जन॥१०३॥

॥ छंद नाराच ॥

सुगंध केस पासयं। सुलग्गि मुक्ति छंडियं॥
अनेक पुप्प वीचि गुंथि। भासिता त्रिपंडियं॥
मनों सनाग पुप्फ जाति। तीन पंथि मंडियं॥
दुती कि नाग चंदनं। चढंत दुद्ध पंडियं॥ १०४॥

सिंदूर मध्य गुच्छता। अगंमदं विराजयं॥
मनो कि सूर उग्गतें। गहे सु पुत्र लाजयं॥
सु तुच्छ सुच्छ पाट आट। पेम वाट सोभियं॥
मनो कि चंद राह वान। वे प्रमान लोभयं॥ १०५॥

कनक्क काम कुंडिलं। ह्लंत तेज उम्भरे॥
सखी सहाइ मान भाइ। सज्जि सूर दो करे॥
दुती उपम्म विंद की। किरन्न चंद दिठ्ठयं॥
मनों कि सूर इंद गोदि। अप्प आनि विठ्ठयं॥ १०६॥

भुवन्न वंक, संक जूथ। नैन म्रग्ग जूवयं॥
उरद्धता चपल्ल गत्ति। अच्छ आनि ऊवयं॥
कटाच्छ नैन वंक संक। चित्त मान वंकयं॥
सुछंडि वै सु कुंचितं। श्रवन्न वान नंपयं॥ १०७॥

सुगंधता अनेक भाँति। चीर चारु मंडियं॥
सुरंग अंग कंचुकी। सुभंत गात ता जरी॥
वनाइ काम पंच वान। ओट जोट लै धरी॥ १०८॥

सुरंग माल लाल वाल। ता विसाल छंडयं॥
सु पुव्व पैर जानि काम। अग्गि संभ मंडयं॥
दुती उपम्म मुत्ति माल। यों विसाल ता कही॥
जु भारथी सु गंग लै। सुमेर शृङ्ग तें वही॥ १०९॥
जराइ चौकि स्याम पाट। रत्ति पत्ति तें चुली॥
सुरंग तिथ्थ थान मंडि। ईस शीश तें चली॥

सुवर्न क्षुद्रघंटिकादि। षोडसं वषानयं ॥
सु मत्ति तात मोर तन्न। गोदरं वषानयं ॥ ११० ॥

सुगंध गोप चिन्ह मंडि। पीत रत्त जावकं ॥
अभूषनं धरंत चित्त। मित्त हित्त शावकं ॥
वनाइ कें चौंडोल लाल। चढ़ढिना सु सुन्दरी ॥
सुदोपिता सुरंग थान। अस्तु तास उच्चारी ॥ १११ ॥

॥ दूहा ॥

सजि श्रृङ्गार शशिवृत्त तन। चढ़ि चौंडोल सुरंग ॥
पूजन कों वर अंबिका। आई वाल सु अंग ॥११२॥

॥ छंद नाराच ॥

चली अली घनं वनं। सुभंत सथ्थ संघनं ॥
विहंग भंगयो पुरं। चलंत सोभ नोपुरं ॥११३॥

अलीन जुथ्थ आवरं। मनो विहंग सावरं ॥
चुवंत पत्त रत्त जा। उवंत जानि अंबजा ॥११४॥

कलिंद सीम केसयं। अनंग अंग लोभयं ॥
उठंत कुंभ कुच्चयं। उपंम कब्बि सुच्चयं ॥११५॥

मनों जरंत बाल की। धरी सु आनि लालकी ॥
सुभंत रोमराजयं। प्रपील पंति छाजयं ॥११६॥

मनोज कूप नाभिका। चलंत लोभ आलिका ॥
सुरंग सोभ पिंडुरी। परादि काम पिंडुरी ॥११७॥

नितंब तुंग सोभए। अनंग अंग लोभए।
मनों कि रथ्थ रंभ के। सुरंभ चक्क संभके ॥११८॥

नषादि आदि अच्छनं। मनों कि दृष्ट द्रप्पनं ॥
दरंत रत्त एड़ियं। उपम्म कब्बि टेरियं ॥११९॥
मनों कि रत्त रत्तजा। चिकंत पत्र अंबुजा ॥१२०॥

॥ गाथा ॥

मट मे रम्मन थानं। लग्गा सेनाय पास चिहु वीरं ॥
धरि धीरं नन तुग्गं। रोमं राज रोमय अंचं ॥१२१॥

॥ दूहा ॥

बाल धरक्कति वचनि गति । ग्यान मोह विष पान ॥
त्यों कमधज्जै देषि कै । वर चिंतै चहुआन ॥१२२॥

॥ दूहा ॥

शंकर रस आचार किय । मद दिष्पिय प्रति जोइ ॥
मन लग्गिय बंधत सु पय । मन कंद्रप रस भोइ ॥१२३॥

॥ कवित्त ॥

दहति तीन चौंडोल । मध्य चौंडोल बाल भय ॥
भमर टोल झंकार । दासि त्रिंटिय सु पंच सय ।
सित्त पंच असवार । पंति मंडिय चावदिसि ॥
अद्ध लष्ष पैदल्ल । सथ्थ आयो सुअंग कसि ॥
मंगल विवेक विधि उच्चरे । बंधी बंदनमार करि ॥
उत्तरी बाल देवल सुढिग । लग्गि पाइ परदच्छि फिरि ॥१२४॥

॥ गाथा ॥

जो इज्जै मन चरियं । हरियं एक कग्गयौ सवदं ॥
सब सेना कमधज्जं । त्रिंटे वा बाल सरसायं ॥१२५॥
वर जैचंद सुबंधं । प्रोहित पंग रष्पियं आइयं ॥
सहचर चारु सुपढियं । हालाहलं वालयं मनयं ॥१२६॥

॥ दूहा ॥

चल्यौ पुंज नव साज वर । अरु भर लिन्ने सथ्थ ॥
शंभु थान पूजन मिसह । चलि वर आयौ तथ्थ ॥१२७॥
तब लगि दल चहुआन के । ग्रह गुपंति कर आइ ॥
रुक्कि सकै नन मध्य लिय । बोलै संमुह धाइ ॥१२८।

॥ कवित्त ॥

सहस सत्त कप्परिय । भेष कीनौ तिन वारं ॥
गोप तेग गहि गुपत । कपटं कावरि सब भारं ॥
किहुन फरस किहुँ छुरी । चक्र किन हाथन माही ॥
किन त्रिसूल किन डंड । सिंगि सब सथ्थ समाही ॥
सा अंग सिद्ध चहुआन लै । दूतन दूत बताइ हरि ॥
सा अंग बाल उतकंठ करि । पै लग्गी परदच्छि फिरि ॥१२९॥

॥अरिल्ल ॥

फिरि परदच्छि बाल अपु लग्गी ॥
सुमन काम कामना सुभग्गी ॥
मन मन बंधि कियौ हथ लेवं ॥
सुमन मंत्र प्रारंभ सुदेव ॥१३०॥

॥ दोहा ॥

उतरि बाल चौंडोल तें । प्रीत प्रात्त छुटि लाज ॥
शिवहिं पूजि अस्तुति करी । मिलन करै प्रथुराज ॥१३१॥

॥ कवित्त ॥

सहस सत्त कप्परिय । भेष कीनों तिन वारं ॥
कपट कंध कावरिय । धसिय देवौ दरबारं ॥
सर्व शस्त्र आरंभ । हम्त आरंभ सुरी सल ॥
धसिय भीर सम्मूह । जूह पाई समंडि कल ॥
दल प्रबल उदधि ज्यों मथन कज । भुज सुकिरन चहुआन किय ॥
शशिवृत्त बाल रंभह समह । मिलिय गंठि बंधन सुहिय ॥१३२॥
दिठ्ठि दिठ्ठ लग्गी समूह । उतकंठ सु भग्गिय ॥
निप लज्जानिय नयन । मयन माया रस पग्गिय ॥
छल बल कल चहुआन । बाल कुअंरप्पन भंजे ॥
दीपत्रोय मिट्ट्यौ । उभय भारी मन रंजे ॥
चौहान हथ्थ बाला गहिय । सो ओपम कविचंद कहि ॥
मानों कि लता कंचन लहरि । मत्त बीर गजराज गहि ॥१३३॥

॥ चंद्रायना ॥

गहत बाल पिय पानि । सु गुर जन संभरे ॥
लोचन मोचि सुरंग । सु अंसु बहे परे ॥
अपमंगल जिय जानी । सु नने भुप वही ॥
मनों पंजन सुप सुचि । भरक्कन नंपही ॥१३४॥
दुहु कपोल कल भेद । सुरंग ढरक्कही ॥
मज्जन बाल विलास । सु उरज परक्कही ॥
सो ओपम कवि चंद । चित मैं बस रही ॥
मनु कनक कलौंडी मंडी । अग्ग मद कसरही ॥१३५॥

॥ गाथा ॥

मृग मद कसयति चित्ते। मित्तं पुनरोपि चित्तयं बसयं ॥
अजहूँ कन्ह वियोगे। कालिंदी कन्हया नीरं ॥१३६॥
गहियं गह गह कंठो। वचनं संजनाइं निठ्ठयो कहियं॥
जानिज्जै सतपत्रं। बंधे सदाइ भत्ररयं गहियं ॥१३७॥
तपतं दिल में रहियं। अंगं तपताइ उप्परं होइ ॥
जानिज्जै कसु लालं। घटनो अंग एकयौ सरिसौ ॥१३८॥
अप मंगल अल बाले। नेनं नपाइ नप किंसलयौ ॥
जानिज्जै धन कृपनं। सपनंतरो दत्तयं धनयं ॥१३९॥

॥ कवित्त ॥

गहि शशिवृत्त नरिंद। सिढी लंघत ढहि थोरी ॥
काम लता कल्हरी। पेम मारुत झकझोरी ॥
वर लीनी करि साहि। चंपि उर पुठ्ठि लगाई ॥
मन सुरंग सोइ वत्त। कंत लगि कान सुनाई ॥
नृप भयौ रुद करुना सुत्रिय। वीर भोग वर सुभर गति ॥
सगपन सुहास वीभच्छरिन। भय भयान कमधज्जदुति ॥१४०॥

॥ दूहा ॥

बीर गत्ति संधिय सुमति। वृत्त अवृत्त न जाइ ॥
वरी एक आवृत्त रपि। सुवर बाल अनुराइ ॥१४१॥
बाल सु वैर स वैर त्रिय। भान विरुद्ध न कीन ॥
सकल सेन साधन धरी। कलहंकृत गति चीन ॥१४२॥

॥ अरिल्ल ॥

आवृत्त वृत्त गुन निग्रह राज। देव जुद्ध देवत्तह साज ॥
है गै दल सज्जै तिहि वीर। हरी बाल चहुआन सधीर ॥१४३॥

॥ कवित्त ॥

सब्बर वीर कमधज्ज। अरघ अप्पिय पग मग्गं ॥
इप अच्छित उच्छरहि। जानि परिमानन मग्गं ॥
सार धार पुंपियै। वीर मंगल उच्चारै ॥
सवै साथ वंदियहि। सकल पूजा संभारै ॥

वर मुक्कि वरन वरनी सुवर। इह अपूब्ब पिष्यौ नयन ॥
उप्पनौ वीर सिंगार संग। रुद्र वीर चौरी नयन ॥१४४॥

॥ दूहा ॥

सिर सोहन वर सेहरौ। टोप ओप अति अंग ॥
बगतर बागे केसरे। रुधि भीजत विषमंग ॥१४५॥
सकट भग्ग लइ वग्ग वर। कमधज वीर विसेज ॥
मिलि वीर वीरत्त वर। दोऊ दैवत तेज ॥१४६॥

॥ दूहा ॥

चाहुवांन कमधज्ज वर। मिले लोह छुटि छोह ॥
धार मुरें मुष ना मुरें। मरट मुच्छ क्रन जोह ॥१४७॥

॥ दूहा ॥

इह कहि कढ्ढिय सार कर। पोलि पग्ग दोउ पानि ॥
मानहु मत्त अनंग द्वै। धृत छुट्टै जम जांनि ॥१४८॥

॥ छंद भुजंगी ॥

मिले हथ्थ वथ्थंन सथ्थं स धारे। मनौ वारुनो मत्त गज दंत न्यारे ॥
उडे लोह पंती परे श्रोन रुंदं। मनौ रुद्धि धारा वरष्पंत बुंदं ॥१४९॥
घुमे घाय घायं अघायं अघायं। झुमे झार झारं झनक्के झकायं ॥
करें जोगनी जोग काली कराली। फिरें पेट धाये महा विक्कराली ॥१५०॥
परे सूर बाहं बहथ्थी कृपानं। कढी तांत वाढी मलं चारिजानं ॥
धमां धम्म मत्ती महो माहि थानों। पिजारे सतं रुन पीजंत मानों ॥१५१॥
महादेव मालानि में गृथि मथ्थं। कहें बाह बाहं बहे सूर हथ्थं ॥१५२॥

॥ सुरिल्ल ॥

साहंर रूप कायर प्रकार। छंडीत लज्ज अरु वीर मार ॥
अभ्यंगे सूर जिन सूर रूप। दैवत्त भूप दिप्पें अनूप ॥१५३॥

॥ कवित्त ॥

धिरग ग्रग्य आरंभ। वेद प्रारंभ शस्त्र वल्ल ॥
है है नर हंसियै। शीश आहुत्ति स्वस्ति कल्ल ॥
होम कंड विस्तरिय। क्षिति मंडप करि मंडिय ॥
मिलि मिलि वेताल। पेषि पल साकुन छंडिय ॥

तुंवर सु नाग किनर सु चर। अच्छरि अच्छ सु गावहीं॥
मिलि दान अस्स अप्पन जुगति। भुगति मुगति तत पावहीं॥१५४॥

॥ दूहा ॥

करि सुचार आचार सब। समद किति फल दीन॥
गुरुजन सिसि करुना करिय। कायर हाहर कीन॥१५५॥

॥ दूहा ॥

तब चहुआन सु कन्ह वर। ठढ्ढौ करि गुरुराज॥
हुकम न्रपति छुट्टौति इम। जनु तीतर पर बाज॥१५६॥

॥ कवित्त ॥

सुप छुट्टत न्रप बैन। नैन दिठ्ठी धावंनौ॥
क्रंम बंध बल मोह। छोह बंध्यौ सु बरत्तौ॥
सुबर सेन चहुआन। सिंग जद्दूनं नवाई॥
जनुं मंदिर बिय बार। ढंकि इक बार नाई॥
तकसीर करन दोइ अंस बर। किति मग्ग करतव्य कर॥
अथवंत रविह आदित्य दिन। अगनि सार बुढ्ढिय कहर॥१५७॥

॥ गाथा ॥

सुप छुट्टा न्रप बैंनं। के दिठ्ठाय धावता नैनं॥
वज्जी बाहु सुवारं। धारं ढारि मत्तयौ धरयं॥१५८॥

॥ कवित्त ॥

भान कुंअरि शशिवृत्त। नैन श्रृंगार सुराजै॥
बीर रूप सामंत। रुद्र प्रथिराथ बिराजै॥
चंद अदब्भुत जानि। भए कातर करुनामय॥
बीभछ अरिन समूह। सात उप्पनौ सरन भय॥
उप्पज्यौ हास अपछरि अमर। भौ भयान भावी बिगति॥
क्रूरंभराय प्रथिराज बर। लरन लोह चिंते तरनि॥१५९॥

॥ छंद त्रिभंगी ॥

कविचंद सुवरनं करै सुकरनं सूरह लरनं भर भिरनं॥
तिरभंगी छंदं नाग नरिंदं कथ्थ करिंदं दुष हरनं॥
पढमं दह मत्ता पुनि अठ मत्ता असु वसु मत्ता रस मत्ता॥
घन घाइ सवत्ता सूर सरत्ता मैगल मत्ता करि धत्ता॥१६०॥

वज्जै वर कोहं लग्गै लोहं छक्कै छोहं तजि मोहं ॥
सूरा तन सोहं स्वामिन दोहं मत्ते ढोहं रिन डोहं ॥
वर वार विछुट्टै बगतर फुट्टै पारन पुट्टै धर तुट्टै ॥
तरवारनि तुट्टै धम्मर लुट्टै अंग अहुट्टै गहि झुट्टै ॥१६१॥
वीरा रस रज्जं सूर सगज्जं सिंधुअ वज्जं गज गज्जं ॥
अच्छरि तन मज्जं वरे वर जंजं चित्ते वज्जं मन मज्जं ॥
कायर रन भज्जं तज्जि सलज्जं स्वामि सु कज्जं भर सज्जं ॥
जम दड्ढ सु सज्जे हथ्थह मज्जे छिन्छन छज्जे रिन रज्जे ॥१६२॥

॥ दूहा ॥

सुवर वीर पावास पिजि । कढ्ढी वंकी असि्स ॥
सोभै सीस गयंद कै । मनु तेरस कौ सस्सि ॥१६३॥

॥ कवित्त ॥

सुवर वीर पावास । पिभिझ वढ्ढी सु वंकि असि ॥
सुभै सीस गज राज । अद्ध तेरसि कि वाल ससि ॥
मुट्ठि चंपि द्रग पानि । नीर वानं सुद्धारह ॥
मनु मुत्तिय वारुन्न । चंदु वंधे इन वारह ॥
साम रम देन पावरि धनि । स्वामि सु अंतर फुनि मिलिय ॥
जोरन युमास संदेस सदि । गल्ह एक जुग जुग चलिय ॥१६४॥
सुवर वीर कमधज्ज । राज संमुह चरि झारिय ॥
मरन पुंज पावास । मरन अप्पनौ विचारिय ॥
सव सु सथ्थ पुच्छयौ । तंन मंतह उच्चारिय ॥
सकल मंत रजपूत । मंत सो देहु सुचारिय ॥
हारिये भूंम जिने सुमत । ता उप्पर तन रप्पियै ॥
सो मंत सुनौ तोहि कहं । दुज्जन दल वल भप्पियै ॥१६५॥

॥ गाथा ॥

अग्गसिनं वर भानु । पायानं परम संतापं ॥
जानिज्जै नन चंभुसं । नयचंदनं तिलक्यौ दीयं ॥१६६॥

॥ चंद्रायना ॥

दरि निसान गन भान भइग वर ॥
निसु संपनौ जाइ तिमिर चढ़ै सुर ॥

कुमुद विमुद अंकूर सुरातन धरियं ॥
मानौ तम को तेज सु तत्त उधरियं ॥१६७॥

॥ मुरिल्ल ॥

वर भान संपतौ थान गुरं। सरसीरुह उद्दित मुदित वरं॥
वर वीर क्रमोदनि की सु गती। सुभए रिसिराज उदोतपती ॥१६८॥

॥ दूहा ॥

निसि गत वंछे भान वर। भंवर चक्कि अरु सूर॥
मंतह मत्त पयान गति। वर भारथ्थ अंकूर ॥१६९॥

॥ कवित्त ॥

कुमुद उवरि मूंदिय। सु वंधि सतपत्र प्रकारय॥
चक्किय चक्क विच्छुरहि। चक्कि शशिवृत्त निहारय॥
जुवती जन चढ़ि काम। जाँहि कोतर तर पंपी॥
अवृत वृत्त सुंदरिय। काम वढ्ढिय वर अंपी॥
नव नित्त हंस हंसह मिलै। विमल चंद उग्यौ सु नभ॥
सामंत सूर त्रन रष्पि कै। करहि वीर वीश्राम सभ ॥१७०॥

॥ अरिल्ल ॥

तत्त सार प्रति प्रत्ति प्रमानं। जाहु राज दिल्ली चहुआनं॥
गुन बढ्ढे हम वढ्ढे सस्त्रं। दुष्पमानि सुनि सुनिय विरत्तं ॥१७१॥

॥ कवित्त ॥

दुष्प मानि सो रत्त। सुनै सामंत सूर वर॥
चंद उडग्गन काम। सर्‌यो कहुं दिष्षि सूर नर॥
भान काम नन सरे। अरुन जो होइ तेज वर॥
काम राम नन सरै। हनू कूद्योति लंकद्धर॥
नन सरै काम मंगल सुविधि। जो मंगल आकृत्त तप॥
सामंत सूर इम उच्चरै। कढ्ढि मोहि झुमझहुति अप ॥१७२॥

॥ दूहा ॥

मुहि कढ्ढिरु तुम रहौ वर। जियत जांहि उन थान॥
ऐसी रीति अरीत वर। पढ्ढी नह चहुआन ॥१७३॥

॥ गाथा ॥

अंकुर वीर सुभट्टं । अघटं घट्टाइ कोधयो कलहं ॥
हल मुक्या चलि बंधी । निठुर सच्चव सठयो वीरं ॥१७४॥

॥ दूहा ॥

वीर वीर वीराधि वर । कढे लोह तजि छोह ॥
सूर धीर मानंत गति । नहिं माया नहिं मोह ॥१७५॥

॥ रसावला ॥

जिते सूर पत्ती । लगैं लोह तत्ती ॥
नचे सूर छत्ती । उडै काल पत्ती ॥१७६॥
जुटे जोध पत्ती । उठी रेन गत्ती ॥
महा बेन तत्ती । कला कोटि कत्ती ॥१७७॥
सबै साव गत्ती । सुरं पंच छत्ती ॥
मचे कुल मत्ती । पचे तेग रत्ती ॥१७८॥
करे घाव कत्ती । हलै सूर सित्ती ॥
सिर फल्ल सत्ती । चुभैं घाइ धत्ती ॥१७९॥
भजै भीग गत्ती । हलमान जत्ती ॥
अनाभूत अत्ती । द्रिगे दान दत्ती ॥१८०॥
लोहं धार लक्के । चलक्कै चमक्कं ॥
भरा भीग धक्कं । [illegible] ॥१८१॥
[illegible] चित्त [illegible] । [illegible] ॥
[illegible] । [illegible] ॥१८२॥
[illegible] । [illegible] ॥१८३॥

॥ [illegible] ॥

॥ दूहा ॥

स्वामि काज लग्गे सुमति । पंड पंड धर धार ॥
हार हार मंडै हियै । गुथ्थि हार हर हार ॥ १८५॥

॥ कवित्त ॥

घटिय पंच दिन घट्यो । उभरि आरब्भ पुंजपिरि ॥
एक दिना दोउ सेन । मोह छंड्यौ क्रम निक्करि ॥
बान गंग पत्तयौ । बीर ग्यारसि दिन सोमं ॥
सूर धीर सामंत । सूर उड्डे रन रोमं ॥
कत काम काजसांई विभ्रम । दल दंतिय पंतिय गमै ॥
सामंत सूर सांई विभ्रम । रोम रोम राजी भ्रमै ॥१८६॥

॥ दूहा ॥

रोम राज राजी भूमहि । थोर थनी ढुंढि बाल ॥
उतकंठा उतकंठ की । ने पुज्जी प्रथिपाल ॥१८७॥

॥ गाथा ॥

आरंभ प्रारंभौ । उतकंठा किनयौ वृतयं ॥
साधा धरी सु धरयं । नन छुट्टै तीनयौ पनयं ॥१८८॥

॥ दूहा ॥

नह अल्लै पृथिराज रिन । लज्ज लपट्टिय पाइ ॥
त्रिय जोरें कर हथ्थ दो । चलि संभरिवै राइ ॥१८९॥
तुं वै एकह पन रहै । रंग कसुंभ प्रमान ॥
हौं नन छंडों पास तुअ । तीनों पनह समान ॥१९०॥
तुं लज्जी मो सथ्थ है । दान पग्ग अरु रूप ॥
गों चल्लै तीनों चलें । संची चवै न भूप ॥१९१॥
परे सुभर दोऊ न दल । सिद्धूर देष्यो बंध ॥
कौन भुजा बल जुध करै । सुनि कमधज्ज असुद्ध ॥१९२॥
बाला लै प्रथिराज गय । गहिय वग्ग कमधज्ज ॥
रोस रीस विरसोज भय । रह बाजे अनवज्ज ॥१९३॥

॥ कवित्त ॥

अद्ध कोस नृप अग्ग । बीर ठल्यौ करि ठड्ढौ ॥
मद समूह गजराज । छंडि पट्टै बल गड्ढौ ॥

लाज बंधि संकरिय। बीर बंध्यौ सु अष्ट कसि ॥
अग्नि बीर छंडै न। कन्न मंडै दिल्लीय दिसि ॥
मनमत्थ महाबल बंधि अति। मन मत्तौ उन को धरै ॥
घन धाइ कायर छुट्टै परे। अमर पुहप पूजा करै ॥१९४॥
पृथ राज प्रथिराज। पृथ जै चंद बंध वर ॥
पृथ सूर सामंत। पृथ नृप सेन पंग वर ॥
पृथ सेन ढंढोरि। पृथ झोरी करि डारिय ॥
पृथ पेन विधि गाम। थानगंगा पथ झारिय ॥
आसेर आस छंडिय नृपति। बिपति सपति जानीय भर ॥
सुठिहार राज प्रथिराज को। धरै सत्रह चौडोल वर ॥१९५॥

॥ दूहा ॥

चाहुआन चतुरंग जिति। निगम बोध रहि राज ॥
बर शशिव्रत्ता जित्तिगौ। धाम सु दिल्ली साज ॥१९६॥

॥ दूहा ॥

मारिग मालै पंग वर। सारि पंग वर भंग ॥
सुवर सूर सामंत लै। करि ढिल्ली प्रति जोग ॥१९७॥
जै जै जस लद्धौ सुवर। बैर नृपति सुरतान ॥
सुवर बैर वर बड्डयौ। सुवर जित्त चहुआन ॥१९८॥

॥ कवित्त ॥

भई जीति चहुआन। अरिय भंजे अभंग भर ॥
जं जै सूर बषान। देव नंषे सुमन्न वर ॥
लै शशिव्रता राज। आप दिल्लीय संपत्तौ ॥
बंधि तोरन आनंद। नित्त रत्तौ मन मत्तौ ॥
सजि मंगल गान मंडनह। जग्ग राग अरि पंडइय ॥
हरि नंद चंद राजन कथहि। एक अदंड कारि दंडइय ॥१९९॥

कौमास-करनाटी प्रसंग

॥ कवित्त ॥

दिल्लीवै चहुआन । तपै अति तेज पग्ग वर ॥
चंपि देस सब सीम । गंजि अरि मिलय धनुद्धर ॥
रयन कुमर अति तेज । रोहि हय पिट्ठ विसंमं ॥
साथ.. राव चामंड । करै कलि किति असंमं ॥
मेवास वास गंजै द्रुगम । नेह नेह वड्ढै अनत ॥
मातुलह नेह भानेज पर । भागनेय . मातुल सुरत ॥१॥
सयन इक्क संवसहि । इक्क आसन आश्रम्महि ॥
बीरा नद्द बिहार । भार जल राह सुरम्महि ॥
भागनेय मातुलह । जानि अनि प्रीति सु उम्मर ॥
चिति चंदपुंडीर । कही प्रति. राज हित्त भर ॥
चावंड रयन सिंग्रह सु घर । अप्प नेह बंध्यौ असम ॥
जानौ सु कृत्य कारनह कलि । कलै ध्रम्म धरनिय विसम ॥२॥
राज काज दाहिम्म । रहै दरबार अप्प वर ॥
अपेटक दिल्लिय । नरेस पेलै कमंध डर ॥
देस भार मंत्रीस । राव उद्धार सु धारे ॥
न को सीम चंपवै । हद्द तप्पै सु करारे ॥
लोपौ न लीह लज्जा सयल । स्वामि ध्रम्म रप्पै सुरुप ॥
कृत नीति रीति वड्ढै विसह । बंछै लोक असोक सुप ॥३॥
राज चित्त कैमास । चित्त कैमास दासि गय ॥
नीर चित्त वर कमल । कमल चित्त वर भान गय ॥
भंवर चिंत भमरी सु । भंवर रत्तौ सु कुसुम रस ॥
ब्रम्ह लोय रत्तयौ । लोय रत्तौ सु अधम रस ॥
उतमंग ईस धरि गंग कौ । गंग उलटि फिर उदधि मिलि ॥४॥

॥ दूहा ॥

नंदी देस वनिक सुअ । वेसव नंजन वृत्त ॥
बीन जान रस बन सुघर । राजन रप्पिय हित्त ॥५॥

आजानवाह गुज्जर कनक। सोलंकी सारंग वर॥
सामलौ सूर आरज कमँध। वाम जु इष्ण विसग्ग भर ॥११॥
सुनिय सु नूपुर सद्द त्रिप। सपी स चिंतिय चित्त
मन्निय कारन सिद्ध मनि। त्रप गति दुक्कित नित्त ॥१२॥

चान्द्रायण

छतिय हथ्थ धरतं नयंनन चाहुयौ।
दासिय दष्पिन हथ्थ सु वंचि दिपाययौ॥
जिय वाना वलवान रोस रस दाहयौ॥
मानहु नाग पतित्त अप्प जगावयौ ॥१३॥

दूहा

वंचि वीर कग्गद चरह। तरकि तोन कर सज्ज॥
निर तिन कह दीनों त्रपति। सब सामंतन लज्ज ॥१४॥
आयौ त्रप इंछिनि महल। राज रीस चित मानि॥
अगनि दभ्भ्रूम कैमास कै। वीर वरन्निय पानि ॥१५॥
सुंदरि जाइ दिपाइ करि। दासी दुहुँ दाहिम्म॥
वर मंत्री प्रथिराज कहि। दइ दुवाह वर क्रम्म ॥१६॥
ना दानव ना देवगति। प्रभु मानुष त्रर चिन्ह॥
सु रस पवारि गवारि कह। प्रौढ़ मुगध मति किन्ह ॥१७॥
रमनि पिष्पि रमनिय विलसि। रजनि भयानक नाह॥
चित्र दिपाल सु चित्रंनी। मोन विलग्गिय वाह ॥१८॥
नीच वान नीचह जनिय। विलसन किित्ति अभग्ग॥
सुनहु सरूप सु मुत्ति कर। दासि चरात्रति कग्ग ॥१९॥
करकुँवंड लीनौ तमिक। अरुचि दान विधि जोय॥
चरिय कग्ग तरवर सवै। हंसनि हंसन होइ ॥२०॥
निसि अद्धी सुभ्भै नहीं। वर कैमासय काज॥
तड़ित करिग अंगुलि धरम। वान भरिग प्रथिराज ॥२१॥
वान लग्ग कैमास उर। सो ओपम कवि पाइ॥
मनो हृदय कैमास कै। हथ्थै वुभ्भिय लाइ ॥२२॥

॥ कवित्त ॥

भरिग वान चहुआन। जानि दुरदेव नाग नर॥
दिट्ठ मुट्ठि रस डुलिग। चुक्कि निकरिग्ग इक्क सर॥

दुत्ति आनि दिय हथ्थ । पुट्टि पामार पचार्‌यौ ॥
वानि वृत्त तुटि कंत । सुनत वर धरनि अपार्‌यौ ॥
इय कव्व सव सरसै गुनति । पुनित कह्यौ कविचंद तत ॥
यों पर्‌यौ कैमास आवासे तें जानि निसानन छित्रपति ॥२३॥

जिनमंत्री कैमास ग्रेह जुग्गिनि पुर आनी ।
जिन मंत्री कैमास वंध वंध्यौ पंगानी ।
जिन मंत्री कैमास जिवन वंध्यौ पट वारं ।
सो मत्त घट्ट कैमासकी दासि काज संदेह हुअ ।
दुप्पहर चाह दस दिसि फिरै कोइ छत्री मच्छहन तुअ ॥२४॥

॥ दूहा ॥

पनि गह्यौ कैमास तहं । दासी सभ करि भंग ॥
पंच नत्त सरसै सुवै । प्रात प्रगट्टै रंग ॥२५॥
जो तक पंगति उप्पज्यौ । वैनन दिपि कवि चंद ।
साम प्रागट वर कंथनह । वर प्रमान सुप इंद ॥२६॥
धपनि गह्यौ नृप सम धनह । सो दासी सुर पात ॥
दिव धारनै जलछिते । लाली कहिग सु प्रात ॥२७॥
पनि गह्यौ तिहि गव पनह । तजि गोपति गइ दासि ॥
पनि गह्यौ कैमास वर । कित है दासीं भासि ॥२८॥
सवै सूर सामंत जुरि । विना एक कैमास ॥
तस जानौ वरदाइ पन । मंत्रि जोग नन पास ॥२९॥

॥ अरिह ॥

प्रथम सूर पुच्छै चहुआनय । है कयमास कहां कहुँ जानय ॥
तरनि छिपंत संझ सिर नायौ । प्रात देय हम महल न पायौ ॥३०॥

॥ दूहा ॥

उदय अस्त तौ नयन दिठि । जल उज्जल ससि कास ॥
मोहि चंद है विजय मन । कहहि कहाँ कैमास ॥३१॥
जो छंडै सेसह धरनि । हर छंडै विप कंद ॥
रवि छंडै तप ताप कर । वर छंडै कविचंद ॥३२॥
कम्यौ चहुआन नृप । अंगुलि मुप्प फुनिंद ॥
म अति संचरे । कहै वनै कविचंद ॥३३॥

जौ पुच्छै कविचंद सों। तौ ढंकी न उघारि ॥
अब कित्ती उपर चंपौ। सिंचन जानि गमारि ॥३४॥

॥ कवित्त ॥

एक वान पहुमी। नरेस कैमासह मुक्यौ ॥
उर उप्पर थरहर्‌यौ। वीर कष्पंतर चुक्यौ ॥
वियौ वान संधान। हन्यौ सोमेसर नंदन ॥
गाढ़ौ करि निग्रह्यौ। पनिव गड्यौ संभरि धन ॥
थल छोरि न जाइ अभागरौ। गाड्यौ गुन गहि अग्गरौ ॥
इम जंपै चंद वरद्दिया। कहा निघट्टै इय प्रलौ ॥३५॥

॥ दूहा ॥

सुनि न्रपत्ति कवि के वयन। अनन वीय अवरेप।
कविय वचन सम्हौ भयौ। सूर कमोदनि देप ॥३६॥

॥ कवित्त ॥

राजन मभ्क संपरिय। पट्ट दरवार परठ्ठिय ॥
वहुरे सव सामंत। मंत्त भग्गिय सिर लठ्ठिय ॥
रह्यौ चंद वरदाइ। विमुप पग डगन सरक्क्यौ ॥
ग्रभ्भ तेज वर भट्ट। रोस जल पिन पिन सुक्क्यौ ॥
रत्तरी कंत जागंत रै। भई घरंघर वत्तरी ॥
दाहिम्म दोस लग्गयौ परौ। मिटै न कलि सों उत्तरी ॥३७॥

॥ चौपाई ॥

इह कहि ग्रेह चंद संपन्नौ। वर कैमास आसु भलपन्नौ ॥
मित्रद्रोह भट उर सपन्नौ। दाहिम वरन वरन संपन्नौ ॥३८॥

कनवज्ज समय

॥ चौपाई ॥

बैठो राजन सभा विराजं । सामँत सूर समूहति साजं ॥
विस्तरि राग कला कृत भेदं । हरषित हृदय असम सर षेदं ॥ १ ॥

॥ दूहा ॥

तत्त समै राजिंद वर । अपि सु पबरि अच्छत्त ॥
जंगम एक सु आय कहि । कमधज पुर पति बत्त ॥ २ ॥
सत्त हेम है राज इक । दिय पातुर प्रति दान ॥
नृत्ति विगति अवलोकि गुन । दई सीष थह मानि ॥ ३ ॥
पुनि जंगम प्रति उच्चरिय । कमधज्जन की कथ्थ ॥
वहुरि भिन्न करि उच्चरिय । सुनि सामंत सु नथ्थ ॥ ४ ॥

॥ चौपाई ॥

राज जग्य सज्ज्यौ कमधज्जं । देस देस हुंकारत सज्जं ॥
मिलि इक कोटि सूर भर हासं । नृप अंदेस देस रचि तासं ॥ ५ ॥
थपि दर द्वारपाल चहुआनं । लकुटिय कनक हथ्थ परिमानं ॥
आय पंग तट इष्ष समाजं । आनि अप्प चहुआन सु लाजं ॥ ६ ॥
इह सु कथा पहिली सुनि राजन । आय कही सो फीफुनि साजन ॥
लग्यौ राज श्रोतान रजानं । वुभ्भी बहुरि सु जंगम जानं ॥ ७ ॥

॥ कवित्त ॥

आवलि पंग नरेस । देस मंडन सुवेस वर ॥
वरन कज्ज चौसर । विचार संजोग दीन कर ॥
देवनाथ कवि अग्ग । वरनि नृप देस जाति गुन ॥
फुनि अप्पै संजोग । कनक विग्रह सु द्वार उन ॥
चहुआन राव सोमेस सुअ । प्रथीराज सुनि नाम वर ॥
गंध्रब्व वचन विच्चारि उर । धरि चौसर प्रथिराज गर ॥ ८ ॥

॥ दूहा ॥

देषि फेरि कहि नाथ पति । फुनि मुक्कलि कविराज ॥
वहुरि जाहु पंगानि अग । विचरैं नृपति समाज ॥ ९ ॥

॥ कवित्त ॥

बहुरि नाम गुन जाति । देस पित प्रपित विरद वर ॥
लै लै नाम पराम । देवजानी स देव कर ॥
फुनि चहुआन सु पास । जाय ठढ्ढे भय जामं ॥
कछु कवि रद्दिय राज । कछुक जंपे गुन तामं ॥
नृप लज्ज पंग ग्रह भट्ट वर । तुच्छ संपेप सु उच्चर्‌यौ ॥
संजोग समझ्झे उर वरह । कंठ प्रथ्थु चौसर धर्‌यौ ॥१०॥

॥ दूहा ॥

दुसर राज इह देपि सुनि । तिय सु नाथ उर जाम ॥
सपत हथ्थ सुर जा धरिय । प्रचरि नरेसनि ताम ॥११॥

॥ कवित्त ॥

फुनि नरेस अदेस । नाथ फिरि आय मझ्झ दर ॥
आदि वंस रचि नाम । चवत विक्रम्म क्रम्म वर ॥
दई पानि कवि जानि । होत काहू कर मंडं ॥
भूत भविष्पत वत्त भव्वि जानी उर, चंडं ॥
उतकंठ लोकि प्रतिमा प्रतपि । दिपि देव देवाधि सचि ॥
वरनी संजोग चहुआन वर । पहुप दाम ग्रीवा सु रचि ॥१२॥

॥ दूहा ॥

कोप कलंमल पंग पहु । समय विरंचि विचारि ॥
रोस सोस उर धारि तव । क्रम मति भई न चारि ॥१३॥
उठ्ठि राज अंदरह दर । कियौ प्रवेस अपान ॥
विमुप निमुप दिष्यौ नृपति । देव क्रत्य परमान ॥१४॥

॥ कवित्त ॥

दइल काल सुनि पंग । जग्य विग्गर्‌यौ दच्छ पति ॥
दुपद राय पंचाल । जग्य विग्गर्‌यौ इष्ट रति ॥
दइय काल दुजराज । जग्य विग्गर्‌यौ सु जानं ॥
त्रघुप राइ राज सू । गत्त जानी परमानं ॥
श्रुति वर पुरान श्रोतास वल । विधि विचार मंडिय सकल ॥
त्रय काल काल सामंत कहि । दइय काल माने अकल ॥१५॥

॥ दूहा ॥

आदि कथा संजोग की। पहिलें सुनी नरेस ॥
अब इह जंगम आय कहि। विधि मिलयन संदेस ॥१६॥

॥ कवित्त ॥

रचि अवास रा पंग। गंग दंगह उतंग तट ॥
दासि सहस सुंदरिय प्रसंग। कल ग्यान भाव पट ॥
वृत उचार चहुआन। धरत कर करत अप्प पर ॥
पंच धेन पूजंत। बचन मन क्रम्म गवरि हर ॥
सुनि पुनि नरेस संदेह दिढ़। सोफी फुनि जंगल कहिय ॥
आरत्ति चरित चहुआन मन। दहय भेद चित्तह गहिय ॥१७॥

॥ दूहा ॥

पहिल ग्यान जंगम कहिय। दुतिय सो सोफी आनि।
तब प्रथिराज नरिंद ने। दैव काल पहिचानि ॥१८॥

॥ पद्धरी ॥

लग्यौ सु राज श्रोतान राग। संजोग वृत संभरि समाग ॥
अति असम बान वेधे सरीर। नह धीर हसं नह भाव धीर ॥१९॥

॥ दूहा ॥

लगि बान अनुराग उर। मनमथ प्रेरि वसंति ॥
सहै नृपति अप्पै न कहुँ। पेदे रिदय असंत ॥२०॥

॥ कवित्त ॥

दंग सुरंग पलास। जंग जीते वसंत तपु ॥
मदन मानि मन मोद। लीन छेदे अछेद वपु ॥
देस नरेस अहेस। देस आदेस काम कर ॥
नीर तीर नाराच। पंग वेधे अवेध पर ॥
कलमलत चित्त चहुआन तब। उर उपजै संजोग वृत ॥
बरदाय बोलि तिहि काल कवि। मन अनंत मति उधृति ॥२१॥

॥ दूहा ॥

सुक वरनन संजोग गुन। उर लग्गे छुटि बान ॥
धिन धिन मल्लै वार पर। न लहै वेद विनान ॥२२॥

भय श्रोतान नारिंद मन। पुच्छै फिरि कविरज्ज ॥
दिष्पावै दलपंगुरौ। धर ग्रीपम कनवज्ज ॥२३॥

॥ कवित्त ॥

दीसै वह विध चरिय। सुअन नर दुअन भनिज्जै ॥
बल कलियै अप्पान। किंत्ति अप्पनी सुनिज्जै ॥
हीडिज्जै तिहि काज। दुष्प सुष्पह भोगिज्जै ॥
तुच्छ आव संसार। चित मनोरथ पोपिज्जै ॥
दिष्पियै देस कनवज्ज वर। कही राज कवि चंद कहि ॥
मुक्कही सूर छल संग्रहै। तौ पंग दरसन तत्त लहि ॥२४॥

॥ दूहा ॥

पुच्छि गयौ कविचंद को। इंछिनि महल नरिंद ॥
सुंदरि दिसि कनवज्ज कौ। चलै कहै धर इंद ॥२५॥
इन रिति सुन चहुवान वर। चलन कहै जिन जीय ॥
हों जानूं पहिलै चलै। प्रान प्रयान कि पीय ॥२६॥
प्रान ज्ञाव दूनों चलै। आन अटक्कै घंट ॥
निकसन कों झगरौ पर्‌यौ। रुक्यौ गदगद कंठ ॥२७॥

॥ साटक ॥

स्यामंगं कलधूत नूत सिपरं, मधुरे मधू वेप्टिता ॥
वाते सीत सुगंध मंद सरसा, आलोल संचेष्टिता ॥
कंठी कंठ कुलाहले मुकलया, कामस्य उद्दीपने ॥
रत्ते रत्त वसंत मत्त सरसा, संजोग भोगायते ॥२८॥

॥ कवित्त ॥

मवरि अंव फुल्लिग। कदंव रयनी दिघ दीसं ॥
भवर भाव भुल्लै। भ्रमंत मकरंदव सीसं ॥
हत वात उज्जलति। मौर अति विरह अगनि किय ॥
हकुहंत कल कंठ। पत्र रापस रति अग्गिय ॥
लग्गि प्रान पति वीनवों। नाह नेह मुझ चित धरहु ॥
दिन अवद्धि जुव्वन घटय। कंत वसंत न गम करहु ॥२९॥
चलिय वन पवन। भ्रमत मकरंद कंवल कलि ॥
सुगंध तहं जाइ। करत गुंजार अलिय मिलि॥

वल हीना डगमगहि । भाग आवै भोगी जन ॥
उर धर लगै समूह । कंपि भौ सीत भयत ननं ॥
लत परी ललित सब पहुप रति । तन सनेह जल पवित किय ॥
निक्करै भ्रंग अंवुज हरुग्र । सीत सुगंध सुमंद लिय ॥३०॥

॥ साटक ॥

लैवंधं सुर थट्ट डंक्रित मधू, उन्मत्त भ्रंगी धुनी ॥
कंद्रप्पे सु मनो वसंत रमनं, प्राप्तो धनं पावनं ॥
कामं तेग मनं धनुष्प सजनं, भीतं वियोगी मुनी ॥
विरहिन्या तन ताप पत्त सरसा, संजोगिनी सोभनं ॥३१॥

॥ कुंडलिया ॥

इहि रिति मुक्कि न बाल प्रिय । सुप भारी मन लुट्टि ॥
कामिनि कंत समीप विन । हुई पंड उर फुठ्ठि ॥
हुई पंड उर फुट्टि । रसन कुह कुह आरोहै ॥
चलन कहै जो पीय । गात वर भग्गो सोहै ॥
नयन उमगि कन वीय । सोभ ओपम पाई जिहि ॥
मनों पंजन त्रिय वाल । गहिय नंपत सुत्तिय इहि ॥३२॥

॥ दूहा ॥

इहि रिति रप्पिय इंछिनिय । भय ग्रीपम रितु चारु ॥
कांम रूप करि गय नृपति । पुंडीरनी दुआर ॥३३॥
सुनि सुंदरि पहु पंग की । दिसि चालन कौ मज्ज ॥
वर उत्तम धर दिप्पियै । पिप्पन भर कनवज्ज ॥३४॥
नृप ग्रीपम ग्रिह सुप्पनर । ग्रेह मुक्कि नन राज ॥
गोमगांम छांदिय अमर । पंथ न सुझ्झै आज ॥३५॥

॥ कवित्त ॥

दीरघ दिन निस हीन । छीन जलधर वैसंनर ॥
चक्रवाक चित मुदित । उदित रवि थकित पंथ नर ॥
चलत पवन पावक । समान परसत सु ताप मन ॥
सुकत सरोवर मचत । कीच तलफंत मीन तन ॥
दीसंत दिगम्बर सम सुरत । तरु लतान गय पत्त झरि ॥
अक्कुलं दीह संपनि विपति । कंत गमन ग्रीपम न करि ॥३६॥

॥ साटक ॥

दीहा दिग्घ सदंग कोप अनिला, आवर्त मित्ता करं ॥
रेनं सेन दिसान थान मिलनं, गोमग्ग आडंवरं ॥
नीरे नीर अपीन छीन छपया, तपया तरुण्या तनं ॥
मलया चंदन चंद मंद किरनं, ग्रीष्मं च आपेवनं ॥३७॥

॥ कवित्त ॥

पवन त्रिविध गति मुक्कि । सेन भुअ पत्ति जूथ चलि ॥
विरह जाम वर कदन । मदन मैं मंत पील हलि ॥
पथिक वधू सं भरे । आस आवन चंदाननि ॥
जो चालै चहुआन तौ । मरै फुटि उर त्रंननि ॥
मन भुअन आन दैतो फिरै । प्रिय आगम गज्जै मयन ॥
कंता न मुक्कि वर किति गर । कहूँ सुनो सोनिय वयन ॥३८॥
षिन तरुनी तन तपै । वहै नित त्राव रयन दिन ॥
दिसि च्यारों परजलै । नहिं कहों सीत अरध पिन ॥
जल जलंत पीवंत । रुहिर निसि वास निघट्टै ॥
कठिन पंथ काया । कलेस दिन रयनि सघट्टै ॥
त्रिय लहै तत्त अप्पर कहै । गुनिय न ग्रवृत्र न मंडियै ॥
सुनि कंत सुमति संपति विपति । ग्रीपम ग्रेह न छंडियै ॥३९॥

॥ गीतामालची ॥

त्रिय ताप अंगति दंग दवरति दवरि छव रित भूपनं ॥
कुरु मेह पेहति ग्रेह लुंपिति स्वेद संवित अंगनं ॥
नर रहित अनहित पंथ पंगति पंगयौ जित गोधनं ॥
रवि रत्त मत्तह अब्भ उद्दिक कोप कर्कस मोपनं ॥४०॥
जल वुढ्ढि उठ्ठि समूह वल्लिय मनों सावन आवनं ॥
हिंडोल लोलति वाल सुप सुर ग्राम सुर सुर गावनं ॥
कुसमंग चीर गंभीर गंधित मुंद वुंद सुहावनं ॥
ढलकंत वेनिय तठ्ठ ऐनिय चंद्र सैंनिय आननं ॥४१॥
ताटंक चंचल लजित अंचल मधुर मेपल रावनं ॥
रव रंग नूपुर हंस दो सुर कंज ज्यौं पुर पावनं ॥
नप द्रप्प द्रप्पन देपि अप्पन कोपि कंपि सु नावनं ॥
दमकंद दामिनि दसन कामिनि जूथ जामिनि जाननं ॥४२॥

॥ दूहा ॥

मान रूप मानिन वचन। रहि ग्रीषम वर नेह॥
पावस आगम धर अगम। गय इंद्रावति ग्रेह॥४३॥
पीय वदन सो प्रिय परषि। हरष न भय सुनि गौन॥
आँसू मिसि असु उप्पटै। उत्तर देय सलोन॥४४॥

॥ साटक ॥

अब्दे वद्दल मत्त मत्त विसया, दामिन्य दामायते॥
दादूरं दर मोर सोर सरिसा, पप्पी चीहायते॥
शृंगारीय वसुंधरा मलिलता, लीला समुद्रायते॥
जामिन्या सम वासुरो विसरंता, पावस्स पंथानते॥४५॥

॥ कवित्त ॥

मग सज्जल सुभ्भूफैन। दिसा धुंधरी सघन करि॥
रति पहुवी कि चरित्त। लता तरु वीटि सुमन भरि॥
आलिंगत धर अभ्भ। मान मानिन ललचावत॥
वर भद्रव कद्रव मचंत। कद्रव विरुझावत॥
चतुरंग सेन वै गढ दहन। घन सज्जिय नृप चढिन तिन॥
भरतार संग वंछै त्रिया। त्रिन कतार भ्रत्तार विन॥४६॥
घन गरजै वरहरै। पलक निसरेनि निवटटै॥
सजल सरोवर पिष्षि। हियौ तत छिन धन फट्टै॥
जल वद्दल वरषंत। पेम पल्हरै निरंतर॥
कोकिल सुर उच्चरै। अंग पहरंत पंच सर॥
दादुरह मोर दामिनि दसय। अरि चवथ्थ चातक्क रटय॥
पावस प्रवेस बालम न चलि। विरह अगनि तनतप घटय॥४७॥
घुमड़ि घोर घन गरजि। करत आडंबर अंमर॥
पूरत जलधर धसत। धार पथ थकित दिगंबर॥
झंझकित द्रिग सिसु म्रग। समान दमकत दामिनि द्रसि॥
विहरत चात्रग चुवत। पीय दुपंत समं निसि॥
ग्रीषंम विरह द्रुम लता तन। परिरंभन कत सेन हरि॥
सज्जंत काम निसि पंचसर। पावस पिय न प्रवासकरि॥४८॥

॥ चंद्रायना ॥

विजय विहसि द्रिगपाल पायननि पंच किय॥
विरहनि चित्त गढ़ दहन मघव धनु अग्र लिय॥

गरजि गहर जल भरित हरित छिति छत्र किय ॥
मनहु दिसान निसानति आनि अनंग दिय ॥४९॥

॥ गीतामालची ॥

द्रिग भरित धूमिल जुरति भूमिल कुमुद त्रिम्मल सोभिलं ॥
द्रुम अंग वल्लिय सीस हल्लिय कुरलि कंठह कोकिलं ।
कुसुमंज कुंज सरीर सुब्भर सलिल दुम्भर सद्दयं ॥
नद रोर दद्दर मोर नद्दुर बनसि वद्दर वद्दयं ॥५०॥
झम झमकि विज्जल काम किज्जल श्रवति सज्जल कद्दयं ॥
पप्पीह चीहति जीह जंजिर मोर मंजरि मंद्दयं ॥
जगमगति झिंगन निसि सुरंभन भय अभय निसि हद्दयं ॥
मिलि हंस हंसि सुवास सुंदरि उरसि आनन निद्धयं ॥५१॥
उट सास आस सुवास वासुर छलित कलि वपु सद्दयं ॥
संयोग भोग संयोग गामिनि विलसिराजन भद्दयं ॥५२॥

॥ साटक ॥

जे विज्जु झ्झल फुट्टि तुट्टि तिमिरं, पुन अंधनं दुस्सहं ॥
बुंदं घोर तरं सहंत असहं, बरपा रसं संभरं ॥
विरहीनं दिन दुष्ट दारुन भरं, भोगो सरं सोभनं ॥
मा मुक्के पिय गोरियं च अवलं, प्रीतं तया तुच्छया ॥५३॥

॥ दूहा ॥

सुनि श्रावन बरिषा सघन । सुप निवास त्रिप कीय ॥
वर पूरन पावस कियौ । राज पयान सु दीय ॥५४॥
हंसावति सुंदरि सुग्रह । गवौ प्रीय प्रथिराज ॥
धर उत्तिम कनवज्ज दिसि । चलन कहत नृप आज ॥५५॥
दिष्पि वदन पिय पोमिनी । फुनि जंपै फिरि वाल ॥
सरद रवन्नौ चंद निसि । कित लब्भै छुटि काल ॥५६॥

॥ साटक ॥

पित्ते पुत्त सनेह गेह गुपता, जुगता न दिव्यादने ॥
राजा छत्रनि साज राज छितिया, निंदायि नीवासने ॥

कुसुमेपं तन चंद त्रिम्मल कला, दीपाय वरदायने ॥
मा मुक्के प्रिय बाल नाल समया, सरदाय दर दायने ॥५७॥

॥ दूहा ॥

आयौ सरद स इंद्र रिति । चित पिय पिया संजोग ॥
दिन दिन मन केली चढ़े । रस जु लाज अलि भोग ॥५८॥

॥ कवित्त ॥

पिष्पि रयनि त्रिम्मलिय । फूल फूलंत अमर धर ॥
श्रवन सबद नहिं सुझै । हंस कुरलंत मान सर ॥
कवल कद्रव विगसंत । तिनह हिमकर परजारै ॥
तुमहि चलत परदेस । नहीं कोइ सरन उबारै ॥
निग्रहन रत्त भरपंच सर । अरि अनंग अंगै वहै ॥
जौ कंत गवन सरदै कहै । तौ विरहिनि सिप ह्वै दहै ॥५९॥
द्रप्पन सम आकास । श्रवत्त जल अमृत हिमकर ॥
उज्जल जल सलिता सु । सिद्धि सुंदर सरोज सर ॥
प्रफुलित ललित लतानि । करत गुंजारव भंमर ॥
उद्दति सित्त निसि नूर । अंगि अति उमगि अंग वर ॥
तलफंत प्रान निसि भवन तन । देपत दुति रिति सुप जरद ॥
नन करहु गवन नन भवन तजि । कंत दुसह दारुन सरद । ६०॥

॥ माधुर्य ॥

लहु वरन पट विय सत्ता, चामर वीय तीय पयोहरे ॥
माधुर्य छंदय चंद जंपंय, नाग वाग समोहरे ॥
अति सरद सुभगति राज राजति सुमति काम उमद्दयं ॥
ग्रह दीप दीपति जूप जूपति भूपति भूप भूपति सद्दयं ॥६१॥
नव नलिनि अलि मिलि अलिन अलि मिलि अलिनि अलिव्रत मंडियं ॥
चक चक्की चक्रित चकोर चप्पित चच्छ छंडित चंदयं ॥
दुज अलस अलसनि कुसुम अच्छित कुसुम मुदित मुद्दयं ॥
भव भवन उच्छव तरु असोकहि देव दिव्य निनद्दयं ॥६२॥
नौरना मंत्रहि त्रपति राजत वीर भंभरि वग्गयं ॥
महि महिल लच्छिर सुभ्रित अच्छिर सकति पाठ सुदुग्गयं ॥
अट्ठार भारह पुपित अग्रित अधर अमृत भामिनी ॥
रस नीय राजन लहय सोजन सरद दीपक जामिनी ॥६३॥

कुसुमेपं तन चंद त्रिम्मल कला, दीपाय वरदायने ॥
मा मुक्के प्रिय बाल नाल समया, सरदाय दर दायने ॥५७॥

॥ दूहा ॥

आयौ सरद स इंद्र रिति । चित पिय पिया संजोग ॥
दिन दिन मन केली चढ़े । रस जु लाज अलि भोग ॥५८॥

॥ कवित्त ॥

पिष्पि रयनि त्रिम्मलिय । फूल फूलंत अमर धर ॥
श्रवन सब्द नहिं सुभै । हंस कुरलंत मान सर ॥
कवल कद्रव विगसंत । तिनह हिमकर परजारै ॥
तुमहि चलत परदेस । नहीं कोइ सरन उबारै ॥
निग्रहन रत्त भरपंच सर । अरि अनंग अंगै वहै ॥
जौ कंत गवन सरदै कहै । तौ विरहिनि सिप ह्वै दहै ॥५९॥
द्रप्पन सम आकास । श्रवत जल अमृत हिमकर ॥
उज्जल जल सलिता सु । सिद्धि सुंदर सरोज सर ॥
प्रफुलित ललित लतानि । करत गुंजारव भंमर ॥
उदति सित्त निसि नूर । अंगि अति उमगि अंग वर ॥
तलफंत प्रान निसि भवन तन । देपत दुति रिति मुप जरद ॥
नन करहु गवन नन भवन तजि । कंत दुसह दारुन सरद । ६०॥

॥ माधुर्य ॥

लहु वरन पट विय सत्त, चामर वीय तीय पयोहरे ॥
माधुर्य छंदय चंद जंपय, नाग बाग समोहरे ॥
अति सरद सुभगति राज राजति सुमति काम उमद्दयं ॥
मह दीप दीपति जूप जूपति भूपति भूप भूपति सद्दयं ॥६१॥
नव नलिनि अलि मिलि अलिन अलि मिलि अलिनि अलिव्रत मंडियं ॥
चक चक्की चक्कित चकोर चप्पित चच्छ छंडित चंदयं ॥
दुज अलस अलसनि कुसुम अच्छित कुसुम मुदित मुद्दयं ॥
भव भवन उच्छव तरु असोकहि देव दिव्य निनद्दयं ॥६२॥
नौरता मंत्रहि त्रपति राजत वीर झंझरि वग्गयं ॥
महि महिल लच्छिर सुभ्रित अच्छिर सकति पाठ सुदुग्गयं ॥
अट्ठार भारद पुपित अग्रित अधर अमृत भामिनी ॥
रस नीय राजन लहय सोजन सरद दीपक जामिनी ॥६३॥

हिम वित्यौ आगम शिशिर। चलन चाइ चहुआन ॥
सुनि पिय आगम शिशिर कौ। क्यों मुक्कै ग्रिह थान ॥७६॥

॥ साटक ॥

रोमाली वन नीर निद्ध चरयो गिरिदंग नारायने ॥
पञ्चय पीन कुचानि जानि मलया, फुंकार झुंकारए ॥
सिसिरे सर्वरि वारुनी च विरहा माहद्र मुव्वारए ॥
मां कंते म्रिगवद्ध मध्य गमने, किं दैव उच्चारए ॥८०॥

॥ दूहा ॥

अरिय सघन जीतन दिसा। चलन कहत चहुआन ॥
रतिपति चल होइ पिथ्थ गय। ग्रह हमीर ग्रिह जानि ॥८१॥

॥ कवित्त ॥

आगम फाग अवंत। कंत सुनि मित्त सनेही ॥
सीत अंत तप तुच्छ। होइ आनँद सब ग्रेही ॥
नर नारी दिन रैनि। मैंन मदमाते डुल्लैं ॥
सकुच न हिय छिन एक। वचन मनमानै वुल्लैं ॥
सनौ कंत सुभ चित करि। रयनि गवन किम कीजइय ॥
कहि नारि पीय विन कामनी। रिति ससिहर किम जीजइय ॥८२॥

॥ हनूफाल ॥

गुर गरुअ चामर नंद। लहु वरन विच विच इंद ॥
विवहार पय पय वंद। इति हनूमानय छंद ॥८३॥
रिति ससिर सरवरि सोर। परि पवन पत्त झकोर ॥
पन त्रिगुन तुल्ल तमोर। वन अगर गंध निचोर ॥८४॥
भुअ भोज व्यंजन भोर। लव अमर तिष्प कठोर ॥
रस मधुर मिष्टित थोर। रति रसन रमनति जोर ॥८५॥
कल कलस त्रित्ति किलीर। वय स्याम गुन अति गोर ॥
परि पेम पेम सजोर। अवलोक लोचन ओर ॥८६॥
इति ससिर सुप विलसंत। रिति राइ आय वसंत ॥
षट्ट रित्तु षट रमनीय। रपि चंद वरनन कीय ॥८७॥

गिरि कंद्र जल पीन । पियन अधरारस भारी ॥
जोगिनीद् मद् उमद् । कै छगन वसन सवारी ॥
अनुराग वीत कै राग मन । वचन तीय गिर झरन रति ॥
संसार विकट इन विधि तिरय । इही विधी सुर असुर अति ॥६७॥
रोमावलि वन जुथ्थ । वीच कुच कूट मार गज ॥
हिरदै उजल विसाल । चित्त आराधि मंडि सज ॥
विरह करन कीलइ । सिद्ध कामिनी डरप्पै ॥
तो चलंत चहुआन । दीन छंडे पै रुप्पै ॥
हिमवंत कंत मुक्कैन त्रिय । पिया पत्र पोमिनी परपि ॥
ग्रहि कंठ कंठ ऊठन अवनि । चलत तोहि लगिवाय रूप ॥७०॥
न चलि कंत सुभचित । धनी बहुवित प्रगासौ ॥
गह गहि ऐसो प्रेम । सौज आनंद उहासी ॥
दीरघ निसि दिन तुच्छ । सीत संतावै अंगा ॥
अधर दसन थरहरै । गात परजरै अनंगा ॥
जा ऐनि रैनि हर हर जपत । चक्क सद्द चक्की कियौ ॥
हिमवंन कंन सुग्रह ग्रहति । हहकरंत फुट्टै हियौ ॥७१॥

॥ त्रोटक ॥

गुरु पंच सुभै दस मत्तपयो । श्रिय नाग हर्यौ हरवाहनयो ॥
इति छंद विछंद विलास लहै । तत त्रोटक छंद सुचदं कहै ॥७२॥
दिव दुर्ग निसा दिन तुच्छ रवै । जरि सीत वनं वनवारि जवै ॥
चक चक्कि चकी जिम चित्त भवै । नितवांम प्रिया मुप मोरि ठवै ॥७३॥
विरही जन रंजन हारि भियं । घनसार मृगंमद पुंज कियं ॥
पहुपंकति पुंजति कन्त जियं । परिरंभन रंभन रे रतियं ॥७४॥
नव कुंडल मंडल क्रन्न रमै । कच अभ्रपटी जनु वीज भ्रमै ॥
कुसमावलि तुट्टि लवग लगं । चरनं रचिं छुट्टति पंति वगं ॥७५॥
श्रम चुंदति मुत्ति झरं उरनं । झलनी जनु गिम्ह सिवं सरनं ॥
कटि मंडल घंटि रमन्नि रवै । मुरमंजु मंजीर अमीय श्रवै ॥७६॥
रति ओज मनोज तरंग भरी । हिमवंत महा रित राज करी ॥७७॥

॥ दूहा ॥

संगम सुप सुत्तौ नृपति । म्रिह थिन एक न होइ ॥
सुनि चहुआन नरिंद वर । सीन न मुक्कै तोइ ॥७८॥

तनु तुरंग बर वज्र। वज्र ठेलै वज्रानन ॥
वर भारथ सम सूर। देव दानव मानव नन ॥
नरजीव नाम भंजन अरिय। रुद्र भेस दरसन न्रपति ॥
मेट्यौ सु यह भर सम्भई। दिपति दीप दिवलोक पति ॥९६॥
कनवज्जह जयचंद। चल्यौ दिल्लीपति पिष्पन ॥
चंद बरद्दिय तथ्थ। सथ्थ सामंत सूर घन ॥
चाहुआन कूरंभ। गौर गाजी बडगुज्जर ॥
जादव रा रघुवंस। पार पुंडीरति पष्पर ॥
इत्तने सहित भूपति छढ्यौ। उड़ी रेन छीनी नभौ ॥
इक लष्प लष्प बर लेपिए। चले सथ्थ रजपूत सौ ॥९७॥

॥ दूहा ॥

तट कालिंद्री तहं विमल। करि मुकाम नृप राज ॥
सथ्थ सयन सामंत भर। सूर जु आये साज ॥९८॥

॥ दूहा ॥

रति माधव मोरे सु तरु। पुहप पत्र वन वेलि ॥
राज कवी करतह चले। सम सामंतन केलि ॥९९॥

॥ दूहा ॥

इन सग्गुन दिल्लिय न्रपति। संपत्तौ भूसाम ॥
कोस तीस दुअं अग्गरौ। कियौ मुकाम सु ताम ॥१००॥
सद्दि राज रनवीर तहं। किय भोजन सु उताम ॥
सब आहारे अन्न रस। चढ्या जाम निसि जाम ॥१०१॥

॥ दूहा ॥

पहु फट्टिय घट्टिय तिमिर। तमचूरिय कर भान ॥
पहुमिय पाय प्रहारनह। उदो होत असमान ॥१०२॥
रत्तंबर दीसै सुरविं। किरन परष्पिय लेत ॥
कलस पंग नहिं होय यह। विय रवि वंध्यौ नेत ॥१०३॥
रवि तंमुह संमुह उठ्यौ। इह है मग्ग समुझ्झि ॥
भूलि भट्ट पुव्वह चलिय। कहि उत्तर कनवज्ज ॥१०४॥
वंचत्त फूलिय अर्क वन। रतनह किरनि प्रसार ॥
सुचि कलस जयचंद घर। संभरि संभरिवार ॥१०५॥

॥ कवित्त ॥

कुंज कुंज प्रति मधुप । पुंज गुंजत वैरनि धुनि ॥
ललित कंठ कोकिल । कलाप कोलाहल सुनि सुनि ॥
राजत वन मंडित । पराग सौरंभ सुगंधिन ॥
विकसे किंसुक विहि । कदंव आनंद विविध धुनि ॥
परिरंभ लता तरवरह सम । भए समह वर अनग तिथि ॥
विच्छुरन छिनक संपत्ति पति । कंत असंत वसंत रिति ॥८८॥

॥ दूहा ॥

पट रिति वारह मास गय । फिरि आयौ रु वसंत ॥
सो रिति चंद वताउ मुहि । तिया न भावै कंत ॥८९॥
जौ नलिनी नीरहि तजै । सेस तजै सुरतंत ॥
जौ सुवास मधुकर तजै । तौ तिय तजै सु कंत ॥९०॥
रोस भरै उर कामिनी । होइ मलिन सिर अंग ॥
उहि रिति त्रिया न भावई । सुनि चुहान चतुरंग ॥९१॥

॥ चौपाई ॥

पट्ट सु वरनी त्रिथ पट मासं । रप्पे वर चहुआन विलासं ॥
ज्यों भवरी भवरं कुसुमंगा । त्यों प्रथिराज कियौ सुप अंगा ॥९२॥

॥ दूहा ॥

वर वसंत अग्गें जियति । सेन सजी वहु भार ॥
दिसि कनवज वर चढ़न कों । चितवति संभरिवार ॥९३॥
कै जानै कविचंदई । कै प्रयान प्रथिराज ॥
सिन सामंन सु संमुहे । पंगराय ग्रह काज ॥९४॥

॥ दूहा ॥

ग्यारह से एकानवै । चैत तीज रविवार ॥
कनवज देपन कारनें । चल्यौ सु संभरिवार ॥९५॥

॥ कवित्त ॥

ग्यारह से असवार । लप्प लीने मधि लेलं ॥
इसे सूर सामंत । एक अरि दल वल भग्गं ॥

तनु तुरंग वर वज्र। वज्र ठेलै वज्रानन ॥
वर भारथ सम सूर। देव दानव मानव नन ॥
नर जीव नाम भंजन अरिय। रुद्र भेस दरसन त्रपति ॥
मेट्यौ सु यह भर सम्भई। दिपति दीप दिवलोक पति ॥९६॥
कनवज्जह जयचंद। चल्यौ दिल्लीपति पिष्पन ॥
चंद बरद्दिय तथ्थ। सथ्थ सामंत सूर घन ॥
चाहुआन कूरंभ। गौर गाजी बडगुज्जर ॥
जादव रा रघुवंस। पार पुंडीरति पष्पर ॥
इत्तने सहित भूपति छढ्यौ। उड़ी रेन छीनी नभौ ॥
इक लष्य लष्प बर लेपिए। चले सथ्थ रजपूत सौ ॥९७॥

॥ दूहा ॥

तट कालिंद्री तहं विमल। करि मुकाम नृप राज ॥
सथ्थ सयन सामंत भर। सूर जु आये साज ॥९८॥

॥ दूहा ॥

रति माधव मोरे सु तरु। पुहप पत्र वन वेलि ॥
राज कबी करतह चले। सम सामंतन केलि ॥९९॥

॥ दूहा ॥

इन सग्गुन दिल्लिय त्रपति। संपत्तौ भूसाम ॥
कोस तीस दुअ अग्गरौ। कियौ मुकाम सु ताम ॥१००॥
सह्हि राज रनवीर तहं। किय भोजन सु उताम ॥
सव आहारे अन्न रस। चढ्या जाम निसि जाम ॥१०१॥

॥ दूहा ॥

पहु फट्टिय घट्टिय तिमिर। तमचूरिय कर भान ॥
पहुमिय पाय प्रहारनह। उदो होत असमान ॥१०२॥
रत्तंबर दीसै सुरविं। किरन परष्पिय लेत ॥
कलस पंग नहिं होय यह। विय रवि बंध्यौ नेत ॥१०३॥
रवि तंमुह संमुह उठ्यौ। इह है मग्ग समुझ्झि ॥
भूलि भट्ट पुव्वह चलिय। कहि उत्तर कनवज्ज ॥१०४॥
वंचन फूलिय अर्क वन। रतनह किरनि प्रसार ॥
सुचि कलस जयचंद घर। संभरि संभरिवार ॥१०५॥

गंगा तट साधन सकल । करहि जु भाँति अनेक ॥
नट नाटिक संभरि धनी । वर विख्यात छवि केक ॥१०६॥

॥ कवित्त ॥

अंबुज सुत उभया विलोकि । वेद पढ़त पलि वीरज ॥
सहस बहत्तरि कुंअर । उपजि भीजंत गंग रज ॥
आभूषण अंबर सुगंध । कवच आयुध रथ संतर ॥
रविमंडल के पास । रहत चौकी सु निरंतर ॥
चहुवांन चमूं तिन समर जत । सु कविचंद ओपम कथिय ॥
सामंत सूर परिगह सकल । उतरि तट्ट भागीरथिय ।१०७॥

॥ दूहा ॥

रहसि केलि गंगह उदक । सम नरिंद किय केलि ॥
चिरन त्रिभंगी छंद पढि । चंद सु पिंगल मेलि ॥१०८॥

॥ त्रिभंगी ॥

हरि हरि गंगे तरल तरंगे अघ क्रित भंगे त्रित चंगे ॥
हर सिर परसंगे जटनि विलंगे विहरति दंगे जल जंगे ॥
गुन गंध्रव छंदे जै जै वंदे क्रित अघ कंदे सुप चंदे ॥
मति उच गति मंदे दरसत नंदे पढ़ि वर छंदे गत दंदे ॥१०९॥

॥ दूहा ॥

कूच करिग भावी श्रवन । वर वर चलि सहरत्त ॥
प्रात भयौ कनवज्ज फिरि । सुनि निसान धुनि पत्त ॥११०॥
हर सिद्धी परनाम करि । राषि समंत सु साज ॥
कनवज दिष्पन राज मह । चल्यौ चंद वर राज ॥१११॥
भवर टोल झंकार वर । सुमन राइ फल लिद्ध ॥
कूर दिष्ट मन रह वडी । ससि तारक भ्रित रिद्ध ॥११२॥

॥ पद्धरी ॥

वर नग्ग वग्ग निद्धु कोद दिष्षि । विस्तार पंच जोजन्न लष्षि ॥
फद्ध नग्ग भोंगि निर्द्धु नग्ग दिस्सि । नारिंग सुमन दारिम विगस्सि ॥११३॥
अतिच्छंय थंभ कलकल सरूप । उप्पन्न तास बरनन अनूप ॥
नव सिद्ध नारि मद जल प्रवेस । कुसकंत कुंड दिष्षी सुदेस ॥११४॥

प्रतिव्यंव झलक्कि चंपक प्रसून । उप्पंम देपि कविचंद दून ॥
दीपक्क माल मनमथ्थ कीन । हरभयति दिष्पि इह लोक दीन ॥
हलहलत लता दमकंत वाय । मनु वध्धौ सपतसुर भंग पाइ ॥
चल्लै सुगंध वर सीत वत्त । जानियै सव्व्र हथ्थीन जित्त ॥११६॥

॥ भुजंगी ॥

तहां प्रात प्रातं विंवं अंव मौरे । सुरं कंठ कलियंठ रस प्रस्स झोरे ॥
फली फूल वेली तरु चढ्ढि सौहै । तिनं ओपमा दैन कविचंद मोहै ॥
रवी तेज देपी ससी बाल भागी । मनों तारिका उड्डि तर सव्व्र लागी ॥
कहों जूहि जंभीर गंभीर वासी । तभी तप्पनी सेव सीसंम सासी ॥११८॥
भ्रसै मोर मकरंद उडि बाग में ही । मनों विरहिनी दिघ्घ उस्सास लेही ॥
कित्ते एक बीजोर फल भार लुट्टै । मनों जीवनं पीउ पीयूप फुट्टै ॥११९॥
कहूं सेवसत्ती फुलै ते प्रकारं । किधों दिष्पियं प्रगट मकरंद तारं ॥
कहूँ सोभही थट्ट गुल्लाल फूलं । चगं भोर मकरंद सहफूल भूलं ॥१२०॥
वरं बोरसरि फूल फूली सुरगी । छके भोर भौरं मनं होइ पंगी ॥
कहूँ कद्दली सेसुरंगं जु पंती । किधों संत मथ्थं कि वीचैं धमंती ॥१२१॥
वरी एक चहुआन तिन थान राही । असंसार संसार संसार काही ॥
तरं पिंड आकास फुल्लै निनारै । वरन्नं वरन्नं अनेकं सवारे ॥१२२॥
सवैं कव्विराजं उपम्मा न पग्गी । मनों नौ ग्रहं वार रस आय मग्गी ॥
कवी जे जुवानं मनं ओप जानै । कवी जेम वत्तं रसं सो वपानै ॥१२३॥
न लाले न पिंगी पजूरं अमग्गी । नरं उंच त्रिपंत सो सीस पग्गी ॥१२४॥

॥ दूहा ॥

विलम सगुन चल्यौ नृपति । नेन दरसि सो सथ्थ ॥
वर दीसो हट नैर कौ । मिलन प्रसारत हथ्थ ॥१२५॥
नगर प्रवेसनि देपि नृप । जूप साल जेठाइ ॥
ता व्रन्नन रस उप्पज्यौ । कहत चंद वरदाइ ॥१२६॥

॥ दूहा ॥

अमग हट्ट पट्टन नयर । रत्न मुत्ति मनिहार ॥
हाटक पट धन धात सह । तुछ तुछ दिष्प सवार ॥१२७॥

॥ मोतीदाम ॥

अमगति हट्टति पट्टन मंझ । मनों द्रग देवल फूलिय संझ ॥
जु नप्पहि मोरि तमोरि सु ठार । उलिचत कीच कि पीक उगार ॥१२८॥

मिलै पद पद सु वेदल चंप । सु सीत समीर मनो हिम कंप ॥
जु वेलि सेवंतिय गुंथहि जाइ । दियै द्रव दासि सु लेहि ढहाइ ॥१२९॥
जराव कनक्क जरंज कसंत । मनो भयो वासुर जामिन अंत ॥
कसिक्कसि हेम सु काढत तार । उगंत कि हंसह क्रन्न प्रकार ॥१३०॥

॥ दूहा ॥

हय गय दल सुंदरि सहर । जौ वरनों वहुवार ॥
इह चरित्र कहं लगि कहूँ । चलि पहुपंग दुआर ॥१३१॥
चलत अग्ग दिप्यौ नृपति । हरि सिद्धी सु प्रसाद ॥
चंद नम्मि अस्तुत करिय । हरिय अघ्घ अपराध ॥१३२॥
कौतूहल दिप्पै सकल । अकल अपूरब वट्ट ॥
पानधार छर छग्गरह । राजग्रही वर भट्ट ॥१३३॥

॥ कवित्त ॥

गज घंटन हय पेह । विविध पसुजन समाज इव ॥
वन निसान घुम्मरत । प्रवल परिजन समथ्थ नव ॥
विविध वज्ज वज्जत सु । चंद भर भीर उमत्तिय ॥
इक्क लत्त आवत सु । इक्क नरपत्ति समथ्थिय ॥
पुंभीय अवनि सुम्भय महल । जनु डुल्लित उभ्भिय करन ॥
दरबार राज कमधज्ज कौ । जग मंडन मझ्झह धरनि ॥१३४॥

॥ मुरिल्ल ॥

पुच्छत चंद गयो दरवारह । जहाँ हेजम रघुवंस कुमारह ॥
जिहि हरि सिद्धि पास वर पायौ । सु कविचंद दिल्लिय तें आयौ ॥१३५॥

॥ मुरिल्ल ॥

कहि कंविद हेजम बुल्लिय हसि । कोंन थान वर चलिय कोंन दिस ॥
को नृप सच देव का नाम । किहि दिसि चित कस्यौ परिनाम ॥१३६॥
हो हेजम रघुवंश कुमार । त्रिप चहुआन प्रथीअवतार
फिर दिल्ली कवियान नरिंद । सो वर नाम कहै कवि चंद ॥१३७॥

॥ दूहा ॥

नृप छवि हेजम नद्धि दर । रचि गयौ नृप पास ॥
भट्ट संपत्तौ राज पे । वैन चंद भिलास ॥१३८॥

सीस नायि वल्ली वयन। औसर पंग रजेस ॥
कवि जौ जुग्गिनि पुर कहै। संपत्ती द्वारेस ॥१३९॥

॥ दूहा ॥

हक्कार्‌यौ हेजम्म कवि। निकट बोलि नृप ईस ॥
सरसं वर संभारि करि। कवि दीनी असीस ॥१४०॥

॥ कवित्त ॥

जिम ग्रह पित ग्रहपंति। जिम सु उड़पति तारायनं ॥
मधि नाइक जिम लाल। जिम सु सुरपत नाराइन ॥
जिम विपयन संग मयन। सकल गुण संग सील जिम ॥
वरन मध्य जिमि उगति। चित्त इंद्रिय जालह तिम ॥
अनि अनि नरेस भर भीर सर। दारिम नृप मंदिर मरिय ॥
दिख पंग पानि उन्नित करिय। सुकविचन्द आसिष्य दिय ॥१४१॥

॥ दूहा ॥

पंग पयंप्यौ कवि कमल। अमर सु आदर कीन ॥
पुप नरेस परसंन रिद्धि। सत्र जंपयौ प्रवीन ॥१४२॥
मुह दारिद्र अरु तुच्छ तन। जंगल राव सु हद्द ॥
वन उजार पसु तन चरन। क्यों दूवरौ वरद्द ॥१४३॥

॥ कवित्त ॥

चढ़ि तुरंग चहुआन। आन फेरीत परद्धर ॥
तास जुद्ध मंडयौ। जास जनयौ सवर वर ॥
केइक तकि गहि पात। केइ गहि डार मुर तरु ॥
केइत दंत तुछ त्रिन्न। गए दस दिसनि भाजि डर ॥
भुअ लोकत दिन अचिरिज भयौ। मान सवर वर मरदिया ॥
प्रथिराज पलन पद्धौ जु पर। सु यों दुव्वरौ वरदिया ॥१४४॥
हंस न्याय दुव्वरौ। मुत्ति लभ्भै न चुनंतह ॥
सिंघ न्याय दुव्वरौ। करी चंपे न कंठ कह ॥
म्रग न्याय दुव्वरौ। नाद बंधियै सु बंधन ॥
छैल छक्क दुव्वरौ। त्रिया दुव्वरी मीत मन ॥
आसाढ़ गाढ़ बंधन धुरा। एकहि गहि हहरद्दिया ॥
जंगर जुरारि उज्जर पर न। क्यों दुव्वरो वरद्दिया ॥१४५॥

पुरै न लग्गी आरि। भारि लद्यौ न पिट्ठ पर ॥
गज्जवार गंभार। गही गठ्ठी न नथ्थ कर ॥
भ्रम्यौ न कूप भावरी। कबंहुक सब सेन रुत्तौ ॥
पंच धारि ललकारि। रथ्थ सथ्था जह जुत्तौ ॥
आसाढ़ मास बरषा समैं। कथ न कहों हरद्दिया ॥
कमधज्ज राव इम उच्चरै। सु क्यौं दुब्बरौ बरद्दिया ॥१४६॥

फुनि जंपै कविचंद। सुनौ जैचंद राज वर ॥
पुरं आर किम सहै। भार किम सहै पिठ्ठपर ॥
नथ्थ हथ्थ किम सहै। कूप भांवरि किम मंडै ॥
है गै सुर वर सुधर। स्वामि रथ भारथ तंडै ॥
बरषा समान चहुआन कै। अरि उर वारह हरद्दिया ॥
प्रथिराज पलनि पट्ठौ सु पर। सुइम दुब्बरौ बरद्दिया ॥१४७॥

प्रथम नगर नागौर। बंधि साहाब चरिग तिन ॥
सांभंत्ते भर भीम। सीम सोधीत सकल वन ॥
मेवार्नां सुगन महीप। सब्ब पत्रजु पट्ठा ॥
ठट्ठा कर डिल्लिया। सारस संमूर न लट्ठा ॥
सामंत नाथ हथ्थां सु कहि। लरिकैं मान मरद्दिया ॥
प्रथिराज पलन पट्ठौ सु पर। यौं दुब्बरौ बरद्दिया ॥१४८॥

सुनत पंग कवि वयन। नयन श्रुति वदन रत्त वर ॥
भुवन बंक रद अधर। चंपि उर उससि सास भर ॥
कोप कलमलि तेज। सुनत विक्रम अरि क्रम्मह ।
सगुन सिनार कमंध। दिष्पि दिह चंद सु पिम्मह ॥
आदर सुभट्ट राजिद किय। अंग पं डाइ विसतारि कर ॥
नन [illegible] संभरि धनिय। कहौ वत्त सुप विरद वर ॥१४९॥

[illegible] चरद [illegible] कै। गंग सिर धरिय गवरि हर ॥
[illegible] सुप [illegible]। [illegible] किन्नौ भुअंग गर ॥
[illegible] भुअंग [illegible]। [illegible] रुप्पौ वनुमत्तिय ॥
[illegible] [illegible]। [illegible] सिंधु सपत्तिय ॥
[illegible]। [illegible] पुरस ॥
[illegible]। [illegible] सरिस ॥१५१॥

॥ दूहा ॥

आदर किय नृप तास कौं। कह्यौ चद कवि आउ॥
मिले मोहि ढिल्लिय धनी। सु वत कहिग समझाउ॥१५१॥
उनि मातुल मुहि तात कहि। नित नित प्रेम वढंत॥
जिमि जिमि सेव स अहरिय। तिम तिम दान चढंत॥१५२॥
कितक सूर संभरि धनी। कितक देस दल बंधि॥
-कितक हथ्थ रन अग्गरौ। हसि नृप बूझ्यौ चंद॥१५३॥

॥ कवित्त ॥

कितक सूर संभरि नरेस। अंदेस कहत करि॥
कितक देस बल बंधि। राव रावत्त छत्रधर॥
कितक कोस मेंगल मदंध। तोपार भार भर॥
कितइक गहि करिवार। कलह विहारि बीर भर॥
कित इक मौज विदरन वहत। अति पर आगम जानियै॥
उग्गौ न अरक तित्तह लगै। तिमिर तितें बल मानियै॥१५४॥

॥ दूहा ॥

विहसत कवि बुल्ल्यौ वयन। इह लच्छन छिति है न॥
सूअ सु मूरति लच्छिनह। को दिपवों पहु नैंन॥१५५॥
मुकट बंध सब भूप हैं। सब लच्छिन संजुत्त॥
कौन बरन उनहार किहि। कहि चहुआन सु उत्त॥१५६॥

॥ कवित्त ॥

बत्तीसह लच्छिनह। बरस छत्तीस मास छह॥
इस दुज्जन संग्रहत। राह जिस चंद सूर ग्रह॥
एक छुटहि महिदान। एक छुट्टहिति दंड भर॥
एक गहहि गिर कंद। एक अनुसरहि चरन परि॥
चहुआन चतुर चाबदिसहि। हिंदवान सब हथ्थ जिहि॥
इम जंपै चंद बरद्दिया। प्रथीराज उनहारि इहि॥१५७॥
इसौ राज प्रथिराज। जिसौ गोकुल महि कन्हह॥
इसौ राज प्रथिराज। जिसौ पथ्थर अहि वन्नह॥
इसौ राज प्रथिराज। जिसौ अहंकारिय रावन॥
इसौ राज प्रथिराज। राम रावन संतावन॥

वरस तीस छह अग्गरौ। लच्छिन सब संजुत्त गनि॥
इम जंपै चंद वरद्दिया। प्रथीराज उनहारि इनि॥१५८॥
दिष्षि नयन कमधज्ज। नरेस अंदेस वृद्ध वर॥
दंग दहन जीरन जरंत। परचंत अंत पर॥
श्रुत्ति अरुन मुष अरुन। नेन आरत्त पत्त सम॥
पानि मीडि दषि अधर। दंत दब्बंत तेज तम॥
कविचंद बहुत बुल्लहु बयन। छित्ति अछिति पत्री कवन॥
चल दल समान रसना चपल। विफल वाद मंडौ मवन॥१५९॥

॥ दूहा ॥

देषि थवाइत थिर नयन। करि कनवज्ज नरिंद॥
नयन नयन अंकुरि परिय। इक थह दोइ मयंद॥१६०॥

॥ कवित्त ॥

दिष्षि नयन रा पंग। दंग चहुआन महा भर॥
अंकुरि नयन विसाल। झाल झारंत रंच उर॥
इक्क थार कंठीर। पल न आकज्ज करत तमि॥
वर वारुनी समग्ग। मत्त मातंग रोस जमि॥
कमधज्जराज फिरि चंद कहु। कहत वत्त संभरधनिय॥
वर वर कवित्त कवि उच्चरिय। अव सुकित्ति कथ्थी घनिय॥१६१॥
अति गभीर पहु पंग। मन सु दब्बै द्रिग लज्जइ॥
कवन काज अग्गरह। पानि ग्राही भट कज्जइ॥
कित्त काज करि वेंन। वानि वंदन वरदाइय॥
श्रवन राग हम तुमें। दिष्ट गोचर तत लाइय॥
संभरि जंग देषै सुभट। अंत निमत पुज्जै मिलत॥
सोमेस पुत्त तुम कित्त करि। क्यों मुझ्झहि नाहीं मिलत॥१६२॥

॥ दूहा ॥

मन मनो लहु मंन करि। नीतें नीति वदंत॥
जिन जिन संसय सो दुअं। तिन तिम मदन चढंत॥१६३॥

॥ दूहा ॥

मन सुमन अनिंद सुर। नव पुनि द्रव उर वत्त॥
सो पुन्यौ नाह गुमांन। सो जंपी कवि तत्त॥१६४॥

जे त्रिय पुरिष रस परस विन। उठिगए इ सु निसान ॥
धवलग्रंह संपन्न कहि। भट्टहिं अप्पन पान ॥१६५॥
महल अदिट्ठ चिय दिट्ठ सुत्र। क्यों व्रन्नै वर कवित्र ॥
सरसें बुधि अन्नन कर्यौ। मुप दिष्षे नन रत्त्रि ॥१६६॥
कछुक सयन नयनह करिय। कुछ किय बयन बपान ॥
कछु इक लछिन विचार किय। अति गंभीर सु जानि ॥१६७॥

॥ कवित्त ॥

आय निकट रापंग। अंग आरथन वेद वर ॥
अति सुगंध तंमोर। रंग जुत धरय जुथ्थ पर ॥
दिष्पि त्रिपति प्रथिराज। दासि आरोहि सीस पट ॥
मनहु काम रति निरपि। सकुचि गुर पंच सद्धि घट्टु ॥
कमधज्ज राज संकुल सभा। अकुल सुभर दरसंत दिस ॥
उस्ससे अंग उभ्भरि अरषि। परसपर सु अवलोकि सिस ॥१६८॥

॥ चौपाई ॥

चहुआनह दासी सिर कंपिय। पुर रठ्ठौर रही दिसि नंपिय ॥
बिगरत केस पुरुष नहिं अंकिय। प्रथीराज देपत सिर ढंकिय ॥१६९॥

॥ अरिल्ल ॥

ढंकित केस लषी भय भूपह। दिन्न दिन दिस्स कहां राई मह ॥
कविवर सथ्थ प्रथीनृप आयौ। सो लच्छिन वर दासि वतायौ ॥१७०॥

॥ कवित्त ॥

अप्प अप्प भट अटकि। पटकि पट दासि मंडि सिर ॥
इक्क चवै कत वदन। एक पल नथ्थ जानि थिर ॥
इक्क कहै प्रथिराज। इक्क जंपय पचास वर ॥
दिष्प दरस रयसिंघ। कहत दीवान अज्ज भर ॥
कठ्ठिया विकट केहरि कहर। जहर भार अंगय मनह ॥
संग्रहौ आय रिपु दुष्ट ग्रह। समय सद्ध रा पंग कह ॥१७१॥

॥ दूहा ॥

मै चकि भूप अनूप सह। पुरप जु कहि प्रथिराज ॥
सुमति भट्ट सथ्थह अछै। जिहि करंत तिय लाज ॥१७२॥

॥ अरिल्ल ॥

करि बल कलह स मंत्री मार्यो । नहि चहुआन सरंन विचार्यो ॥
संन सुवर कहि कवि समुझाई । अब तूं कलह करंन इहां आई ॥१७३॥
समझि दासि सिर बर तिन ढंक्यो । कर पल्लव तिन द्रग बर अंक्यो ॥
कव रस सबै सभा कमधज्जो । भै चकि भूप सिंगिनी सज्जो ॥१७४॥

॥ कवित्त ॥

बर अद्भुत कमधज्ज । हास चहुआन उपन्नौ ॥
करुना दिसि संभरी । चंद बर रुद्र दिपन्नौ ॥
बीभच्छ बीर कुमार । बीर बर सुभट विराजै ॥
गोप बाल भंयतह । द्रिगन सिंगार सु राजै ॥
संभयौ संत रस दिप्पि बर । लोहा लंगरि बीर कौ ॥
मंगाइ पान पहुपंग बर । भय नव रस नव सीर कौ ॥१७५॥

॥ दूहा ॥

अप्पि मान सनमान करि । नहि रप्यो कवि गोय ॥
जु कछु इच्छ करि मंगहो । प्रात समप्पों सोय ॥१७६॥
हक्कार्यो रावन नृपति । कै कै मुक्कि सुवास ॥
पच्छिम दिस्सि जैचंद पुर । तिहि रप्पंति अवास ॥१७७॥

॥ कवित्त ॥

तब राजन जैचंद । बोलि सोमित्र प्रधानह ॥
अरु प्रोहित श्रीकंठ । मुकंद परिहार सुजानह ॥
दियौ राइ आएस । नाहु सों कवियन थानह ॥
विविध अन्न व्यंजनह । सरस रसरंग रसानह ॥
मंगोर कुसुम केसरि अगर । कट्टू कपूर सुगंध सह ॥
आदर अनंत उपचार बर । करि सुप्रसन्नह कविय कह ॥१७८॥

॥ दूहा ॥

[illegible] सोहंत राज सुपनि । हक्कार्यो कविराज ॥
[illegible] सोहंत सु बर । [illegible] विस्मावन काज ॥१७९॥

॥ [illegible] ॥

[illegible] राजन [illegible] । [illegible] ॥
[illegible] सिंहासन [illegible] । [illegible] ॥

कवि आदर बहु कियौ । देषि कनवज्ज मुकुट मनि ॥
इह ढिल्लिय सुर दत्त । वियौ नहि गनै तुझझ गिनि ॥
थिरु रहै थवा इत वज्र कर । छंडि सिकारहि छिन कुरहि ॥
जिहि असिय लष्ष पलानि यहि । पान देहि दिढ हथ्थ गहि ॥१८०॥

॥ कवित्त ॥

गहि कर पान सु राज । फिर्‌यौ निज पंग ग्रेह वर ॥
सोमंत्रिक परधान । बोल उच्चरिय क्रोध भर ॥
गहौ राज संभरि नरेस । सामंत अंत रिन ॥
मिटै बाल उर आस । आस जीवन सु मिटै तिन ॥
बोलिय सुमित्र कमधज्ज वर । छग्गर भट्ट न प्रथु गहन ॥
भूत भ्रात तात सामंत सुत । छलन काज पट्टिय पहन ॥१८१॥
कहि सत्र कनवज राइ । भज्जि प्रथिराज जाइ जिन ॥
असिय लष्ष हय दलह । पखरि किज्जै सु पिन्नपिन ॥
हसिय सब्ब सामंत । रोस प्रथिराज उहासै ॥
सिलिय सेन रघुवंस । चंद तब भट्ट प्रगासै ॥
इह दैत्य रूप जुध मंगिहै । भाज नीक परतह वहै ॥
कनवज्ज नाथ मन चित इह । जुध अनेक वन संग्रहै ॥१८२॥

॥ दूहा ॥

सकल सूर सामंत सम । वर वुल्यौ प्रथिराज ॥
जौ रुक्कौ पिन पेत मैं । देषौं नगर विराज ॥१८३॥
चल्यौ नयर दिष्षन करन । तजि सामंत सुलच्छि ॥
गौ दिष्षन दिष्षन करन । चित्त मनोरथ वंछि ॥१८४॥
कुंभ चित्त चहुआन कौ । चोकट वुंद न अम्भ ॥
जल भय पंगह ना भिदै । ज्यौं जल चोकट कुंभ ॥१८५॥
इते सेन चढि पंग वर । है गै दिसा निसान ॥
दछिन नैर नरिंद करि । गंग सु पत्तो ध्यान ॥१८६॥

॥ कवित्त ॥

राज गुरू दुज कन्ह । कन्ह मोकलि सु लेन नृप ॥
स्वामि सहिह सह सथ्थ । मंत्र कारज्ज मंत्र अप ॥

लै आवौ प्रथिराज । पंग है बिड्डुर सेनं ॥
पथ्थ वैन पथ आज । भयौ भर अंतर केनं ॥
यों करिग देव दच्छिन सुदुज । दिशि सामंत पटंग वर ॥
संजोग दासि वृंदह नृपति । ठठुकि रह्यौ तणि थान नर ॥१८७॥

॥ दूहा ॥

मनहु बंध अनभूति धर । है तिन जानत थट्ट ॥
वचन स्वामि भंग न करहि । सह देपहि नृप वट्ट ॥१८८॥
अवलोकनि तन स्वामि मन । भौ सामंतनि मुष्प ॥
हंसहि सूर सामंत मुष । कायर मानहि दुष्प ॥१८९॥
धीरत धरि डिल्लेस वर । बहु दंती उभ रोभ ॥
नृपति नयन तन अंकुरे । मनहु मद गज सोभ ॥१९०॥

॥ कुंडलिया ॥

देषि सुभर नृप नेन । आनि भौ आनंद चंद ॥
अरि गंजे रूप लिप्प । धीर हक्के मद दंद ॥
धीर हक्के मद दंद । मुकति लुट्टे कर रस्सी ॥
आज सामि रन देहि । वरं अच्छरि कुल लस्सी ॥
काम नेन संभरो । देव कंदल जुध पिष्षे ॥
गुरू गरुड़ उद्धरो । वृष्टि धारा रवि दिष्षे ॥१९१॥

॥ दूहा ॥

दरसंत नृप भत्त जुथ्थ । मन उक्कलत जुध चाव ॥
मिलन द्रग्ग हलन लग्गौ । कर्यौ कन्ह इह काम ॥१९२॥
गगन रेन रवि मुंदि लिय । भर भर दंति फुनिंद ॥
इह अद्भुत भारत सुद्धि । हलन दुरंग नरिंद ॥१९३॥
हुलसह हलन मिर [illegible] । अति दल लगे निनार ॥
हठ भार हुप हठ नाहि । हदि चार हालन निनार ॥१९४॥

॥ चौपाई ॥

तिहि तजि चित्त कियौ तुम पासं । छंडिय कन्ह रुदंत अवासं ॥
सौ सुभट्ट महि एक भट होइ । तौ नृप धनहि न मुक्कै कोइ ॥१६७॥
जौ अरि थाट कोरि दल साज । तौ दिल्लिय तपत देहि प्रथिराज ॥
इतनौ नृपति पुच्छियै तोहि । परनि मुक्कि सुंदरि इह होइ ॥१६८॥

॥ श्लोक ॥

जज्ञकालेषु धर्मेषु । कामकालेषु शोभिता ॥
सर्वत्र वल्लभा बाला । संग्रामे नन गेहिनी ॥१६६॥

॥ चौपाई ॥

हम सौ रजपूत रु सुंदरि एक । मुक्कि जांहि ग्रह बंधहि तेक ॥
जौ अरियन थट कोरि दल साजहि । तौ दिल्लिय तपंत देहि प्रथिराजहि ॥२६६

॥ कवित्त ॥

महि मंडन महिलान । जोग मंडन सुप मंडन ॥
दुप बंटन जम असन । नेह पूपनि मन पंडन ॥
कामवंत सोभाय । पूर चित समर विमत्तन ॥
मय सुप दिष्पत मोह । लीन भौ अनुरत रत्तन ॥
संसार सुवरंनी सरम रुप । करहि सरन अनमुण्य रुप ॥
अरि धरनि मुक्कि धारन नृपत । चलहि कित्त जुग एक सुप ॥२०१॥

॥ दूहा ॥

जग्गि काल धृग काल कौ । सब्ब काल सोभित्त ॥
पूरन सब सोरथ्थ सग । मोकिल ना मोहित ॥२०२॥
भर वंके अच्छरि वरन । रस वंके दिसि ग्राल ॥
दुहु वंके पारथ करन । चढ्ढि सूरत्तन साल ॥२०३॥
चलि चलि सूरत सथ्थ हुअ । रन निसंक मन भोंन ॥
सह अचार सुप मंगलह । मनहुँ करहि फिरि गोंन ॥२०४॥
पति अंतर विछुरन विपति । नृपति सनेह संजोग ॥
सुनत भयौ सुप कोंन विध । दैव जिवावन जोग ॥२०५॥

॥ मुरिल्ल ॥

पानि परस अरु दिट्ठ विलग्गिय । सा सुंदरि कामागिन जग्गिय ॥
पिन तलपह अजपह मन कीनो । ज्यों वर वारि गये तन मीनो ॥२०६॥

अंगन अंग सु चंदन लावहि। अरु राजन लाजन समुझावहि ॥
दै चंचल अंचल द्रिग मूंदहि। विरहायन दाहन रवि उद्दहि ॥२०७॥
फिरि फिरि बाल गवष्यनि अष्पिय। तासिष दैंन बैंन वर सष्षिय ॥
विन उत्तर सु मौंन मन रष्षिय। मन वच क्रम प्रीतम रस कष्षिय ॥२०८॥

॥ कवित्त ॥

बाली विजन फिरन। चंद चारी क्रित्रम रस ॥
के घनसार सुधारि। चंद चंदन सोभति लस ॥
बहु उपाय बल करत। बाल चेतै न चित्र मय ॥
है उच्चार उचार। सखी बुल्लयति ह्यति ह्य ॥
श्रवनें सुनाइ जंपै सु अलि। नाम मंत्र प्रथिराज वर ॥
आवस निवत्त अगाद भय। तं निवलह द्रिग छिनक कर ॥२०९॥

॥ दूहा ॥

तन तज्जै संजोगि पिय। गहि रप्पी फिरि बाल ॥
जानि नछत्रिन परि गिरी। चंद सरद्दति काल ॥२१०॥

॥ अरिल्ल ॥

बहुत जतन संजोगि समाए। सोम कमल दिनयर दरसाए ॥
उझकि झंकि दिप्यो प्रन पत्तिय। पति दिप्पत मन महि अलि रत्तिय ॥२११॥
ब्याह नाथ संजोगि सुलच्छन। जिहि तुम कर साह्यौ वर दच्छिन ॥
सा तुअ नात भए दल तत्ती। सरन तोहि सुंदरि संपत्ती ॥२१२॥

॥ दूहा ॥

ता मुप मंदिन मोद किय। अलियन जंपहु आलि ॥
दाधेऊ पर लवन रस। ग्रनक न दिज्जै गारि ॥२१३॥
अंध न द्रप्पन दिप्पिहै। गुंग न जंपहि गल्ह ॥
अश्रुत नर गान न लहै। अबल न करै सबल्ल ॥२१४॥
मैं निपेद किन्नौ जु कथ। दुज अरु दुजिय प्रमान ॥
टरै न गंध्रव गंध्रविय। विधि कीनीव प्रमान ॥२१५॥

॥ श्लोक ॥

गुरजनं मनो नास्ति। तात आज्ञा विवर्जितं ॥
नस्य कार्यं विनश्यंति। यावत चंद्रदिवाकरौ ॥२१६॥

॥ दूहा ॥

इह कहि सिर धुनि सषिनि सों। दिषि संजोगिय राज ॥
जिहि प्रिय जन अंगुलि करै। तिहि प्रिय जन किहि काज ॥२१७॥
इह चिंतित वत्ती सु सुनि। क्रोध ज्वाल सरि अंब ॥
रही जु लिपिये चित्र में। ज्यों सरद्द प्रतिव्यंव ॥२१८॥

॥ कुंडलिया ॥

धुनंत गवष्षन सिर लष्यौ। अंबुज मुष ससि अंब ॥
अनिल तेज झलहल कंपै। सरद इंद्र प्रतिव्यंब ॥
सरद इंद्र प्रतिव्यंब। चिंति चतुरानन आनन ॥
निरपि राज प्रथिराज। साज सुंदरि अपकानन ॥
हयं सत भट्ट सु भूप। मग्ग भोहैं न गनंतन ॥
मानि विसव्वा बीस। सीस धुनि धुनि न धुनंतह। २१९॥

॥ चौपाई ॥

झंकत त्रप दृष्पी बर वुल्लै। गंग निकट प्रतिव्यंब सो हल्लै ॥
चिहलै परयौ चंद तरपीनौ। कै म्रग तिस्र देपि मन मीनौ ॥२२०॥
मुच्छि बाल संजोगि उठाई। देवर तर दिसि दिसि पट्ठाई॥
कै श्रोतान सूर सुनि भूठे। कै कांतर अबहीं त्रिप दीठे ॥२२१॥

॥ दूहा ॥

ए सामंत जु सत्त कहि। पंग पुति घटि मंत ॥
एक लष्प भर ,लष्पियै। जै कढ्ढै गज दंत ॥२२२॥

॥ गाथा ॥

मदनं सरा लति विविहा। जिन्हा रटयोति प्रान प्रानेसं ॥
नयन प्रवाहति विवहा। अह वांमा कंत कथ्थायं ॥२२३॥

॥ आर्यो ॥

कहु लीभा सो चंद लासौ। मनमथ्थं पहुपांजलि ॥
वरन मान निसा दिवसे। धुनयं सीस जो मम ॥२२४॥

॥ दूहा ॥

किम हय पुट्टहि आरुहौं। घटि दल संगह राज ॥
भीर परत जो तजि चल्यौ। तव मो आवै लाज ॥२२५॥

तब हंसि जंप्यौ नृप वयन । गहर न करियै अब्ब ॥
सब्ब पंग दल संहरों । सुंदरि लाज न तब्ब ॥२२६॥

॥ दूहा ॥

चवै चंद पुंडीर इम । कह बल कथ्थहु पुब्ब ॥
पंग पंग पग नरिंद कौ । जग्य विध्वंस्यौ सब्ब ॥२२७॥
सुनत वाल छंड्यौ सु हठ । वर चढ्ढी द्रिग वंक ॥
किधों बाल मन मोहिनी । कै विय उदित मयंक ॥२२८॥
वाले वल सामंत कलि । देखि सूर सम चित ॥
इन जु हीन वल जंपियै । थ्रिकत बुद्धि इन वृत्त ॥२२९॥

॥ दूहा ॥

परनि राव ढिल्ली सुपहि । ग्रहि लीनी कर वांम ॥
सम संजोगि नृप सोभियत । मनहु बने रति कांम ॥२३०॥

॥ चंद्रायना ॥

सुंदरि सोचि समुझ्झित गह गह कंठ भरि ॥
तवहि पानि प्रथिराज सुपंचिय वाह करि ॥
दिय हय पुट्ठहि भोर सु सब्ब सु लच्छनिय ॥
करत तुरंग सुरंग सु पुच्छनि वच्छनिय ॥२३१॥

॥ कवित्त ॥

हय संजोगि आरुहिय । पुट्ठि लग्गी सु वांम नृप ॥
पति राका पूरन प्रमांन । अरक बैठे सुसूर त्रिप ॥
काम रित्तु रहि चढ़ी । काम रति दंपति राजं ॥
कै विद्रुम हिम संग । वियन ओपम छपि माजं ॥
सामंत सूर पारस नृपति । मधि सु राज राजंत वर ॥
मह सत्त भान ससि विंटिकै । दिपत तेज प्रथमी सु पुर ॥२३२॥

॥ आर्या ॥

एकथ्थोव संजोई । एकथ्थौ होइ समर नियोसी ॥
अनि लेय यथा पद्मं । अंदोलए राज रिदएवं ॥२३३॥

॥ दूहा ॥

मन अंदोलित चंद सुय । दिपि सामंत सरूप ॥
अंदोलित प्रथिराज हुअ । सिर कढ्ढिय सुय दुप्प ॥२३४॥

वय सु लग्गि एकत करह । कक्कर लग्गिय लाज ॥
वय जुग्गिनि पुर चलि कहै । लाज कहै भिरि राज ॥२३५॥

॥ चौपाई ॥

वै सुप सब्ब संजोगि बतावै । राज मरन दिसि पंथ चलावै ॥
दोई चित्त चढ़ी वर राजं । वै विलास मरंनं कहि लाजं ॥२३६॥

॥ दूहा ॥

मिष्टानं वर पान भय । नव भामिनि रस कोक ॥
अमर राइ इच्छति सवै । लाज सुष्प पर लोक ॥२३७॥

॥ चौपाई ॥

मो तजि मति चोहान सुजाई । ज्यों जलविंदु सव किित्ति समाई ॥
तौ तिय पन वय तज्जि दिषाई । तिन जिय जाहु ये लज्जन जाइ ॥२३॥

॥ दूहा ॥

सुनत वचन लज्जिय वयह । उत्तर दीय न लज्ज ॥
वै विलास उत्तर दियौ । अज्जु लज्ज हम कज्ज ॥२३९॥
वै सुष कौपि प्रमान से । मुक्किय जुगति जुगत्ति ॥
ए हलका दंतीन के । धाए उज्जल कंति ॥२४०॥
वै तन कुरषि निरष्पयौ । लाज सु आदर दीन ॥
कंलि नारद नीरद कवि । प्रकट करहु हम कीन ॥२४१॥
कहत भट्ट दल विषम है । तुहि दल तुच्छ नरिंद ॥
परनि पुत्ति जैचंद की । करहि जाइ ग्रह नंद ॥२४२॥
झुकित राज उत्तर दियौ । सो सथ सत्त सुभट्ट ॥
हूँ चहुआन जु संभरी । भुज ठिल्लौ गज थट्ट ॥२४३॥
चल्यौ भट्ट संमुह तहां । जहं दल पंग अरेस ॥
जो इंछै नृप तुम्झ मन । टट्टौ पेत नरेस ॥२४४॥
परनि राइ ढिल्लिय सु सुष । रुप किन्नौ मन आस ॥
कहो चंद नृप पंग दल । जुद्ध जुरै जम दास ॥२४५॥
चढ़िग सूर सामंत सह । त्रिप ध्रम्मह कुल लाज ॥
सुहर समुह दिष्पहि नयन । त्रिय जु वरिग प्रथिराज ॥२४६॥
गयौ चंद नृप वयन सुनि । जहं दल पंग नरिंद ॥
अरि आतुर अरिमद्दन कौ । मनों राहु अरु चंद ॥२४७॥

तव हंसि जंप्यौ न्रप वयन। गहर न करियै अब्ब ॥
सब्ब पंग दल संहरों। सुंदरि लाज न तब्ब ॥२२६॥

॥ दूहा ॥

चवै चंद पुंडीर इम। कह वल कथ्थहु पुब्ब ॥
पंग पंग पग नरिंद कौ। जग्य विध्वंस्यौ सब्ब ॥२२७॥
सुनत बाल छंड्यौ सु हठ। वर चढ्ढी द्रिग बंक ॥
किधों बाल मन मोहिनी। कै त्रिय उदित मयंक ॥२२८॥
बाले बल सामंत कलि। देखि सूर सम चित ॥
इन जु हीन बल जंपियै। ध्रिकत बुद्धि इन वृत्त ॥२२९॥

॥ दूहा ॥

परनि राव ढिल्ली सुपहि। ग्रहि लीनी कर वांम ॥
सम संजोगि न्रप सोभियत। मनहु बने रति कांम ॥२३०॥

॥ चंद्रायना ॥

सुंदरि सोचि समुझ्झित गह गह कंठ भरि ॥
तवहि पानि प्रथिराज सुपंचिय बाह करि ॥
दिय हय पुट्ठहि भोर सु सब्ब सु लच्छनिय ॥
करत तुरंग सुरंग सु पुच्छनि बच्छनिय ॥२३१॥

॥ कवित्त ॥

हय संजोगि आरुहिय। पुट्ठि लग्गी सु वांम नृप ॥
पति राका पूरन प्रमांन। अरक बैठे सुसूर त्रिप ॥
काम रित्तु रहि चढ़ी। काम रति दंपति राजं ॥
कै विद्रुम हिम संग। त्रियन ओपम छपि माजं ॥
सामंत सूर पारस नृपति। मधि सु राज राजंत वर ॥
मह सत्त भान ससि विंटिकै। दिपत तेज प्रथमी सु पुर ॥२३२॥

॥ आर्या ॥

एकच्चीव संजोई। एकच्ची होइ समर नियोसो ॥
आनि लेय यथा पदमं। अंदोलए राज रिदएवं ॥२३३॥

॥ दूहा ॥

मन अंदोलित चंद मुप। दिपि सामंत सरूप ॥
अंदोलित प्रथिराज हुअ। सिर कट्टिय सुप हुप्प ॥२३४॥

वय सु लग्गि एकत करह । कक्कर लग्गिय लाज ॥
वय जुग्गिनि पुर चलि कहै । लाज कहै भिरि राज ॥२३५॥

॥ चौपाई ॥

वै सुप सव्व संजोगि वतावै । राज मरन दिसि पंथ चलावै ॥
दोई चित्त चढ़ी वर राजं । वै विलास मरंनं कहि लाजं ॥२३६॥

॥ दूहा ॥

मिष्टानं वर पान भय । नव भामिनि रस कोक ॥
अमर राइ इच्छति सवै । लाज सुष्ष पर लोक ॥२३७॥

॥ चौपाई ॥

ो तजि मति चोहान सुजाई । ज्यों जलविंदु सव किंत्ति समाई ॥
ो तिय पन वय तज्जि दिपाई । तिन जिय जाहु ये लज्जन जाइ ॥२३॥

॥ दूहा ॥

सुनत वचन लज्जिय वयह । उत्तर दीय न लज्ज ॥
वै विलास उत्तर दियौ । अज्जु लज्ज हम कज्ज ॥२३९॥
वै सुप कौपि प्रमान से । मुक्किय जुगति जुगत्ति ॥
ए हलका दंतीन के । धाए उज्जल कंति ॥२४०॥
वै तन कुरपि निरष्पयौ । लाज सु आदर दीन ॥
कलि नारद नीरद कवि । प्रकट करहु हम कीन ॥२४१॥
कहत भट्ट दल विषम है । तुहि दल तुच्छ नरिंद ॥
परनि पुत्ति जैचंद की । करहि जाइ ग्रह नंद ॥२४२॥
झुकित राज उत्तर दियौ । सो सथ सत्त सुभट्ट ॥
हूँ चहुआन जु संभरी । भुज ठिल्लौ गज थट्ट ॥२४३॥
चल्यौ भट्ट संमुह तहां । जहं दल पंग अरेस ॥
जो इंछै नृप तुझ्झ मन । टट्टौ पेत नरेस ॥२४४॥
परनि राइ ढिल्लिय सु सुप । रुप किन्नौ मन आस ॥
कहो चंद नृप पंग दल । जुद्ध जुरै जम दास ॥२४५॥
चंढ़िग सुर सामंत सह । त्रिप धम्मह कुल लाज ॥
सुहर समुह दिष्पहि नयन । त्रिय जु वरिग प्रथिराज ॥२४६॥
गयौ चंद नृप वयन सुनि । जहं दल पंग नरिंद ॥
अरि आतुर अरिग्रहन कौ । मनों राहु अरु चंद ॥२४७॥

॥ श्लोक ॥

कस्य भूपस्य सेनायां। कस्य वाजित्र वाजनं॥
कस्य राज रिपू अरितं। कस्य संन्नाह पष्परं॥२४८॥

॥ दूहा ॥

छलि आऔ चहुआन नृप। भट्ट सथ्थ प्रथिराज॥
तिहि पर गय हय पष्परहि। तिहि पर वज्जत बाज॥२४९॥

॥ गाथा ॥

सा याहि दिल्लि नाथो। सा यंतु जग्य विध्वंसनौ॥
परनेवा पंगपुत्री। जुद्ध मांगंत भूपनं॥२५०॥

॥ दूहा ॥

सुनि श्रवननि चहुआन को। भयो निसानन घाव॥
जनु भद्दव रवि अस्त मनि। चंपिय वद्दल वाव॥२५१॥

॥ कवित्त ॥

वजत धरद्धर सीस। धार धरनीय सेस कहि॥
कुंडलेस कुंडलिय। कहय पन्न गति अरुल रहि॥
अहि अहि कहि अहि नाम। संकभौ सीस सेस वर॥
गहिन परें तिहि नाग। चित्त विभ्रम चित्रक पर॥
कंपेस नाम कंपत भयौ। बहुत नाम तद्दिन लहिय॥
जिन जिन उपाय रष्पिय इला। पंग पयानह तिहि कहिय॥२५२॥

॥ कवित्त ॥

तब सु कन्ह चहुआन। गहिय करवान रोस भरि॥
असिय लष्प त्रिन गनिय। हनत हय गय पय निद्दरि॥
करन कुंभस्थल घाव। चाव चवगुन धरि धीरह॥
तुरक तीर तरवार। लगन संक्यौ न सरीरह॥
कहि चंद पराक्रम कन्ह कौ। दिय उछाय गैमर समर॥
उछरंत छिछ श्रोनित सिरह। मनहु लाल कज्जरि चमर॥२५३॥

॥ दूहा ॥

सद्द श्रवन्निय चंद किय। तारस साकू भिन्न॥
पनतर रुधिचर अंस चर। करिय रवन्निय रिन्न॥२५४॥

॥ कवित्त ॥

चावद्दिसि रषि सूर। मद्धि रष्यौ प्रथिराजं ॥
ज्यौं सरद काल रस सोच। मद्धि ससि जुत्त विराजं ॥
ज्यौं जल मद्धित जोत। तपति वड़वानल सोहं ॥
ज्यौं कल मद्धे जमन। रूप मधि रत्तौ मोहं ॥
इम मद्धि राज रष्यौ सुभर। नग्न सकल निंदौ सु वर ॥
सब मुष्प पंग रुक्यौ सु वर। सो उप्पम जंप्यौ सु गिर ॥२५५॥

॥ चंद्रायना ॥

पह चारु रुचि इंद इंदीवर उद्यौ ॥
नव विहार नवनेह नवज्जल रुद्यौ ॥
भूपन सुम्भ समीपनि-मंडित मंड तन ॥
मिलि म्रदु मंगल कीन मनोरथ सब्ब मन ॥२५६॥

॥ श्लोक ॥

जितं नलिनीं तितं नीरं। जितं नलिनी जलं तितं ॥
जतो गृह ततो गृहिणी। जत्र गृहिणी ततो गृहं ॥२५७॥

॥ दूहा ॥

मिलि मिलि वर सामंत सह। न्रप रष्पन विच्चार ॥
चलै राज निज तरुनि सम। इहै सुमत्तह सार ॥२५८॥

॥ कवित्त ॥

पंचति रष्पहि पास। पंच धरणी धन रष्पहि ॥
पंच पृच्छि अनुसरहि। पंच तत्तै जिय लष्पहि ॥
पंच, भीत वंचियै। पंच आदर अमनाइत ॥
पंच पंच धर तीन। करुनि मंडिय वासन जति ॥
चहुआन राइ सोमेस सुअ। इमग तेग वढ्ढै सुकिति ॥
अनुसरिय लाज राजन रवन। सुनौ राज राजंन पति ॥२५९॥
सुनौ सूर सामंत। सूर मंगल सुपत्ति तन ॥
लाज वधू सो पत्ति। राज सोपत्ति सूर घन ॥
कवि वानी सोपत्ति। जोग सोपत्ति ध्यान तम ॥
मित्रापति सोपत्ति। पत्ति वंधे सो आतम ॥

॥ श्लोक ॥

कस्य भूपस्य सेनायां । कस्य वाजित्र वाजनं ॥
कस्य राज रिपू अरितं । कस्य संन्नाह पष्परं ॥२४८॥

॥ दूहा ॥

छलि आऔ चहुआन न्रप । भट्ट सथ्थ प्रथिराज ॥
तिहि पर गय हय पष्परहि । तिहि पर वज्जत बाज ॥२४९॥

॥ गाथा ॥

सा याहि दिल्लि नाथो । सा यंतु जग्य विध्वंसनौ ॥
परनेवा पंगपुत्री । जुद्ध मांगंत भूपनं ॥२५०॥

॥ दूहा ॥

सुनि श्रवननि चहुआन को । भयो निसानन घाव ॥
जनु भद्दव रवि अस्त मनि । चंपिय वद्दल वाव ॥२५१॥

॥ कवित्त ॥

वजत धरद्धर सीस । धार धरनीय सेस कहि ॥
कुंडलेस कुंडलिय । कहय पन्न गति अरुल रहि ॥
अहि अहि कहि अहि नाम । संकभौ सीस सेस वर ॥
गहिन परं तिहि नाग । चित्त विभ्रम चित्रक पर ॥
कंपेस नाम कंपत भयौ । वहुत नाम तहिन लहिय ॥
जिन जिन उपाय रष्पिय इला । पंग पयानह तिहि कहिय ॥२५२॥

॥ कवित्त ॥

तब सु कन्ह चहुआन । गहिय करवान रोस भरि ॥
अमिय लष्प त्रिन गनिय । हनत हय गय पय निद्दरि ॥
करन कुंभस्थल घाव । चाव ववगुन धरि धीरह ॥
तुवक तीर तरवार । लगन संक्यौ न सरीरह ॥
कहि चंद पराक्रम कन्ह कौ । दिय उहाय गेंवर समर ॥
उछरंत छिछ्छ श्रोनित निरह । मनहु लाग फरहरि चमर ॥२५३॥

॥ दूहा ॥

कढ़ु असन्निय चंद लिय । तारम मास भिन्न ॥
पज्जर जीवचर भ्रम नर । हरिय रसन्निय छिन्न ॥२५४॥

॥ कवित्त ॥

चावदिसि रपि सूर । मद्धि रष्यौ प्रथिराजं ॥
ज्यौं सरद काल रस सोच । मद्धि ससि जुत्त विराजं ॥
ज्यौं जल मद्धित जोत । तपति वड़वानल सोहं ॥
ज्यौं कल मद्धे जमन । रूप मधि रत्तौ मोहं ॥
इम मद्धि राज रष्यौ सुभर । नग्न सकल निंदौ सु वर ॥
सब सुष्प पंग रुक्यौ सु वर । सो उप्पम जंप्यौ सु गिर ॥२५५॥

॥ चंद्रायना ॥

पह चारु रुचि इंद इंदीवर उद्यौ ॥
नव विहार नवनेह नवज्जल रुद्यौ ॥
भूषन सुब्भ समीपनि-मंडित मंड तन ॥
मिलि म्रदु मंगल कीन मनोरथ सब्व मन ॥२५६॥

॥ श्लोक ॥

जितं नलिनीं तितं नीरं । जितं नलिनी जलं तितं ॥
जतो गृह ततो गृहिणी । जत्र गृहिणी ततो गृहं ॥२५७॥

॥ दूहा ॥

मिलि मिलि वर सामंत सह । न्रप रष्पन विच्चार ॥
चलै राज निज तरुनि सम । इहै सुमत्तह सार ॥२५८॥

॥ कवित्त ॥

पंचति रष्पहि पास । पंच धरणी धन रष्पहि ॥
पंच पृच्छि अनुसरहि । पंच तत्तै जिय लष्पहि ॥
पंच भीत वंचियै । पंच आदर अमनाइत ॥
पंच पंच धर तीन । करुनि मंडिय बासन जति ॥
चहुआन राइ सोमेस सुअ । इमग तेग वढ्ढै सुकिति ॥
अनुसरिय लाज राजन रवन । सुनौ राज राजंन पति ॥२५९॥
सुनौ सूर सामंत । सूर मंगल सुपत्ति तन ॥
लाज वधू सो पत्ति । राज सोपत्ति सूर धन ॥
कवि बानी सोपत्ति । जोग सोपत्ति ध्यान तम ॥
मित्रापति सोपत्ति । पत्ति वंधे सो आतम ॥

हम पत्ति पत्ति त्रप जो चलै । तो पति हम पुज्जै रली ॥
सा ध्रम जु पंज सामंत भर । रुक्के पंगह मेजली ॥२६०॥
सूर मरन मंगली । स्याल मंगल घर आयें ॥
वाय मेघ मंगली । धरनि मंगल घर जल पायें ॥
क्रियन लोभ मंगली । दान मंगल कछु दिन्नै ॥
सत मंगल साहसी । मँगन मंगल कछु लिन्नै ॥
मंगली वार है मरन की । जो पति सथह तन पंडियै ॥
चढि पेत राइ पहु पंग सों । मरन सनंमुप मंडियै ॥२६१॥
सुनौ सूर सामंत । जियन अहि डढ्ढ काल पुर ॥
अध्रम अकित्तौ मुष्प । सा मनौ मह द्वंड दुर ॥
मोह मंद वर जगत । भए विधि चित्र चिताही ॥
अचित होइ जिहि जीत । पुन्न जित देपि पिपाही ॥
नन मोह छोह दुप सुष्प तन । तो जर जीवन हथ्थ भुत ॥
पहु पंग जंग मुक्कै नहीं । जौ जग जीवहि एक सत ॥२३२॥
अरे अमंत सामंत । मोहि भज्जंत लाज जल ॥
काम अगि प्रज्जरै । लोभ अधीन बाइ बल ॥
निस दिन चढ़े प्रमान । दुहूँ कन्ना परि सुभ्भी ॥
इह लग्गी कन्न पंक । कच्च जिहि जिहि वर वुभ्भी ॥
को राव रंक सेवक कवन । कवन त्रपति को चिक्करै ॥
डिलीव दिसा डिलिय नृपति । पंग फौज धर उप्परै ॥२६१॥
नह मन्निय मति राज । सब्ब सामंत सहित्तं ॥
बरनि नाम कविचंद । मन्न भन राजन वत्तं ॥
बहुरि दिन्न सामंत । गिरद रष्यौ फिरि राजन ॥
[illegible] अन्य अप थान । बिंट लिन्ने ते जाजन ॥
सुन्यौ नाम जादव कुअरनि । अछो कन्ह सुनि नाह नर ॥
चिर [illegible] चिंतो सुचित । घर सु [illegible] सु घर ॥२२४॥
सुनिय बन गाजंत । कन्ह तन रोस अप्प चित ॥
[illegible] लग्यौ नर नाह । [illegible] सु धन्नि दिन ॥
[illegible] न अनन्य । [illegible] मच संगिय ॥
[illegible] ॥
[illegible] ॥

खनिय सु मेह प्रथमाह यह। करहु सयन त्रिप सुष्प सह ॥२६५॥

॥ दूहा ॥

संजोगिय नयननि निरपि। सफल जनम त्रिप मानि ॥
काम कसाये लोयननि। हन्यौ मदन सर तानि ॥२६६॥
सुधि भूली संग्राम की। भूलि अप्पनिय देह ॥
जोन भयो बसि पंग दल। सो भयो वाम सनेह ॥२६७॥
नयन चरन कर मुप उरज। विकसत कमल अकार ॥
कनक वेलि जनु कामिनी। लचकनि वारन भार ॥२६८॥
रवनि रवन मन राज भय। भयौ नैंन मन पंग ॥
सूरन सों संग्राम तजि। मँड्यौ प्रथम रस जंग ॥२६९॥
तब सु राज रवनिय निरपि। हसि आलिंगन विठ्ठ ॥
रचिय काम सयनह सुवर। दिय अग्या भर उट्ठ ॥२७०॥

॥ कवित्त ॥

विनह भान पायान। इदं कमधज्ज जुद्ध दुअ ॥
सह्यो न बोलि संपुलै। विरद पागार वज्र भुअ ॥
सुकल पोलि कल्हार। झुकित कढ्यौ झाराहर ॥
विनह अरुन उद्योत। अरुन उग्यौ धाराहर ॥
पहु विन पुकार पहु उप्परिग। सु ग्रह पहक फट्टी फहन ॥
उद्दिग सुतन, अरि वर किरन। मिलित्र चक चक्की गहन ॥२८१॥

॥ वृद्धनाराच ॥

हयग्गयं नरब्भरं रथं रथंति जुद्दयौ ॥
मनों नारिंद देव देव झल्लरी सु वद्दयौ ॥
किनंकही तुरंग तुंग जूह गज्ज चिक्करं ॥
जु लोह छकि नष्पि भोमि पेत मुक्कि निक्करं ॥२८२॥
वजंत घाय सद्दकं ननद्द नद्द मुद्दरं ॥
गरव्वि देषि अग्गि ज्यों विदोप मन्न जो दुरं ॥
उठंत दिष्ट सूर की करूर अंपि राजई ॥
मनों कि सौकि वीय दिष्ट वंकुरीति साजई ॥२८३॥
उसै सयन्न क्रम्म यंक को न भूमि छंडयं ॥

जु मझ्झि कंक भज्जि कोन सार अंग पंडयं ॥
वरंत रंभ रंभ भंति सार के दुझारयं ॥
जुधं जुधं वजंत सूर धार धीर पारयं ॥२७४॥
तुटंत श्रोन सीस द्रोन नंचि रीस हक्कयौ ॥
रचंत भोम चित्र कार वीर वीर झक्कयौ ॥
परंत के उठंत फेरि मच्छ ज्यों तरप्फई ॥
रनं विधान धीर वीर वीर वीर जंपई ॥२७५॥

॥ दूहा ॥

कंड मुंड पल पंड भुअ। मचि योगिनि वेताल ॥
चिल्हनि भप जंबुक गहकि। हर गुंथी गल माल ॥२७६॥
लै चिल्ही अम्मिय सु भर। है हर सिद्धी रूप ॥
वीर सीस चुंगल चंपै। गय अघन्न अनूप ॥२७७॥
आनंदी पंपी सकल। चिल्हानी पुच्छि कंत ॥
कहि कहि गल्ह सु रंग वर। सुप दुप जीवन जंत ॥२७८॥
चिल्हानी चुलि पत्ति सों। ऊमंती वरजंत ॥
वहु गुरजन वत्ती सुनी। सो दिट्ठी दिपि कंत ॥२७९॥

॥ कवित्त ॥

केहरि रा कंठेरि । स्वामि सिंगिनि गर घत्तिय ॥
वरुन पास नियं नंद। लोकपालह पति पत्तिय ॥
हसि हलकि हक्कारि । पंग पुत्तिय जानन पन ॥
तान [illegible] संचरिय। राज राजन आनी धन ॥
[illegible] चढ़िय । नंपि वथ्थ कमधज्ज वर ॥
[illegible] सु पर । सुनन हाल विच्चैं सु वर ॥२८०॥

॥ दूहा ॥

गुन [illegible] सु वर । उसनह पंग कुंआरि ॥
[illegible] । सूर [illegible] नर वारि ॥२८१॥
[illegible] सु [illegible] । अम [illegible] चंद वदन्न ॥
[illegible] सुर । आलि प्रआलि मरन्न ॥२८२॥

॥ [illegible] ॥

[illegible] निसान [illegible] भान [illegible] हर गुर्वी ॥

श्रम सामंत नरिंद छिनक धर धुक्कयौ ॥
सविष पंग दल दिष्ट सरोस निहारयो ॥
अंचल अमृत संयोगि रेन मिस भारयौ ॥२८३॥

॥ कवित्त ॥

समौ जानि कविचंद । कहै प्रथिराज राज मुनि ॥
आदि क्रम्म तें करें । तास को सकै गुनिक्क गुनि ॥
सेस जीह संग्रहै । पार गुन तोहि न पावै ॥
तें जु करिय पहुपंग । मिलिय आरनि थर सावै ॥
नन कियौ न को करिहै न को । जै जै जै लद्धी तरुनि ॥
ग्रिह जाइ अप्प आनंद करि । वढ़ै कित्ति सब लोग पुनि ॥२८४॥

॥ दूहा ॥

इह कहि सु कवि समीप गय । गहिय वग्ग हैराज ॥
चल्यौ पंचि ढिल्ली सु रह । सुभर सु मन्यौ काज ॥२८५॥
प्रलय जलह जल हर चलिय । वलि बंधन वलि वार ॥
रथ चक्कां हरि करि करिय । परि प्रव्वत पथ्थार ॥२८६॥
उदय तरुनि नट्ठिग तिमिर । सजि सामंत समूह ॥
त्रिप अग्गै वद्दै सु इम । चलहु स्वामि करि कूह ॥२८७॥
चलन मानि चहुआन नृप । वज्जे पंग निसान ॥
निमि जु इंद दुहुँ दल भयौ । विद्ध सहित विन भान ॥२८८॥
हय गय करि अग्गें नृपति । पिफ्कि चंपे प्रथिराज ॥
मो अग्गैं आजुहि रहै । टरिग दीह विय साज ॥२८९॥

॥ कवित्त ॥

पट्टै पल छुट्टंत । कन्ह धाराहर वज्ज्यौ ॥
जनुक्कि मेघ मंडलिय । वीर विज्जुलि गहि गज्यौ ॥
हय गय नर तुट्टंत । विरह तुट्टिय तारायन ॥
तुट्टिय पोहनि पंग । राय सोनिय भारायन ॥
हल हलिय नाग नागिनि पुरत । नागिन सिर वुढ्यौ रुहिर ॥
आवहि न संग सिंगार मन । मननि सीस मुक्को सु धर ॥२९०॥

दिष्षि सेन पहुपंग । आस ढिल्ली ढिल्ली तन ॥
चिंति कन्ह चहुआन । पट्ठ छुट्यौ सुझ्झ्यौ वन ॥
निपथ अप्प है जनिय । पंग जपै जीवन गहु ॥
सु पथं सूर सामंत । जीह जीयत सु वैन लहु ॥
आवृत्त जात धंधो तिनं । सो धंधो जुरि भंजयौ ॥
वज्जियन जीव रुंध्यौ त्रिपति । मुकति सध्य है वज्जयौ ॥२६१॥

॥ पद्धरी ॥

कलहंत कन्ह कुप्पौ कराल । फरकंत मुंछ चष चढ़ि कपाल ।
चिंती सु चित देवी प्रचंड । कह कहति कंक कर सूल मंड ॥२६२॥
गुररंत सिव आसन अरोह । वामंग वाह पप्पर सु सोह ॥
इहि भंति प्रसन सजि देव दंद । तहं पढ़त छंद अन्नेक चंद ॥२६३॥
पोलंत नयन जिहि समर रंग । भारथ्थ कथ्थ भीषम प्रसंग ॥
भज्जनह राय संकर पयान । पूनी न पग्ग पंडल पयान ॥२६४॥

॥ कवित्त ॥

चाहुआन मुज्जान । भूमि सर सेज्या सूतौ ॥
देषि निअच्छरि वर । समूह वरनह सानूतो ॥
जनु परि त्रिय परहंस । हंस आलिगन मुक्क्यौ ॥
भर भारी कन्हह । हनंत अवसान न चुक्यौ ॥
धर गिरत धरनि फुनि फुनि उठत । भारथ सम जिन वर कियौ ॥
इम जंपै चंद वरद्दिया । कोस दसह भूपति गयौ ॥२६५॥
जिम जिम तन गरजर्यौ । त्रिदसि वर धायौ तिम तिम ॥
जिम जिम अंग कटंत । लप्प दल तिन गनि तिम तिम ॥
जिम जिम रुधिर परत । उठत जिन सीस सद्धित वर ॥
जिम जिम रुधिर झरंत । सजन तन वरपन सद्धर ॥
जिम जिम सु कन्ह गज्ज्यौ उरह । तिम तिम सुर नर मुनि नन्यौ ॥
जिम जिम सु नाग भरनी धरनी । तिम तिम संकर सिर धुन्यौ ॥२६६॥
नह नह नह उन्माद । देव दैवासुर भज्जिय ॥
नह नह नह उन्माद । नाग नागिनि मन लज्जिय ॥
नह [illegible] [illegible] उन्माद । सुरह असुरन मुनि लज्जिय ॥
[illegible] नह नह नाराच । सुरिंद्र पावन पर लज्जिय ॥

मुह मुहह मुच्छ कर कन्ह तुअ। चमर छत्र पहु पंग लिय ॥
सिर वंध कंध असिवर दरिग। पहर एक पट्ठ न दिय ॥२९७॥
पहर एक पर प्रहर। टोप असि वर वर बज्जिय ॥
वपर पपर जिन सार। पार वट्टन तुटि तज्जिय ॥
रोम रोम वर विद्ध। सिद्ध किन्नर लिन्निय वर ॥
अस्त वस्त वञ्ची। कपाट दद्धीच हीर हर ॥
रुधि मंस हंस हरिवंस नर। दिव दिवंग मिटि अम्मिलित ॥
कन्नर कवंध घटि तंति तिन। सुवर पंग दिष्षिय पिलत ॥२९८॥

॥ दूहा ॥

पुर सोरों गंगह उदक। जोग मग्ग तिथ वित्त ॥
अद्भुत रस असिवर भयौ। वंजन वरन कवित्त ॥२९९॥

॥ कवित्त ॥

वेद कोस हरसिघ। उभै त्रियत्त वड़ गुज्जर ॥
काम वान हर नयन। निडर निड्डर भुमि सुझ्झर॥
छग्गन पट्ठ पलानि। कन्ह पंचिय द्रग पालह ॥
अल्ह वाल द्वादसह। अचल विग्घा गनि कालह ॥
श्रृंगार विझ्झ सलपह सुकथ। लपन पहारति पंचचय ॥
इत्तने सूर सथ झुझ्झ तह। सोरों पुर प्रथिराज अय ॥३००॥
पर्यौ पेपि पाहार। राज कमधज्ज कोप किय ॥
पहु सोरों प्रथिराज। निकट दिष्ष्यो सुचिंति हिय ॥
गयौ राज जंगलिय। नाथ कनवज्ज मन्नि मन ॥
जग्य जोंग विग्गार। लहिय जै पुनि हरिय तिनु ॥
आइयौ राइ महदेव तव। नाय सीस वोल्यौ वयन ॥
संग्रहों राज प्रथिराज को। सद्धों पहु जंगल सयन ॥३०१॥
घरिय च्यारि दिन रह्यौ। घरिय दुअ वित्तक वित्तौ ॥
नको जीय भय मुर्यौ। नको हार्यौ न को जित्तौ ॥
पंच सहस सें पंच। लुथ्थि पर लुथ्थि अहुट्टिय ॥
लिपे अंक विन कंक। नको झुझ्झ्यो विन पुट्टिय ॥
दो घरिय मोह मारुत वज्यौ। करन अंभ वरष्यो निमिप ॥
तिरिगत्त राज तामस वुझ्झ्यौ। दिपिय पंग संजोगि सुप ॥३०२॥

दिल्लिय पति दिल्लिय संपत्तौ । फिरि पहुपंग राइ ग्रह जत्तौ ॥
जिम राजन संजोगि सु-रत्तौ । सुह दुह करन चंद पहि मत्तौ ॥३१०॥

॥ कवित्त ॥

कनक कलस सिर धरहि । चवहिं मंगल अनेक त्रिय ॥
पाटंबर वहु द्रव्य । सज्जि सब सगुन राज लिय ॥
ढरहि चौर गज गाह । इक्क आरती उतारहि ॥
इक्क छोरि करि केस । रेन चरनन की झारहि ॥
इम जंपहि चंद वरद्दिया । मुकताहल पुज्जंत भुअ ॥
घर आइ जित्ति दिल्लिय न्रपति । सक्कल लोक आनंद हुअ ॥३११॥

॥ दूहा ॥

गौ अंदर प्रथिराज जब । मंडि महूरत व्याह ॥
आय प्रिथा कहि-बंध सम । करहु सु मंगल राह ॥३१२॥

॥ कवित्त ॥

निरपत द्रग संजोगि । गयौ प्रथिराज मोह मन ॥
उदय सूर उठि राज । काज किन्नौ सु व्याह पन ॥
आप पंग प्रोहित्त । दीन सब वस्त संभारिय ॥
जे पठई जैचंद । व्याह संजोगि सु सारिय ॥
परवेस बिंद कारन न्रपति । आए बज्जन बज्ज घर ॥
पुंपे सु प्रथ्थ श्रृंगार करि । दीनौ विधि विधि दान भर ॥३१३॥

॥ चंद्रायना ॥

अगर धुम्म धुप गौपह उनयो मेघ जनु ॥
तहय मोर मल्हार निरत्तहि मत्त घन ॥
सारंग सारंभ रंग पहुक्कहि पंपि रस ॥
विज्जुलि कोकिल सानि झमक्कहि जासु मिसि ॥३१४॥
दादुर साद्दुर सोर नवप्पुर नारि घन ॥
मिलि सुर मधि मधु वृत्त माधुर मझ्झि मन ॥
सालक पंच पचीस प्रजंकति दून दस ॥
तहां अथ्थि परवीन सु वीनति दासि दस ॥३१५॥
के जुअ जुथ्थ जवादि प्रमादहि मंद गति ॥
केवल अंचल वाय निरूपहि सरद रति ॥

बड़ी लड़ाई समय

॥ आर्या ॥

आषाढे मासे दुतियानं, राज सभा मंडिय महिलानं ।
सा इंछिनि दच्छिन पामारी, सील सुच्च पतिव्रत संचारी ॥१॥
मुक्की सा जदि पुत्ति पंगानी, न्याय वट्ट प्राया प्रीयानी ।
सिंधासन राजन सनमानी, कैलासी लच्छिय इह दानी ॥२॥
इक प्रोढह इक्कह मुगधानं, दुहु लच्छन वंधे वंधानं ।
इंछिनि प्रौढ पवित्र पुंआरी, मुगध संजोगिय पंग कुमारी ॥३॥
दुविधि प्रीति राजन प्रति पारी, चतुरत्तन चित्यौ वर नारी ।
म्है वरनी वरुनी वर संच्यौ, विनयं बल पंगज पति अंच्यौ ॥४॥
लिपि नेनं सु चिन्ह विनानं, वसि करि मोहि सुमुष्प सयानं ।
तिय परिमान तिया परि जानं, इहां अंदेस जु है कछु आनं ॥५॥
मैं विनया विनया वर संच्यौ, कनवज्जनि वसि करि कर पंच्यौ ।
वान पंच धरि काम विनानं, धर धर धुक्कि परी सहि आनं ॥६॥

॥ दूहा ॥

पित्र घात सों मन मिलै, और वैर मिट जाइ ।
सौति वैर अंतर जलनि, दिन प्रति ग्रीषम लाइ ॥७॥
मुप मिठ्ठी चित्तां करै, मन में देत सराप ।
वंटै प्रेम सु प्रीय कौ, अंतर दभ्भै आप ॥८॥

॥ अरिल्ल ॥

इंछिनि इंछिय अच्छनि रप्पन, राजसंजोइय प्रेम परप्पन ।
दुज दिय हथ्थ प्रजंक संजोइय, निसि गति मोहि कथा सुनि तोइय॥९॥
दिय पामारि पवित्र सुक, लिय संजोइय वंदि ।
पन प्रजंक टट्टन टरति, गति न कहै सुर सदि ॥१०॥

॥ चौपाई ॥

रचि शृङ्गार अनोपम रूपं, चातुरता गति मति आनूपं ।
मंगहि इष्ट सुकंमति गत्ती, विधि परजंक संजोगि संपत्ती ॥११॥

॥ कवित्त ॥

ससि कन्नों ग्रग चह्यौ, कह्यौ सुक सप्त दीप तन।
तम सु देव पुलि पंग, जोति संदीप छिनहि छिन।
हुई लज्ज अचन्नीय, कलिय मुद्धं गति जानं।
छिन छिन नमइ रतिपति, परसि पुहुपंजलि थानं।
नव तुष्टि काम कमलारमन, भवन द्रष्टि रुचि रमन मन।
जिम जिम सु विनय विलसिय मयन्न, तिम तिम सुक बुद्धिय समन ॥१२॥
देषि वदन रति रहस, बुंद कन स्वेद सुभ्भ वर।
चंद किरन मनमथ्थ, हथ्थ कुठ्ठे जनु दुक्कर।
सु कवि चंद वरदाय, कह्यि उप्पम अति चालह।
मनों मयंक मनमथ्थ, चंद पुज्यौ मुत्ताहल्य।
कर किरनि रहसि रति रंग दुति, प्रफुलि कली कलि सुंदरिय।
सुक कहै सु त्रिय इंछिनि सुनवि, पै पंगानिय सुंदरिय ॥१३॥

॥ कुंडलिया ॥

जो रस रसनन अनुदिनह, अधर दुराइ दुराइ।
सो रस पुनि कन कन कर्यो, सखिन सुनाइ सुनाइ।
सखिन सुनाइ सुनाइ, दिगै सुनि सुचि लज मन्नह।
[illegible] कंपि, नेंन नटकीय नन्नह।
[illegible] मैन, कर्यो अद्भुत प्रिय रस।
[illegible] रस अंतर भेद, प्रीय जानै त्रिय जो रस ॥१४॥

॥ [illegible] ॥

[illegible] ॥१५॥

॥ दूहा ॥

[illegible] ॥१६॥

॥ [illegible] ॥

[illegible] ॥१७॥

॥ दूहा ॥

जौ पुच्छै सुप दुष्प मो, तौ मो एह अंदेस।
देषि कहै वर वत्त मै, किहि गुन रचिय नरेस ॥१८॥
सुनि बाला वर बेन मुहि, मंत्र भेद बहु भेस।
जौ वंछै इंछिनि महल, तौ मेटै अंदेस ॥१९॥

॥ कवित्त ॥

सुक पंजर करि हेम, माल मोतीन मंत्र जरि।
धन सुगंध निकुरास, देस संप गुरिग हथ धरि।
दस हथ्थी इंछिनि रसाल, माल त्रिय साल उनंगी।
सेत रत्त वर सुमन, मुक्कि करि गंध सुरंगी।
नर भेप नारि कंचुकि सरस, हुइ दासी वर भज्जि मन।
क्रम चुकंति दुक्कति विक्रम, बयन दरसि सज्जल नयन ॥२०॥

॥ अरिल्ल ॥

दस हथ्थी पंजर धर मुक्किय, दिसि संजोगि राज दिठि रुक्किय।
नन तुच्छी त्रपं पच्छिल रत्ती, ज्यों सर फुट्टै हंस प्रपत्ती ॥२१॥

॥ दूहा ॥

वक्र दिष्ट संजोग की, सुक कहि त्रपहि सुनाइ।
एक अचिज्ज इंछिनिय, मे ग्रह दिठ्ठी राइ ॥२२॥
कहै सुक्क फुनि फुनि न लग, त्रिप सुनि कही न वत्त।
मंत्र भेद उप्पर करी, करत चित्त अनुरत्त ॥२३॥
जो सुक त्रप कानंन लौ, तव पुच्छयौ वर जोय।
जो कछु कह्यौ सु कंत सौ, कह्यौ कंत जो होय ॥२४॥

॥ पद्धरी ॥

मति मान रुप लच्छीय मान, जीवन सु पीव आंनंद थान।
करवत्त दोप कप्पन वारि, वर कंक दिन्न वर सव्वं रारि ॥२५॥
धुम्मर वदन्न दुप दमित पाइ, ज्यौं आनंद जाइ कुमलाइ पाइ।
मंडित्त मत्त तिहि चाहुआन, सुप रुठ्ठि त्रीय नव रुठ्ठि प्रान ॥२६॥

॥ दूहा ॥

जिन विन नृप रहते न छिनं, ते भट कटि कनवज्ज।
उर उप्पर रप्पत रहै, चढै न चित हित रज्ज ॥२७॥

॥ कवित्त ॥

कटे कुटुंब मन मित्त, हित्तकारी काका भट।
कटे सूर सामंत, सजन दुज्जन दहंन ठट।
कटे सुनर नारे सहेत, मातुलह पञ्चय फुनि।
कटे राज रजपूत, परम रंजन अवनी जन।
निसि दिन सुहाइ नह नृपति कौं, उच्च सास छंडै गहै।
अंतग्गिन अग्गि उद्वेग अति, सगति सूल सालै सहै॥२८॥

॥ दूहा ॥

नव नारे अंते उरह, कीनौ मनौ विचारि।
नृप अग्गैं उत्तार किय, धरि सुप अग्ग पंवारि॥२९॥
चरन लग्गि जुग जोरि करि, कह्यौ सुनहु महि इंद।
दृसहि सिकार दिखाइये, मत्त मृगादि मयंद॥३०॥

॥ दूहा ॥

ज्यौं वराह वागुर रुकै। ज्यौं बंधहि वर बानि॥
ज्यौं कुट्टैं छर छोरि कै। ज्यौं जुट्टहि सक स्वान॥३१॥
निठोल वचन अलसित नयन। दिय इक उत्तर राय॥
कोटि हनौ गोरी सहल। तो आपिट्ट मिलाइ॥३२॥
हंस परनाम प्रनाम करि। गनिय मानिय थान॥
सहस परम संजोगिना। नान नु जीवन प्रान॥३३॥

॥ चौपाई ॥

सहस नाद सात सब गहि। सो पर्जुनाय जीरन दई॥
कहौ मान मांगि दहु जहाँ। देहि गोठ निसारी तहाँ॥३४॥

नै विहंड बन हंकि। सकि नव पंड मंड वर ॥
सूर सूर बाधंत। बाज छाडंत छंडि वर ॥
वेधहि वराह उच्छाह मन। तानि इक्क सर इक लहै ॥
पावै न आन सावज अवर। ऐन सैन मेलै गहै ॥३७॥
सोलंबी संतोष दास। नंदन नारायन ॥
तुच्छ पटे पग दौरि। पवन विन त्रिपति परायन ॥
आसा लगि धावंत। रहै दासा तन लीयै ॥
रेन दीह जानेन। रहै हिय हुंकुम जु कीयै ॥
तिन कह्यौ आय प्रथिराज सहुं। सिंघ एक भाल्यौ निकट ॥
निठुर निसंक कंदर मँड्यौ। वीज तेज लोचन विकट ॥

॥ गाथा ॥

यौ सु त्रपति अवन्नं। गवनं कीन लीन कोवंडं ॥
कोमल पद संचारं। उच्चारं कोमलं भासं ॥३८॥

॥ दूहा ॥

कंदर अंदर धूम किय। सिंघ भरम प्रथिराज ॥
पुच्छ पुरान नही सुन्यौ। अति गति होत अकाज ॥३९॥

॥ पद्धरी ॥

त्रिन पत्र कढ्ढ लगि उठी झार। गइ गुहा मंझ धसि धूम धार ॥
चट पट्ट सद्द सुनियै न कान। फुट्टिय सु झाल छुट्टै औसान ॥४०॥
सब जीय जंत भजि सैल तज्जि। धरराय झार पावक गरज्जि ॥
चप श्रवा संकि पारंत चीस। कलमलि मुनिंद मन भई रीस ॥४१॥
कोमल सु कमल द्रग श्रवै नीर। रद चंपि अधर कंपत सरीर ॥
जट जूट छूटि उरझंत पाय। म्रग चरम परम नंष्यौ रिसाय ॥४२॥
तमि तोरि डारि दिय अच्छ माल। निकर्यौ रिषीस वेहाल हाल ॥
गहि दर्भ हस्त वर नीर लीन। प्रथिराज राज कहु श्राप दीन ॥४३॥

॥ गाथा ॥

इहि रिषि कहि वरवैनं। तजि संसार आपियं रायं ॥
मोद्रिग जिहि दुख दीनं। तास तुम चच्छ कढ्ढाइं ॥४४॥

॥ कवित्त ॥

तवहि चंद कवि दौरि। विप्र पद रह्यौ विप्र गहि ॥
छमि स्वामी अपराध। साध मुनि फुनि उद्धार कहि ॥

तुम सु पंड ब्रह्मांड । पंड नव तुम तप चल्लहि ॥
तुम अंगन जीमूत । बरषि जीवन प्रति पल्लहि ॥
केहरि भरंम हम भ्रम किय । पायक बसिइय देव हुअ ॥
संकुचि नरिंद कंपे डरपि । थरपि हथ्थ सिर सोम सुअ ॥४५॥
चंद बदन्न मुन्निंद । कहै तुम नाम ठाम कहु ॥
तो मुष सबद रसाल । सुनत सुष होय हियें बहु ॥
तबहि भट्ट भाषंत । स्वामि मो नाम चंद कवि ॥
बह नरिंद प्रथिराज । लज्ज भरि रक्खौ देव दबि ॥
अब हैं कृपाल प्रभु उच्चरहु । कछुक देउ बरदान फिरि ॥
अप्पौ नरिंद फिरि उद्धरहु । जिहि पारंगत होहि तिरि ॥४६॥

॥ चौपाई ॥

हौं बालक दुरबासा तनौं । सुनि बात सब तोसौं भनौं ॥
इह नृप मोहि दियौ बरदान । तेरे कर मरिहैं सुलतान ॥४७॥
यौं कहि रिषि अंतर स कुल्यान । मुह आगैं नृप मुष कुम्हिलान ॥
देषि दसा डर भई मुनिंद । बोल्यौ रिषु कुम आउ नरिंद ॥४८॥

॥ दूहा ॥

तब बहु आन क चंद कवि । कह गोरी सुलतान ॥
[illegible] मैं [illegible] । [illegible] तुम दिय बरदान ॥४९॥
आगमौ प्रथिराज [illegible] । निज मन हर्ष [illegible] ॥
[illegible] ॥५०॥
[illegible] ॥
[illegible] ॥५१॥
[illegible] ॥
[illegible] ॥५२॥
[illegible] ॥
[illegible] ॥५३॥

[illegible]

[illegible]
[illegible]

कै न्योति विप्र परहरयौ। कर्यो नन वैन सासु कौ ॥
तेल लोंन वर हेम। चोर वर धरयौ कासु को ॥
कीनी न कानि कै जेठ की। कै वोलत ज्वाव न दयौ ॥
वुल्ल्यौ सराप रिपि कंत कौ। सती हारु कैं हर लयौ ॥५४॥
निसा एक माधव सु मास। ग्रीपम रिति आगम ॥
निसा जाम पच्छलौ। सुपन राजा लहि जागम ॥
सेत चीर छौनी। पवित्र आभ्रंन अलंकिय ॥
मुंकत बंध आटंक। बंध वेनी अवलंकिय ॥
निज वैरि धारि कज्जल नयन। हर हराह सदह करिय ॥
मानिक्क राइ वंसह विपम। रप्पि रप्पि धरनी धरिय ॥५५॥

॥ साटक ॥

का तूं सुंदरि हुंधरा किमहिता इच्छा परा वांछिता ॥
को वांछा वर राज कोवर रुची दातारय रूपानिता ॥
नं नं नं त्रप जान दानरुचयं रूपं न विद्धी त्रयं ॥
पड गंधार सुमार दुत्तर अरी सो मे वरं सुंदरं ॥५६॥

॥ दूहा ॥

इम वसुधा सुपनंत दिय। रजगति रजन विचार ॥
विलसत दिन ग्रीपम अरध। सुधपिय पंग कुआरि ॥५७॥
रप्पि रप्पि उच्चार वर। गति सिघल अतिरूप ॥
सुपनंतर चहुआन सों। चलन कहत इल भूप ॥५८॥
धरकि चित्त जोगिनि त्रपति। दिपि प्रभात दुति गान ॥
भान किरन दिसि दिसि फटी। तम घटि तमचर गान ॥५९॥

॥ कवित्त ॥

जग्गि जलनि प्रथिराज। जग्गि संजोग सुपनि कहि ॥
सो सपनंतर जंपि। पत्ति दिट्टि जु रत्ति महि ॥
सेत वस्त्र उत्तंग। चित्त हरीन कुटिला गति ॥
वेसम गुन गुर दुत्ति। दुत्ति उजलंत कुटीरति ॥
ऊंचै वचन्न वर कठिनह। घन कुलटा गति चलन कहि ॥
भत्र भवसि गत्ति त्रिम्भान कहि। नन जानै भत्र गतिय वहि ॥६०॥
मुनि सुकंत धरइंद। जोय दियौ जुग्गिनि गति ॥
पुत्त मित्त दारा न बंध। रोकन पितुरनि पति ॥

दिष्टमान रोकै प्रमान । चच्छि अंछनि लच्छि कुछी ॥
भोग विना बँधि जगत । भ्रम्मवय जग त्रय तुछी ॥
मायाति नष्ट संसारनिय । त्रिप नच्चवि मुक्के जगत ॥
जीवन्न प्रान प्रापति जबरु । तब लग इह भावी बिगति ॥६१॥

॥ मुरिल्ल ॥

हँसि आलिगन दै चहुआनं । पिय मयूष दंपति रसपानं ॥
सुरत सुरत मंनं वर मत्तं । करहि सार संसार सुरत्तं ॥६२॥

॥ कवित्त ॥

तब सु साहि गज्जनै । दूत ढिल्लीय पठाए ॥
जु कछु तंत कौ मंत । अंत कहि कहि समुझाए ॥
लै आवहु जंगल नरेस । पच्चरि सब सुद्धिय ॥
राज काज चहुआन । सकल सामंत सुबुद्धिय ॥
फुरमान साहि सिर धरि लियौ । भेप कियौ सोफी तिनह ॥
उभै पष्प क्रम पंथह चलै । कागर काइथ कर दिनह ॥६३॥

॥ दूहा ॥

चर वर वत्तति सिद्ध किय । झुकि किय घाव निसान ॥
सत्त सहस कग्गर फटे । देस देस सुरतान ॥६४॥
फुट्टिय वत्त प्रचार चर । घर घर ढिल्लिय थान ॥
चढ्यौ साहि चहुआन पर । चढि हय गय असमान ॥६५॥
वढि आवत ढिल्ली सहर । चढ्यौ साहि सुरतान ॥
घर अंगन मंगन रुरिग । सुनत सूर अकुलान ॥६६॥
ग्रह वंभन ग्रहवान नर । ग्रह छत्री छह वृन्न ॥
भई वाति नर नारि मुप । सब लग्गै सन सन्न ॥६७॥

॥ मुरिल्ल ॥

भै लग्गौ दिल्लिय पुर जामह । नगर सेठ पहि गय प्रजतामह ॥
मिलिय सकल एकंत महाजन । किम बुझ्झैं रतिवंतौ राजन ॥६८॥

॥ दूहा ॥

सुने गहंमह विप्र दर । आयौ उट्टै ताह ॥
तब दरपति सनमुप कहिय । आये श्रीपति साह ॥६९॥

प्रजा पलक सथ उम्महो। जे वड़ दिल्ली साह ॥
सो आये दरबार तुम। कोइ इक काज उगाह ॥७०॥
आए आतुर राज गुर। करिय विवह महमानि ॥
आदर करि आसन्न दिय। संबोधे वर बानि ॥७१॥

॥ कवित्त ॥

सुनि अवाज सुरतान। पलक भज्जिय नद मंडल ॥
कर कुसाव भेहरा। दान अरु मान अपंडल ॥
मिलि परवान पुँडीर। सहर लुट्यौ द्रव साइय ॥
हनि सोदागिरि वानि। बनिज उन्नित पट पाइय ॥
अग्यान लुपै अग्या न्रपति। सत संपति संभर धनी ॥
गुरराज काज अवसर अवसि। प्रज पुकार मंडिय धनी ॥७२॥
हम सु कज्ज प्रव पंच। पढ़ै पत्रा प्रभु रंजहि ॥
हम जु लच्छि आस रहि। चरन चंदन घसि वंदहि ॥
हम सुदेव जग्योपवीत। सोहै तन मंडन ॥
हम विरद वंदि न पढंत। पापह पर पंडन ॥
इह विकट भट्ट चंदहि चरित। कहै सुमानै न्रप नवल ॥
परतष्पि द्रुग्ग पुच्छन चलौ। मंत्र घत्त सबह सवल ॥७३॥
धर वाहर पंडवन बुद्धि। बँधवन रुधि छुट्टिय ॥
धर वाहर वामंन। छलित्त वल दोप सुथट्टिय ॥
धर वाहर जुरि जरासिंध। गुर राज जुद्ध किय ॥
धर वाहर सुर पत्ति। अस्ति दद्धीच मंगि लिय ॥
जिहि जियत धरनि धर और प्रभु। तिहि जननी जुब्बन हरिय ॥
वंभन सुकज्ज इह अज्ज तुम। प्रज पुक्कार मंडी करिय ॥७४॥

॥ दूहा ॥

आदर चंद अनंत किय। ग्रह आवत गुरु राम ॥
सम सुत त्रियनि सु चरन परि। सिर फेरिग सव हाम ॥७५॥

॥ मुरिल्ल ॥

तव गुरराज राज कवि बुझ्झै। तुहि वरदाइ तीन पुर सुझ्झै ॥
अहि निसि देव सेव गुरु ठानिय। सो पट मास मिले विन जानिय ॥७६॥

॥ दूहा ॥

हस्यौ चंद वर बिप्र सों। तुम जानहु वहु भंति ॥
जिहि कामिनि कलहौ कियौ। सो जामिनि बिलसंति ॥७७॥

॥ भुजंगी ॥

मिले विप्र भट्टं अनूपंम धामं। मनो हिंदवानं सबानं तकामं ॥
उभै सूर सांई सु अग्या विनानं। चढे एक चौडोल नर एक जानं ॥७८॥

॥ कवित्त ॥

दिष्पि दइय दरबार। पंग कुंअरि चर बारहि ॥
नारि भेप नर वस्त्र। सस्त्र लकरी कर भारहि ॥
मार मार उच्चार। बाल तरुनी सुगंध रस ॥
तुरिय नथ्थि गज नथ्थि। नथ्थि रथ बिरद बंदि जस ॥
बाजहि विसाल रन तूर रव। भवर भीर भामिनि भवन ॥
दिठि परत लरथ्थर पय परत। नकरि जीव अग्गह भवन ॥७९॥

॥ दूहा ॥

वर किंचिक पुच्छह न्रपति। सुनि कलरव कवि वानि ॥
धाय चंद दरसन कियौ। ध्रम्म परिग्गह ठानि ॥८०॥
सुनि कवि बानि प्रमान धन। कहि इंछनी सें जाइ ॥
जु कछु कहौ वरदाय वर। ज्यों हित दिसा पसाइ ॥८१॥
कग्गर अप्पह राज कर। मुप जंपह इह वत्त ॥
गौरी रत्तौ तुअ धरनि। तूं गोरी रस रत्त ॥८२॥
सुनि कग्गर फार्‌यो सुकर। धर रुपै गुर भट्ट ॥
तरकि तोल सज्यौ न्रपति। जिम वद्ल्यौ रस नट्ट ॥८३॥
प्रिय अप्रिय दिष्पौ वदन। किय जिय न्रप भौ सथ्थ ॥
हूँ पूछों वर वरह तुहि। कहि सम दौरति कथ्थ ॥८४॥
अद्‌भुत इक दिष्यौ न्रपति। रयनि गलित पिन प्रात ॥
सुरति एक सम्मुह रही। सा सुपनंतर बात ॥८५॥

॥ कवित्त ॥

सुनि उट्टिय संजोगि। वचन जै जै जंपत जस ॥
धनि सूरति चहुआन। राज सिंगार वीर रस ॥

हक्क मरन सुर नराँ । मरन सिध साधक मुक्कै ॥
मरन रहै जग नाम । चित्त रणपत म्रत चुक्कै ॥
अध अध करे अरियन दुअध । तूं उधतदि अरधंग हौं ॥
सामंतन को सो मंत करि । राजस अप्प पधारिहौं ॥८६॥
सुपनंतर पुच्छनह । राजगुर कविगुर बुल्लिय ॥
सो सुपनंतर सुनवि । तेन नृप तिन प्रति पुल्लिय ॥
सुवर हथ्थ दै मथ्थ । अभय पंजर पढि दिन्नौ ॥
सहस कलस भरि पीर । अरघु रवि ससि को किन्नौ ॥
दसवलि दिसान दसमहिप हनि । मित अनंत मित दान दिय ॥
तिहि दिवस देव प्रथिराज दर । संझसुभर भर महल किय ॥८७॥

॥ दूहा ॥

आवस्यक भावी विगति । कहा महिप वध होइ ॥
जो जतननि टारी टरै । नल पंडव सम कोइ ॥८८॥

॥ कवित्त ॥

करिय सुचित भर सव्व । राज दिन्नेव द्रव्य भर ॥
मंगि मदन श्रृंगार । गज्जवर पट्ट मद झर ॥
रयन कुमर आभासि । दीन माला मुत्ताहल ॥
असी बंधी निज़ पानि । वंदि कीनौ कोलाहल ॥
आरोहि गज्ज कुम्मार निज । पच्छ वंध सा सिंधु किय ॥
जोगिनिय वंदि चहुआन पहु । क्रत्य काज मन्नेव इय ॥८९॥

॥ कवित्त ॥

उठ्ठि महल प्रथिराज । मंगि आरोहन वाजिय ॥
रावल प्रथम चढाय । चल्यौ चहुआन सुताजिय ॥
करि अस्तुति सम सिंध । तुमहि वड्ड वड्डाइय ॥
तुम जोगिंद जग जित्त । कित्ति तुम कहिय न जाइय ॥
परसंस करत अन्नेक परि । करि डेरा रावर समर ॥
चढ्ढनह वर निसि सेप कहि । आयौ वज्जन वजत घर ॥९०॥
वाजि घरिय घरियार । साहि उत्तरिय सिंधुनद ॥
विपम वाव उड़ि भ्रिग । सिंधु छुट्यौ कि सद्द मद ॥
तमसि तमसि सामंत । राजराजस किय तामस ॥

घुमरि घुमरि नीसान । थान जग्गे मन पावस ॥
निसि अद्ध अनेही पीय तिय । पिय पिय पिय पप्पीह तिय ॥
पंपनिय फरकि अंपिय अनपि । उदय अनंद सुबीर किय ॥६१॥

॥ मोतीदाम ॥

जयंजय सद्द बदै चहुंओर । करै जनु प्रात सिपंडिय सोर ॥
झनक्किय भेरि सु झभ्भर वद्द । रनक्किय बीर नफेरिय सद्द ॥६२॥
हरक्किय झूझ सुराज रवद्द । भरक्किय नाग गयो सिरलद्द ॥
तुरक्किय तुंग तुरंगन हीस । सरक्किय सप्पय सेसनि सीस ॥६३॥
षरक्किय पष्पर पष्पर तोन । ढलक्किय ढाल सुढिल्लिय प्रोन ॥
हलक्किय हाल फवज्जिय सूर । धरक्किय धाम सु कातर कूर ॥६४॥
कथं कथमान गुमान उमान । दुअं दस कोस मिलान मिलान ॥
सु हिंदुअ मेछ बज्यौ रन तोल । गयौ दिव देव कबी दिय बोल ॥६५॥
निमेषक भूमि अयासह अंग । चढ्यौ जनु इंद्र धनुक्कह रंग ॥
जयं जय सद्द करी तिहि बीर । कह्यौ तिनि राज रवन्नह पीर ॥६६॥

॥ कुंडलिया ॥

न्रप पयान पोमिनि परषि । घटि साहस घटि एक ॥
सुकथ केलि पीयूष पिय । जतन करहि सषि केक ॥
जतन करहि सषि केक । हाय करि जै जै जंपहि ॥
दंत कष्ट कर मिंडि । थरकि थरहर जिय कंपहि ॥
इह प्रयान नृप करत । परी संजोगि धरा धपि ॥
सषी करत सब जतन । चलत पयान तहां नृप ॥६७॥

॥ त्रोटक ॥

जतनं जतनं किय झंझलियं । दिपि दीपक भोन भर्‌यौ सुहियं ॥
भवनं भवनं भवनां गरियं । धर मुच्छि परी बुधि सागरियं ॥६८॥
ससि सूर चयं रवि जोग ससी । विष ज्वाल असी सुमनं विगसी ॥
द्रिग चंचल अंचल सोमुदयं । विरहा उर उग्ग ग्रसी सुधियं ॥६९॥
अहि छुट्टि लियं वयरं जुलियं । पह तुट्टि सुधा निधि की त्रिधियं ॥
वर विंब विलोकि सषी करियं । असु आसिक नासिक से झरियं ॥१००॥
अह कट्टहि निट्ठ निसान वटे । विरही घटिका जनु अग्गि पढै ॥
विरही वरनेह अनंग कसं । भए जानि कि रोग त्रिदोस वसं ॥१०१॥

सुवढी विरही न घटे न घटं । सु चढी जनु वेलिय अप्प घटं ॥
जल नेननि बूंद परै कुचयं । तिनकी उपमा नयनं सचयं ॥१०२॥
जुरठी हुति पुव्व कमोद कली । तिहि तारक सोम वसीठ हली ॥
इहि सारन प्रान न मुक्कि पती । तिन मंडि रहे दुप देषि जती ॥१०३॥
चल चंदन चीरति सीर करे । लहरी विष जानित प्रान हरे ॥
सपि सूंठिन मूढं रसे सुननं । वन सारनि हारनि नारि थनं ॥१०४॥
नटि नारिय नारिय पानि गहे । तजि जाहि न अंक वियोग सहे ॥
पल ध्याननि आननि नेन चहे । अलि ओटन जोट वियोग सहे ॥१०५
घन घूसरि भूमि समीप रहे । ठग टग्ग लगी चप कोन चहे ॥
पिन दापिन पीनह पीन भई । घरियार निहारत प्रान भई ॥१०६॥

॥ कुंडलिया ॥

घर घयार वज्जिग विषम । हलिग हिंदु दल हाल ॥
दुतिय चंद पूनिम जिमैं । वर वियोग वढि वाल ॥
वर वियोग वढि वाल । लाल प्रीतम कर छुट्टौ ॥
है कारन हा कंत । आस आसु जानि न फुट्टौ ॥
देषंत नैन सुभ्भै न दिसि । परिय भूमि संथार ॥
संजोगी जोगिन भई । जव वज्जिग घरियार ॥१०७॥

॥ कवित्त ॥

वही रत्ति पावस्स । वही मघवान धनुप्पं ॥
वही चपल चमकंत । वही बगपंत निरप्पं ॥
वही घटा घन घोर । वही पप्पीह मोर सुर ॥
वही जमीं असमान । वही रवि ससि निसि वासुर ॥
वेई अवास जुग्गिन पुरह । वेई सहचरि मंडलिय ॥
संजोगि पयंपति कंत विन । मुहि न कछू लग्गत रलिय ॥१०८॥

॥ पद्धरी ॥

चढ़ि चल्यौ साह चहुआन सूर । धुँधरी विदिसि दिसि दिपिकरुर ॥
सुर धुनि निसान वज्जे सुरंग । नफ्फेरि रंग सिंधू उपंग ॥१०९॥
चतुरंग सेन सजि वर प्रमान । सिंधूरन त्रह्म चढि चाहुआन ॥
पोलि किपाट वर मुगति रूप । सोमेस पूत अवधूत भूप ॥११०॥

॥ कवित्त ॥

चढ़त राज चहुआन । छींक अगनेव देव दिसि ॥
मिल कुंजर बिन दंत । अश्व अपलानि चित वसि ॥
सूत्र मंत तुट्टयौ । राज दिट्ठ सु विचारय ॥
गौर कुंभ उप्परै । स्याम कुंभह् अद्धारिय ॥
तजि मोप रस्स संधी त्रिपा । आवै क्रित गवनन छत्री ॥
असु नीम जोग पंचमि दि्वस । चढयौ राज निस तुछ पत्री ॥१११॥

॥ दूहा ॥

इह् चरित्र पिष्षिय चरन । वह चरित्र नह् राय ॥
सो चरित्र सुरतान सों । सिंध उलंघिय धाय ॥११२॥
जाय जलह् पथ उत्तर्‌यौ । दिल्ली वै चहुआन ॥
सूरन अति आनंद हुअ । सहि संजोगी हान ॥११३॥

॥ कबित्त ॥

सुभर उतरि सतनंज । चंद पट्टौ कंगूरह ॥
लै आयौ जालंध । राइ हाहलि हंमीरह ॥
जाल पाप रसि परस । परस दरसत इह् अप्यौ ॥
आदि जुद्ध दय दींन । सिंव पष्षरि किन दिष्यौ ॥
हम नमसकार करि पुच्छयौ । अरु पुछमौ पछली बिगति ॥
हु कहों सु तुम जानहु सकल । चलहु चंद अग्गे निरति ॥११४॥

॥ दूहा ॥

वहुत कहत हम्मीर सुनि । अव कछु रहत रसन्न ॥
थान भिष्ट सोभत नहीं । नर नप , केस दसन्न ॥११५॥
तत्त वत्त जानौ सवै । हम माया इछांमि ॥
चलि जालंधर ढैह्रै । मिलि जालय पुच्छांमि ॥११६॥

॥ कवित्त ॥

कहि हमीर सुनि देवि । तत्तवादी कवि आया ॥
को हिंदू को तुरुक । कोंन रंकं सु को राया ॥
को रविंद को जिंद । कोन तापस को छाया ॥
को साहब को राज । कवन सुकवि कह् गाया ॥
इह् परम हंस संसार हित । तूं माया तूं मोह मत ॥
जानों न वाम दच्छिन करन । हों सांई संसार रत ॥११७॥

एह परत्तर दीह। चंद जान्यौ चहुआनं ॥
जिन भुजानि धर भार। भोमतीय अधरं भानं ॥
हसम हय गय देस। दीह घट्टै बल वट्टै ॥
धन्न मरन तिन जानि। महल सिर सारे पट्टै ॥
आवृत्त वात जोगिनि पुरह। भव भवस्य इह त्रिमयौ ॥
कविचंद रुक्कि वंच्यौ जियन। ग्रिह गोरी हाहुलि गयौ ॥११८॥

॥ कुंडलिया ॥

रोकि कविंदहि अप्प मिलि। सो सुरतान अबुभ्भ ॥
सुनत राज पृथिराज कै। हवि लागी उर मभ्भ ॥
हवि लागी उर मभ्भ। संभ आई गुर गल्हां ॥
भट्ट बसीठह रोकि। अप्प है वै दिसि हल्लां ॥
दस हजार हैवरनि। लष्प पयदल श्रम वृन्दा ॥
मिल्यौ जाइ सुलितान। रोकि देवलें कविंदा ॥११९॥

॥ कवित्त ॥

सजि आयौ सुरतान। जूह सेना अति आतुर ॥
तुरिय लष्प दह शुभर। दंति दस सहस मंत वर ॥
पुर संतुल सा निकट। आय दलबल संपत्तौ ॥
सज्यौ देपि दिल्लीस। नाम गोरी अनुरत्तौ ॥
पुछ्यौ सुमंत तातार पां। पुरासांन साहाब सदि ॥
टट्टों सु सज्जि जंगल सुपह। रच्यौ बंध अप्पान रदि ॥१२०॥

॥ दूहा ॥

साक सु विक्रम रुद्र सौ। अट्ट अग्र पंचास ॥
सनि वासर संक्रांति क्कक। श्रावन अद्धौ मास ॥१२१॥
सावन मावसि सूर सुअ। उभय घटी उदयत्त ॥
प्रथम रोस दोउ दीन दल। मिलन सुभर रन रत्त ॥१२२॥
दरसे दल वद्दल विषम। रागरु लाग निसांन ॥
मिले पुव्व पच्छिमह तें। चाहुआन सुलतान ॥१२३॥
सारन धीरी सारुहै। धीर न धरी प्रमान ॥
चाहुआन गोरी सरिस। गोरी रा चहुआन ॥१२४॥

॥ भुजंगी ॥

मिले चाय चौहान सुलतान पग्गं। मनो वारुनी छक्किवे बारु लग्गं ॥
उठे हथ्थ हक्कं कहं कूइकालं। जुटे जोध जोद्धं तुटै ताल तालं ॥१२५॥
भए सेल भेलं हुहुं मार मारं। वढ़ी संग लग्गी वजी धार धारं ॥
सुभट्टं सुथट्टं सुरीसं समेकं। भई सेलमेलं अनी एक एकं ॥१२६॥
परैं घाइ अघ्घाइ केकेन सुद्धं। कटै अद्ध अद्धं कमद्धं कमद्धं ॥
परै सूर सम्मर्भ उतंगं सुधारं। भ्रमै व्योम विम्मान आरंभ हारं॥१२७॥
छुटे बान चहुआन आवद्ध राजं। लगे मेछ अंगं मनों वज्र बाजं ॥
फुटै संगि संनाह के अंग अंगं। उठै श्रोन छिछ्छें जरें जानि ढंगं ॥१२८॥
हते राज प्रथिराज सामंत सेतं। भए मेछ अद्धे मनों राह केतं ॥
बक्यो वीर नन्दी सुसूली अनन्दी। नचै भूत भैरु बकें जानि बंदी ॥१२९॥
भिरें जुद्ध जानीय जुथ्थानि जुथ्थं। ग्रहै गिद्धि सेवाल लुथ्थानि लुथ्थं ॥
चुवै श्रोन सट्टी किलक्कंत वुटै। ग्रंह मेछ लागें जुरै सूर छुट्टै ॥१३०॥

॥ कवित्त ॥

एक बान कम्मान। साहि चहुआन कोप गहि ॥
पां ततार लहु वंध। कढ्ढे सुरंग बहि ॥
ओड़न नंपि नरिंद। वार कट्टिय कट्टारिय ॥
दिन पलट्यौ चहुआन। हथ्थ छुट्टै नह तारिय ॥
भावी विगत्ति भजंन घडन। दइ दुवाह इह त्रिम्मयौ ॥
पृथिराज गहन सुरतान कै। मुप जंपन वर सुम्भयौ ॥१३१॥
मरत वार दुरजोध। पानि संग्रहि रोरह वर ॥
नल मुक्कै भट नट्ट। गोपि ग्राहत तन पंडर ॥
मलह सिह कछि म्रदंग। गूजर राव अंगन ॥
सूर राह संग्रहन। दान छुट्टंत सो पुनि घन ॥
राजेस सूर संभरि धनी। अरि चसि परि मंत्रन सुगुर ॥
सामंत सूर सब्बै परे। रह्यौ एक रूने पहर ॥१३२॥

॥ मोतीदाम ॥

करी मति वेरन हथ्थिय गंस। मुन रावन ज्यौं चतुरानन पंसि ॥१३३॥
परी चिहुं कोदह घेर नरिंद। कटे कर दंत ज्यौं भिल्लिय कंद ॥
सुसंग्रहि संकट सूर निसंधि। लियौ न्रप गोरिय साहि सुरुंधि ॥१३४॥
गजंभर ढाल बैठाय नरेस। चल्यो गुरि गोरिय गज्जन देस ॥१३५॥

॥ दूहा ॥

ग्रहे राज गज्जन चल्यौ। तब रन रत्ता सूर ॥
अडु आवध वज्जि भ्रत। संवारिग भर सूर ॥१३६॥

॥ कवित्त ॥

न मिटै लिषित लिलाट। लिष्यौ ब्रह्मासिर अष्पर ॥
असुर गह्यौ प्रथिराज। सुनत संजोगि परिय धर ॥
चंद्र सूर ग्रह रिष्प। इंद्र सुर नर असुराइन ॥
सिध साधक मुनि राइ। मंत तंतिय तारायन ॥
को सकै अवर आरंभ करि। जो विधिना विधि गति भन्यौ ॥
निम्मान वात जुग जुग लगै। नह दिट्ठौ मिटन सुन्यौ ॥१३७॥

॥ दूहा ॥

बहु विलाप सत्र मिलि करहि। नहि सुधि बुद्धि गियान ॥
प्रीय वचन अप्रीय सुनि। गये संजोगिय रान ॥१३८॥
प्रान जात नह पल लग्यौ। सुन संदेस विराग ॥
सुनत बचन प्रियजन कुकल। धन्नि त्रिया तो भाग ॥१३९॥

॥ कवित्त ॥

गहि चहुआन नरिंद। साह गज्जनै सपत्तौ ॥
थान रष्षि ढिल्ली प्रमान। साहि पीरोज प्रमतौ ॥
उत उतंग वाजित्र। नद संहनाय सुभेरिय ॥
जीत्ति लियो चहुआन। दोउ दिष्पत दल फेरिय ॥
सुरतान गह्यौ चहुआन वर। कवि छुट्टौ जालंध ते ॥
संपन्न सूर पत्तह दिली। भौ कवि रत्त सुअं मतै ॥१४०॥

॥ कुंडलिया ॥

चर आए ढिल्लिय नयर। दसमि सुदिन अंगार ॥
बुद्धवार एकादसी। चली बरन खगदार ॥
चली बरन खगदार। सूर सामंत तीय वर ॥
सत्र परिगह प्रथिराज। भयौ मंगल मंगल भर ॥
पट सुरतिय चहुआन। अग्गि आलिग अंगवर ॥
दुष्प बंधि संजोगि। जोग संयोग कहै चर ॥१४१॥

॥ कवित्त ॥

निरपि निधन संजोगि। प्रिथी सजिय सु सामि सथ ॥
हक्कि हंस तत्तारि। वीर अवरिय प्रेम पथ ॥
साजि सकल श्रृंगार। हार मंडिय मुगतामनि ॥
रजि भूषन हय रोहि। जलज अच्छित उच्चारति ॥
हैहया सद जंपत जगत। हरि हर सुर उच्चार वर ॥
सह गमन सिध रावर चले। तजि महि फूल श्रीफल सुकर ॥१४२॥
सहस पंच सह गवनि। अवर सामंत सूर भर ॥
चलिय मिलिय मन संधि। सकल निज नाह साह वर ॥
भूषन सवनि विराजि। साजि सिंगार सैल तन ॥
मन अनंत उद्धरिय। करिय हरि हरि जु दान दिय ॥
जहाँ जुथान सुनि प्रिय गवन। न करि विरम मन धरिय धुत्र ॥
धनि धन्य सद आयास हुअ। लपि कौतिग अनभूत भुअ ॥१४३॥
चंदन मंदिर दार। रचिय वर दिव्य लघुदर ॥
विवह कुसुम वर रोहि। सोहि पट वसन सुरह बर ॥
जिय जंबू नद दान। रथ्थ हय गय मुगतामनि ॥
विप्प वेद उच्चरहि। धेन सुरवर आयासनि ॥
किय लोक लोक अंजुलि कुसुम। सजि विमान सुर सिर फिरहि ॥
संक्रमिय अप्प साहागवनि। मंझि गवन हव्विहि हरहि ॥१४४॥
गहि चहुआन नरिंद। गयौ गज्जनै साहि घर ॥
दिल्लिय हय गय द्रव्य। ताहि तन इह सुअप्पिधर ॥
वरस अद्ध तस अद्ध। मुद्ध कीनौ नयन्न विन ॥
जम्म जम्म जुग अवरु। जाय प्रथिराज इक्क पिन ॥
कह करै न्त्रपति समुझै मनह। अप उपाव सो वहु करय ॥
विधिना विचित्र निरम्यौ पटल। निमप न इक लिप्पित टरय ॥१४५॥
तत्र सुसाहि गज्जनय। ग्रहियं जंगल पति तानह ॥
हथ्थ समप्पि हुजाव। सुविधि रप्यौ वल मानह ॥
मंडिय कोट महल। अप्पि दिसि दप्पिन धामह ॥
तहां रप्पिय प्रथिराज। सुवल रप्पक रहमामह ॥
विग्रह सुरप्पि पारस्स दस। वेनिय दत्त दवे सुमुप ॥
नन करय राज आहार कछु। कहिय तेज हुज्जाव रुप ॥१४६॥

विरदावलि विरदाइ । पाय अंदू कर ढीले ॥
तामस वुझवन काज । बोलि मधु वचन रसीले ॥
गढ गिलोल गज वाग । लागि सक्कै न डरहि उर ॥
नीठ नीठ रप्पयौ । आनि उभ्भौ जल ऊपर ॥
नरवदा तट कज्जली सुवन । जूथ हस्तिनि संभरिय ॥
पीय न उदक कविचंद कहि । मद सिंधुर जिम वलभरिय ॥१४७॥
तव चिंतिय हुज्जाव । गयौ अप्पन गोरिय प्रति ॥
किय सलाम तिय वार । धरिय अंगुरि धनिय नति ॥
कीय अरज कर जोरि । सुनहु साहाव मन्नि धुअ ॥
विन अहार चहुआन । पष्प सारद्ध तीन हुअ ॥
कसमलिय चित्त संभलि सुचिर । अप असुपति चहुआन गय ॥
आरुह्यौ विकट रस त्रिपति वर । दिट्ठौ दिट्ठ करुर मय ॥१४८॥
चमकि चित्त साहाव । सुनय चहुआन सु अथ्थह ॥
बोलि हुजाव सुआव । सेप कालंत समथ्थह ॥
तुम कढ्ढहु चहुआन । नयन दिठ वंकन छंडय ॥
जौ वंधन वंधियौ । तौइ संमुप द्रिग मंडय ॥
सिर धारि बोल कानै फिरिय । सहस मीर मिलि अप्प ग्रग ॥
भ्रम पारि तेन चहुआन गहि । वंधिय राजन कढ्ढि द्रिग ॥१४९॥

॥ भुजंगी ॥

पर्‌यौ वंधनं गज्जनै मेछ हथ्थं । विचारै करी अप्प करतूति पिथ्थं ॥
हन्यौ दासि के हेतु कैमास वानं । गजं पून चामंड वेरी भरानं ॥१५०॥
वंधे कन्ह काका चपं पट्ट गाढे । विना दोस पुंडीर से भ्रत्त काढे ॥
वरज्जंत चंदं चल्यौ हूं कनौजं । तहां सूर सामंत कटि घट्टि फौजं ॥१५१॥
लियें राज लोकं रमंतं सिकारं । भ्रमं केहरी कंदरा रिप्प जारं ॥
रह्यौ गैर महलं लियै राजलोकं । कटे सूर सामंत कीयौ न सोकं ॥१५२॥
भुलानौ सरुपं भयौ काम अंधं । निसा वासरं चित्त जानी न संधं ॥
दरव्वार मेटी अदव्वं वड़ाई । छरी ऊपरी सीस हम्मीर राई ॥१५३॥
करन्नं पुजारं प्रथा पौरि आई । वरदाइ प्रोहित्त सें विस्सराई ॥
पड़े आय साहाय काजं पुमानं । गयौ चूकि अवसान सनमुप्प जानं ॥१५४॥
भई वुद्धि विपरीति इह होनहारं । छलं पारि सुविहान चप्पं विकारं ॥
पलट्ट्यौ सुदीहं रही लग्गि तारी । भले राज गोविंद मव्वाप्रहारी ॥१५५॥

सहौ फूल की फूलनी नाहि नाथं । तुरत्तं तरायौ जु मालीन हाथं ॥
नहीं सूर सामंत परिवार देसं । नहीं गज्ज बाजं भंडारं दिलेसं ॥१५६॥
नहीं पंगजा प्रान तें अत्ति प्यारी । नही गोप महिला इतं चित्रसारी ॥
नहीं चिग्ग अग्गें सुनंषे परद्दा । नहीं झोक हम्मास गरसी सरद्दा ॥१५७॥
नहीं रेसमं के दुलीचे गिलम्मे । नहीं हिंगु बाटं सुवन्नं हिलम्मे ॥
नहीं सीरपं रूप रंके उसीसा । नहीं पस्समी तक्कियै पल्लिग पोसा ॥१५८॥
नहीं गद्दियं सुथ्थरी भूपि छोरा । नहीं मेन बतीन के दीप जोरा ॥
नहीं डंमरी योंन आवै सुगंधा । नहीं चौसरं फूल बंधे अबंधा ॥१५९॥
नहीं मृग्ग नयनी चरन्नं तलासै । नहीं कूक कोका सबद्दं उलासै ॥
नहीं पातुरं चातुरं नृत्यकारी । नहीं ताल संगीत आलापचारी ॥१६०॥
नहीं कथ्थकं सथ्थ जंपै कहानी । पयं सक्करं हूत लग्गै सुहानी ॥
नहीं पासवानं पवांसं हजूरी । सवे मंडली मेछ लग्गे करूरी ॥१६१॥
नहीं रूपकं राग रंगं उचारं । सुनों कन्न सावद्द वंगं पुकारं ॥
नहीं चोम मौजं करूं लष्ष दानं । नहीं भट्ट चंदं विरद्दं बषानं ॥१६२॥
चपं मंजरी के रहे चौगिरद्दं । दवं दंग ज्यों लग्गि देही दरद्दं ॥
कहा हाल रेनं कुमारं धरत्ती । कहों कोन सों कोन आनै निरत्ती ॥१६३॥
निराधार आधार करतार तूंही । वन्यौ संकटं आय मो जीव सोंही ॥
कली कद्द मंगाय वृंदावनी कों । संभालौ नहीं तौ कहा औधनी क्यों ॥१६४॥

बानबेध समय

॥ दूहा ॥

कवि आयौ दिल्ली पुरह । देप्यौ नयर विरूप ॥
विन आभ्रन नर नारि सब । विना तेज ग्रह भूप ॥१॥
इम कवि आयौ जात करि । गृह सुपिप्पि द्रिग काज ॥
पुछ्यौ सुत्त सुतीय तिहि । कहा करै प्रथिराज ॥२॥
तव सुत्रिया उत्तर दियौ । वोलि सुहावने वैन ॥
गोरी दल नृप संग्रह्यौ । कियौ साह विन नैन ॥३॥
सुनत श्रवन धरनिय परिग । हरि हरि हरि मुप जंपि ॥
उद्यौ मनह विश्राम करि । भयौ विछिन मन कंपि ॥४॥
आदि अंत लगि वृत्त मन । वृन्नि गुनी गुन राज ॥
पुस्तक जल्हन हथ्थ दै । चलि गज्जन न्रप काज ॥५॥

॥ पद्धरी ॥

सम चल्यौ भट्ट गज्जन सुराह । वन विपम सुपम उग्गाह गाह ॥
रह उंच नीच सम विपम थान । गह वरन सैल रन जल थलान ॥६॥
द्रिग जोति लग्ग मन सवद भीन । भुल्यौ सरीर जिन मग्ग पीन ॥
रत्तौ सुजोग मग्गह सरूव । जगमगत जोति आयास भूव ॥७॥
गुंजरत दरिय सम्मीर सद्द । निभ्भरत भरत नद रोर नद्द ॥
वन विकट रंध कीचक्क राह । सद्दहि सु ताम संमीर गाह ॥८॥

॥ दूहा ॥

इहि विधि पत्तौ गज्जनै । जहं गोरी सुरतान ॥
तपै मेछ इछ अप्पनी । मनों भान मध्यान ॥९॥

॥ कवित्त ॥

प्रथम मुक्कि दरबार । लज्ज संकर सुरतानी ॥
है गै नट नाटक्क । भ्रम्म दिप्पिय परमानी ॥
एक कहै इह भट्ट । इक कहै सिद्ध प्रमानं ॥
एक कहै ठग ठोठ । एक वेताल सुजानं ॥

इक्क कहै जोग पाषंड इह । भ्रम लग्यौ रोकं न कवि ॥
तब लगि चंद बरदाय वर । गयौ थान दरवार हवि ॥१०॥
देषि चंद मन मंद । साहि आनंद उपन्नौ ॥
निजरि अप्प सुविहान । बोलि आलम अप लिन्नौ ॥
हथ्थ अप्पि दस तक्क । बत्त पुच्छी दुप सुष वर ॥
विधि विधान त्रिम्मयौ । करन उद्देस कविय बर ॥
संग्राम स्वाम क्यौं मुक्कयौ । क्यों कविंद्र भारथ्थ तजि ॥
किहि थान लोइ संभरि धनी । कहौ सुवत्त लज्जौ न लजि ॥११॥

॥ पद्धरी ॥

धरि अद्ध रहौ तिन बार तब्ब । सुरतान बोलि वर कहिग सब्ब ॥
हम जाहिं चंद पेलनह दप्प । दोय गल्ह कल्हि करि चलहु तप्प ॥१२॥

॥ दूहा ॥

जु कछु त्रम्मयौ भट्ट वर । तुम जानौ वहु बुद्धि ॥
सो न टरै विधुना सुहथ । महत न दुष्ष अलुद्ध ॥१३॥

॥ पद्धरी ॥

बुल्यौ सुवीर सुविहान जान । हवसी सबोलि सुविहान षान ॥
फिरि साहि ताहि फुरमान दीन । हम वहुत चंद महमान कीन ॥१४॥
हुज्जाव चंद दोउ एक सथ्थ । आए सुग्रेह पत्रीय तथ्थ ॥
बोलयौ भीम हुज्जाव ताम । वे आम कब्बि रष्यौ सुमाम ॥१५॥
सुनि भीम अत्ति आनंद अप्प । लग्यौ सुपाइ पत्री सुतप्प ॥
हुज्जाव फिर्यौ कवि प्रेरि ताम । लै गयौ भीम क्रित संनि काम ॥१६॥

॥ दूहा ॥

हरफ हदकरि गिल्लयौ । वर आयौ सु विहान ॥
झपत चंद मन मंझ निसि । नीठ सु भयौ विहान ॥१७॥

॥ चौपाई ॥

तब सहाव बोल्यौ हुज्जावह । अहो भट्ट आनो सित्तावह ॥
तब हुजाव आयौ कवि पासह । बोलि चल्यौ कवि अंदर तासह ॥१८॥

॥ पद्धरी ॥

बुल्लाइ चंद हजूर साह । बूझै सुवत्त अप पातिसाह ॥
बैराग जिंद कहाँ जोग गित्त । जोगहि विरुद्ध हम मिलन मत्ति ॥१९॥

॥ दूहा ॥

हम अबुद्धि सुरतान इह । भट्ट भाष सुष काज ॥
नव रस मैं रस अप्परस । इहै जोग सुष काज ॥२०॥
जो कछु मंगहु भट्ट वर । करै वनै सुविहान ॥
भुम्मि लच्छि यौं चंद तुहि । नह अप्पौं चहुआन ॥२१॥
नह मंगै कविचंद नृप । कहौ न रसना छंडि ॥
कथ्थ पुव्व आलम कहौ । छिनक श्रवन जो मंडि ॥२२॥
बालपनै प्रथिराज सम । अति मित्रं तन कीन ॥
जु कछु स्वाद मन मैं भयौ । इच्छा रस मँगि लीन ॥२३॥
पुव्व पराक्रम राज किय । कछु जंपो तुछ ग्यान ॥
अरु जु कछू तुछ जंपिहौ । सब जानौ सुविहान ॥२४॥
इक्क सुदिन प्रथिराज रस । मुष कढ्ढी तिहि वार ॥
सिंगिनि सरवर इच्छिविन । सत्त हनन घरियार ॥२५॥
वर सुनंत कंपै हियौ । दिल न रहै सुरतान ॥
सुद्धरोग भौ रोग मन । कढ्ढन कौं सुविहान ॥२६॥
तौ आयो तुहि आस करि । तो पासें चहुआन ॥
सो दरोग दिल लग्गि मुझ । कढ्ढन को सुविहान ॥२७॥
मैं जान्यो अचरिज्ज मन । नृपति संच की लीह ॥
तब लगि इहि विधिना लषी । आय संपत्ते दीह ॥२८॥
सुनि सहाब गह गह हंस्यौ । वे वे भट्ट सुभट्ट ॥
अंषिहीन मति हीन भौ । कहा मग्गै मति नट्ठ ॥२९॥
सब विधि घटी नरिंद की । हम जाचक नह पीर ॥
वचन परै सिर कट्टि दै । ते पित्री कुल धीर ॥३०॥
तब चिंतिय साहाब मन । हंसि वुल्यौ सम चंद ॥
जाय मंगि सम राज सौं । हम दिप्पहि आनंद ॥३१॥
तब गोरी हुज्जाब प्रति । कहै सुकवि लै जांहु ॥
अरस परस बिन दूरि तै । लै आसीस कहाउ ॥३२॥
अग्या मन्नि हुजाब पहु । लै चल्लिय कवि सथ्थ ॥
प्रथम राज पासह गयौ । तब रुक्क्यौ दह हथ्थ ॥३३॥

॥ पद्धरी ॥

तब गयौ चंद नृप तथ्थ थाह । जहां मित्र बयट्ठो दिट्ठ चाह ॥
दस हथ्थ रष्षि दिन्नी असीस । सिर नयौ नहीं मन करिय रीस ॥३४॥

॥ दूहा ॥

चष्षहीन दुब्बल त्रपति । दस बंभन रहै पास ॥
रोस अगनि तन प्रज्जरै । चिन्ता अतिहि उदास ॥३५॥

॥ कवित्त ॥

निमिल जीय वर सिथ । दई तन दुष्ट भाव करि ॥
रोस अगनि प्रजरंत । जाय आक्रित अग्गि झर ॥
भौक्रित तत्त निकाम । वीर तन छीन सु पंजर ॥
अरि तित्तै चिंत्यौ सुक्रम । संभर्‍यौ चंद सुर ॥
घत सिंचि वीर पावक्क झर । रीस रवत तन प्रज्जर्‍यौ ॥
कहि भट्ट वीर विरदावली । देत रज राज संभर्‍यौ ॥३६॥

॥ पद्धरी ॥

पहिचानि चंद सिर धुन्यौ राय । संगह सरम्म वुल्यौ जुवाय ॥३७॥

॥ दूहा ॥

सुनि कवित्त चलि चित्त किय । अदभुत भट्ट सरीर ॥
सोहि उलंघ्यौं जानि कै । चितत प्रद्युमन धीर ॥३८॥
नेह नीर रुकि कंठ कवि । नैंन झलभझल पानि ॥
विन बोलत बोल्यौ नृपति । चंद चिंति वर बानि ॥३९॥
दै दान जानि संभरि धनी । उहि गड्डहि तुहि जलहि हवि ॥
दिन अदिन हंस दोउ उड्डहि चलि । इह उप्पर कह करहि कवि ॥४०॥
वे अंपिन हीनौ मु हौं । तूं चष अंपि न चूक ॥
असुर वधौं किम विन सुरह । उर सुर बध्यौ उलूक ॥४१॥
आनंदे प्रथिराज जिय । बंध कियौ कवि सथ्थ ॥
हलौं साहि परिवार सौं । उभै इप्प मिल्लि हथ्थ ॥४२॥
कवि बुभक्कवि प्रथिराज कौं । गह्यौ धाय हुज्जाब ॥
सबै रीति किहि राज कूं । जुगनि सुवथ्थ जवाब ॥४३॥

॥ कवित्त ॥

तब सु चंद वरदाय । साहि अग्गें कर जोरे ॥
क्रपन गंठि जिमि साहि । राज गंठि न अब छोरे ॥
नट नकार नहि करहि । जांउ जिहि आस छंडि तव ॥
अदभुत रस असमान । जाइ मुक्क्यौ न घनं अव ॥
छंड्यौ सुलोभ जिय जंम कह । और अतिव अंतर रहै ॥
फुरमान साहि सत्तहि वंधौ । विन फुरमान न सर गहै ॥४४॥

॥ दूहा ॥

जो फुरमानत अप्प मुप । दै तिह वेर हमीर ॥
घर घरियारन वज्जिहै । सर सौ सद्द गँभीर ॥४५॥

॥ कवित्त ॥

मंगि साहि घरियार । दिसित मंडे उत्तर दिसि ॥
सौ क्रम नृपति घरीव । क्रम्म सत अद्ध साहि लिस ॥
सिंधु, राग सहनाइ । पंच सदावर वद्दं ॥
मेघ ग्रज्ज आकूत । वीर नीसानति नद्दं ॥
प्रजापत्ति पां पुरसान पां । चाव दिसा त्रिप त्रिटियौ ॥
चहुआन कलातक जग तपै । किहि लष्यौ वर मिटयौ ॥४६॥

॥ पद्धरी ॥

प्रथिराज आनि मधि रंगभोम । साहाव उंच गहकंत व्योम ॥
घरियार घात वंधे समुप्प । पठई कमान साहाव पुप्प ॥४७॥

॥ कवित्त ॥

प्रथम राज कम्मान । आनि दिन्ही हुज्जावं ॥
गहिय राज चहुआन । तानि भंजी तर आवं ॥
अवर आनि कम्मान । सोन वलराज समानं ॥
इम भंजिय दइ पंच । अतिहि काठिन्य कमानं ॥
उच्चर्यौ पान मीरान इम । हयौ तात हम जेन रन ॥
अच्छै कमान हम ग्रह गरुअ । सोइ समप्पौ साहि इन ॥४८॥

॥ दूहा ॥

चवै चंद वरदाइ इम । सुनि मीरन सुरतान ॥
दै कमान चौहान कौं । साहि दियै कछु दान ॥४९॥

॥ पद्धरी ॥

तब गयौ चंद नृप तथ्थ थाह । जहां मित्र बयट्ठो दिट्ठ चाह ॥
दस हथ्थ रषिय दिन्नी आसीस । सिर नयौ नहीं मन करिय रीस ॥३४॥

॥ दूहा ॥

चष्षहीन दुब्बल नृपति । दस बंभन रहै पास ॥
रोस अगनि तन प्रज्जरै । चिन्ता अतिहि उदास ॥३५॥

॥ कवित्त ॥

निमिल जीय वर सिव । दई तन दुष्ट भाव करि ॥
रोस अगनि प्रजरंत । जाय आक्रित अग्गि झर ॥
भौक्रित तत्त निकाम । वीर तन छीन सु पंजर ॥
अरि तित्तै चिंत्यौ सुकम्म । संभर्यौ चंद सुर ॥
घत सिंचि वीर पावक झर । रीस रवत तन प्रज्जर्यौ ॥
कहि भट्ट वीर विरदावली । देत रज राज संभर्यौ ॥३६॥

॥ पद्धरी ॥

पहिचानि चंद सिर धुन्यौ राय । संगह सरम्म बुल्यौ जुवाय ॥३७॥

॥ दूहा ॥

सुनि कवित्त चलि चित्त किय । अदभुत भट्ट सरीर ॥
मोहि उलंघ्यौ जानि कै । चितत प्रबुधुन धीर ॥३८॥
नेह नीर रुकि कंठ कवि । नैंन झलभझल पानि ॥
बिन बोलत बोल्यौ नृपति । चंद चिंति वर बानि ॥३९॥
द्वै दान जानि संभरि धनी । इहि गड्डहि तुहि जलहि द्वि ॥
दिन अद्वित हंस दोउ उड्डहि चलि । इह उप्पर कह करहि कवि ॥४०॥
वे अंपिन दीनौ सु हौं । तूं चष अंगि न चूक ॥
असुर बनों किम बिन सुरह । उर सुर वध्यौ उलूक ॥४१॥
आनंदे प्रथिराज जिय । बंध कियौ कवि सथ्थ ॥
हनौं साहि परियार सौं । उभै इक्क मिलि हथ्थ ॥४२॥
कवि वुनकवि प्रथिराज कौं । गह्यौ धाय हुज्जाव ॥
नवै रीति किहि राज कूं । जुगनि सुवथ्थ जवाव ॥४३॥

|| पद्धरी ||

संगहे पान कम्मान राज । उब्भरे अंग अंतर विराज ॥
आलिंग बुंबि उर चंपि अप्प । बढ्ढेव तेज तामंस दप्प ॥५०॥
कर धरे स धनु आनंद चित्त । बिछुरयै मिल्यौ चिरकाल मित्त ॥
कम्मान राज मिलि तेज ताय । अरि मंभि बिंटि मिलि मनु सहाय ॥५१॥
उच्चर्‌यौ राज सम चंद ताम । मंगहु सु बान मम करि बिराम ॥
बरदाय साहि अरदास कीन । नृप देहु बान कौतिग्ग चिन्ह ।५२॥
तव साहि ताम वच्च्यौ अभीर । निसुरत्ति देहु तरकस्स तीर ॥
निसुरत्ति आनि दिय साहि हथ्थ । तरकस्स तीर गोरी गुरथ्थ ॥५३॥

|| कवित्त ||

ग्रहिय तीर गोरीस । कीन विन इच्छ अप्प कर ॥
काल अंत पल प्रेम । बुद्धि भग्गिय समोह भर ॥
दिपि नंप्यौ दिल्लीस । धरिय सज्जै सु सीस कवि ॥
कर दीनौ चहुआन । प्रान वढ्ढ्यौ सुईस तव ॥
तामंस रज्ज तन ताम तन । वन वीरत्त उभार भर ॥
सुरतान प्रान कारन प्रलय । जनु जम सज्ज्यौं दंड कर ॥५४॥
भयौ एक फुरमान । बान जोगिनिपुर संध्यौ ॥
सोइ सबद अरु बान । अग्र अविचल करि बंध्यौ ॥
भयौ बियौ फुरमान । तानि रप्प्यौ श्रवनंतरि ॥
तियौं भयौ अनभयौ । पर्‌यौ पतिसाहि धरंतरि ॥
लै दसन रसन तालुअ सवन । सीस फट्टि दह दिसि गवन ॥
सुरतान पर्‌यौ पां पुक्करै । भयौ चंद राजन मरन ॥५५॥
मरन चंद बरदाइ । राज पुनि सुनिग साहि हनि ॥
पुहपंजलि असमान । सीस छोड़ी सुदेव तनि ॥
मेछ अवद्धित धरनि । धरनि सब तीय सोह सिग ॥
तिनहि तिनह संजोति । जोति जोतिहि संपातिग ॥
रासो असंभ नव रस सरस । चंद छंद किय अमिय सम ॥
श्रृंगार वीर करुना बिभछ । भय अद्‌भुत्त हसंत सम ॥५६॥

परिशिष्ट (क)

पृथ्वीराज रासो का परिचय

रासो काव्य की परंपरा

पृथ्वीराज रासो[1] के पीछे रासो-काव्यों की विशाल परंपरा है। इधर की खोजों में अपभ्रंश, गुजराती, डिंगल तथा पिंगल भाषाओं के अनेक रास और रासो काव्यों का पता चला है। इनमें से कुछ तो पुस्तकाकार प्रकाशित हो चुके हैं और शेष का विस्तृत परिचय शोध-पत्रिकाओं ने कराया है। इस नवीन सामग्री के अध्ययन से 'रासो' शब्द के अर्थ संबंधी उन सभी अनुमानों का समाधान मिल जाता है जिन्हें यथेष्ट सामग्री के अभाव में पूर्ववर्ती पंडितों ने समय-समय पर प्रस्तुत किया था।[2] जैसा कि डा० दशरथ शर्मा ने ठोस प्रमाणों और युक्तियों के द्वारा दिखलाया है, 'रासो' मूलतः गान-युक्त नृत्य-विशेष से क्रमशः विकसित होते होते उपरूपक और फिर उपरूपक से वीर रस के पद्यात्मक प्रबंधों में परिणत हो गया।[3]

गीत-नृत्य के लिये रास का प्रयोग श्रीमद्भागवत में तो हुआ ही है, आज भी उत्तर भारत में राधा-कृष्ण की गानमय लीलाओं का अभिनय करनेवाली रास-मंडलियाँ प्रचलित हैं। भागवत ने महारास में नृत्य के साथ गीत के संयोग का स्पष्ट उल्लेख किया है—

पादन्यासैर्भुजविधुतिभिः सस्मितैर्भ्रूविलासै—
भज्यन्मध्यैश्चलकुचपटैः कुण्डलैर्गण्डलोलैः।

---

[1] प्राचीन प्रतियों में प्रायः 'प्रिथीराज रासउ' नाम मिलता है।

[2] फ्रांसीसी विद्वान गार्सां द तासी ने 'राजसूय', पं० रामचन्द्र शुक्ल ने 'रसायण' (हि० सा० इ०) और म० म० हरप्रसाद शास्त्री के के अनुसार (प्रिलिमिनरी रिपोर्ट ऑन द आपरेशन इन सर्च ऑव बार्डिक क्रानिकिल्स पृ० २५-२६) पं० विंध्येश्वरी प्रसाद पाठक ने 'राज यज्ञ' तथा डा० काशीप्रसाद जायसवाल ने 'रहस्य' शब्द से 'रासो' को व्युत्पन्न बताया है। कविराज श्यामलदान' जी भी 'रहस्य' के ही पक्ष में थे; इसकी साक्षी है उनकी पुस्तिका 'पृथ्वीराज रहस्य की नवीनता'।

[3] रासो के अर्थ का क्रमिक विकास: साहित्य सन्देश, जुलाई १९५१ ई०

स्विद्यन्मुख्यः कवररशनाग्रन्थयः कृष्णवध्वो
गायन्त्यस्तं तडित इव ता मेघचक्रे विरेजुः ॥ १०।३३।८

और उसमें ध्रुपद आदि अनेक रागों का प्रयोग होता था इसकी पुष्टि आगे आनेवाले छंदों में 'तदेव ध्रुवमुज्झिन्ये' आदि से हो जाती है। १२ वीं सदी विक्रमीय के जैन ग्रंथ[1] 'लगुडरास' और 'तालारास' के प्रचलन की सूचना देते हैं—

लउडारसु जहिं पुरिसु वि दितिउ वारियइ । छं० १९, चर्चरी

तालारासु वि दिति न रयणिहिं

दिवसि वि *लउडारसु* सहुँ पुरिसिहिं ॥ छं० ३६, उपदेशरसायन रास

इनसे पता चलता है कि ये गीतनृत्य शृंगार-रसपरक थे। इनमें अभिनेय गुण देखकर ही संभवतः तत्कालीन आचार्यों ने इन्हें 'पाठ्य नाटक' से भिन्न 'गेयनाट्य' की श्रेणी में सम्मिलित कर लिया था। हेमचन्द्र ने अपने काव्यानुशासन (८।४) में तथा वाग्भट ने भी अपने इसी नाम के ग्रंथ के पहले ही अध्याय में डोम्बिका, भाण, प्रस्थान, शिगक, भाणिका, प्रेरण, रामाक्रीड, हल्लीसक, श्रीगदित, गोष्ठी, रागकाव्य आदि के साथ 'रासक' नामक गेयनाट्य का उल्लेख किया है। बहुत संभव है कि इन गेयनाट्यों का गीत भाग क्रमशः स्वतंत्र श्रव्य अथवा पाठ्य काव्य हो गया हो और फिर इनके चरितनायकों के अनुरूप इनमें युद्ध वर्णन का भी समावेश हुआ हो।[2]

पं० नरोत्तमदास स्वामी के अनुसार 'रास' और 'रासो' का यह अंतर अंत तक बना रहा। वे 'रास' काव्यों को मूलतः प्रेम-काव्य मानते हैं तथा 'रासो' काव्यों को वीर-काव्य। 'रास' के उदाहरण के लिए 'संनेस रास' तथा 'बीसलदेव रास' का नाम लिया जा सकता है तो 'रासो' के लिए 'पृथ्वीराज रासो' या 'करहिया को रायसो'। परंतु

[1] अपभ्रंश-काव्यत्रयी : गा० ओ० सी० संख्या ३७, संपादक श्री लालचन्द्र गांधी, १९२७ ई०

[2] रासो तथा 'रासक' की विस्तृत चर्चा के लिए देखिए 'हिन्दी साहित्य का आदिकाल' पृ० ५९—६१।

इसके अपवाद स्वरूप 'भरतेश्वर बाहुबलि रास' का नाम लिया जा सकता है जो 'रास' होते हुए भी वीरकाव्य है अथवा 'उपदेश रसायन रास' जो मुख्यतः नीति काव्य है। वस्तुतः यह विभाजन केवल सुविधा के लिए स्वीकृत प्रतीत होता है। 'रास' शब्द से मूलतः संबद्ध होते हुए भी पीछे रास और रासो नाम से विविध विषय, भाव तथा रस वाले काव्य लिखे गए जिन्हें जैन कवियों ने और रूप दिया तो चारण तथा भाटों ने और। इन 'रास' तथा 'रासो' ग्रंथों के अध्ययन का महत्त्व केवल 'रासो' शब्द की व्युत्पत्ति अथवा इतिहास जानने में ही सहायक नहीं है बल्कि 'पृथ्वीराज रासो' की अनेक कथानक रूढ़ियों, काव्य रूढ़ियों, रूप-विन्यास आदि संबंधी विशेषताओं के विश्लेपण में भी उपादेय हो सकता है।

राजस्थान में रासो या रास काव्यों की परंपरा डिंगल और पिंगल दोनों में मध्ययुग के आरंभ से लेकर आधुनिक युग तक प्रचलित रही और इस दौरान में ही 'पृथ्वीराज रासो' में प्रक्षेप होता रहा है। अपभ्रंश के 'संनेस रास' और 'उपदेश रसायन रास' को छोड़कर परवर्ती काल के प्रायः सभी डिंगल-पिंगल रास और रासो ग्रंथ चरित काव्य हैं, और ऐतिहासिकता के साथ अनैतिहासिकता का सम्मिश्रण थोड़ा-बहुत सब में है। ईसा की १२वीं से १५वीं शताब्दी के बीच लिखे हुए रास ग्रंथों में भरतेश्वर बाहुबलि रास, जम्बुस्वामि रास, रेवतंगिरि रास, कछूली रास, गौतम रास, दशार्णभद्र रास, वस्तुपाल-तेजपाल रास, श्रेणिक रास, पेथड़ रास, समरसिंघ रास के नाम विशेष उल्लेखनीय हैं। इनमें भाषा तथा काव्य की दृष्टि से भरतेश्वर बाहुबलि रास बहुत महत्त्वपूर्ण है। पं० मोतीलाल मेनारिया, श्री अगरचंद नाहटा, श्री नरोत्तमदास स्वामी तथा डा० दशरथ शर्मा के विवरणों से राजस्थानी के जिन रासो काव्यों का पता चला है उनमें से अधिकांश १७वीं शताब्दी तथा उसके बाद के हैं। जैसे माधौदास चारण कृत 'राम रासौ' जिसमें राम कथा का वर्णन है सं० १६१० से १६६० के बीच रचा हुआ बताया जाता है; डूंगरसी कृत 'छत्रसाल रासौ' मेनारिया जी के अनुसार सं० १७१० के आस पास का काव्य है; गिरिधर चारण कृत 'संगत सिंघ रासौ, भी इसी के आस पास का कहा जाता है। जैन साधु दौलत विजय (गृहस्थाश्रम का नाम दलपति) कृत 'खुम्माण रासो'

की भी जो दो प्रतियाँ प्राप्त हैं उनमें से एक का लिपिकाल सं० १७३३ है और दूसरी का सं० १७५६।

पिंगल यानी पुरानी ब्रजभाषा के प्राप्त रासो काव्यों में विजैपाल रासो [रचनाकालः मिश्रबंधु के अनुसार सं० १३५५, नाहटा जी के अनुसार १८वीं या १६वीं शताब्दी और मेनारिया जी के अनुसार सं० १६००] जान कवि कृत कायम रासौ (सं० १६६१), कुम्भकरण कृत रतन रासो (सं०१७३२), दयाल कृत राणा रासौ (सं० १६७५), जोधराज कृत हम्मीर रासो (सं० १७८५), गुलाब कवि कृत करहिया कौ रायसौ (सं० १६वीं सदी) के नाम उल्लेखनीय हैं। इन चरित काव्यों से भिन्न पिंगल में ही जल्ह कवि कृत बुद्धि रासौ है (मेनारिया जी के अनुसार रचनाकाल सं० १६२५)[1] जो मुख्यतः प्रेमाख्यानक काव्य है। प्राकृतपैंगलम् के हम्मीर संबंधी छंद को यदि किसी 'हम्मीर रासो' के ही हैं तो उसे भी इसी परंपरा के अंतर्गत समझना चाहिए। 'रासो, नाम से मिलने वाले ये काव्य प्रायः बहुत छोटे-छोटे हैं, केवल कुछ एक की छंद संख्या एक हज़ार के आस पास है अन्यथा अधिकांश सौ के आस पास या उससे भी कम छंदों में समाप्त हो जाते हैं। काव्य-सौष्ठव की दृष्टि से इनमें से कोई ग्रंथ पृथ्वीराज रासो से तुलनीय नहीं हो सकता। इनका महत्त्व केवल पृथ्वीराज रासो के परिदृश्य को स्पष्ट करने में है।

पृथ्वीराज रासो की प्रतियाँ तथा रूपान्तर[2]

अब तक पृथ्वीराज रासो की जितनी हस्तलिखित प्रतियाँ प्राप्त हुई हैं, प्रायः वे चार प्रकार की हैं। इसीलिए विद्वानों ने आकार के अनुसार उनका वर्गीकरण बृहद्, मध्यम, लघु और लघुतम चार प्रकार

[1] राजस्थान में हिंदी के हस्तलिखित ग्रंथों की खोज (प्रथम भाग) पृ० ७६-७७

[2] विशेष विवरण के लिए देखिए श्री अगरचंद नाहटा लिखित 'पृथ्वीराज रासो और उसकी हस्तलिखित प्रतियाँ' निबंध : 'राजस्थानी' सं० ३ तथा नरोत्तमदास स्वामी लिखित 'पृथ्वीराज रासो' शीर्षक निबंध-राजस्थान भारती भाग १, अंक १ सन् १६४६ ई०।

के रूपान्तरों में किया है। हस्तलिखित प्रतियों के विवरणों से पता चला है कि लघुतम रूपान्तर की दो, लघु रूपान्तर की पाँच, मध्यम रूपान्तर की ग्यारह तथा वृहद् रूपान्तर की तैंतीस प्रतियाँ उपलब्ध हैं। श्री नानूराम भट्ट और मुनि कान्तिसागर की प्रतियाँ किसी ने देखी नहीं है इसलिए कहना कठिन है कि वे किस रूपान्तर की हैं। वैसे तो ये प्रतियाँ उत्तर भारत के अनेक संग्रहालयों में बिखरी पड़ी हैं परंतु मोटे तौर से यह कहा जा सकता है कि वृहद् रूपान्तर की प्रतियाँ प्रधानतः उदयपुर में मिली हैं, मध्यम रूपान्तर की मुख्यतः जैन भांडारों में, लघु रूपान्तर की बीकानेर तथा शेखावटी (जयपुर) में और लघुतम की एक प्रति गुजरात के धारणोज गाँव से प्राप्त हुई है किन्तु दूसरी का विस्तृत विवरण अभी प्राप्त नहीं है[1]। इससे इन विभिन्न रूपान्तरों की परंपरा पर प्रकाश पड़ता है। किस रूपान्तर में कितना प्रक्षेप हुआ, उस प्रक्षेप के कारण क्या हैं और इस तरह प्रामाणिक अंश और रूपान्तर का पता लगाने में लिपि-पद्धति की ये स्थानगत परंपरायें बड़ी सहायक हो सकती हैं।

इन हस्तलिखित प्रतियों को चार रूपान्तरों में विभाजित करने का ठोस आधार है। इन्हें रूपान्तर इसलिए कहा जाता है कि सभी प्रतियों के तुलनात्मक अध्ययन से कुछ ऐसे सामान्य प्रसंग मिलते हैं जो सब में लिपिबद्ध हैं और इस तरह एक क्रम दिखाई पड़ता है। लघुतम रूपान्तर के प्रायः सभी छंद तथा कथा-प्रसंग थोड़े से हेर फेर के साथ लघु रूपान्तर में मिल जाते हैं और इसी तरह लघु के मध्यम में तथा मध्यम के वृहद् में। मोटे हिसाब से विस्तार में वृहद् रूपान्तर मध्यम का तिगुना है तथा मध्यम रूपान्तर लघु का तिगुना और लघु लघुतम का तिगुना प्रतीत होता है। बीकानेर के विद्वानों का अनुमान है कि मूल रासो लघुतम रूपान्तर है और उसी में क्रमशः प्रक्षेप होता गया है किन्तु उदयपुर के राव मोहन सिंह आदि वृहद् रूपान्तर को ही मूल रासो मानते हैं और शेष रूपान्तरों को उसका संक्षेप समझते हैं।

---

[1] यह प्रति मुनि जिन विजय जी के पास है तथा आरंभ में खंडित है। लेखक ने इसे नाहटा जी के संग्रहालय में देखा है।

काशी नागरी प्रचारिणी सभा से पृथ्वीराज रासो का जो मुद्रित संस्करण निकला है वह बृहद् रूपान्तर की ही प्रतियों पर आधारित है और बंगाल की रायल एशियाटिक सोसाइटी से उसका जितना अंश प्रकाशित हुआ है वह भी बृहद् रूपान्तर के ही अनुकूल है। ना० प्र० सभा ने अपनी आधार-भूत प्रतियों का लिपिकाल सं० १६४० या १६४२ बताया है परंतु आगे चलकर पता चला कि उसे भ्रम से १६४० या ४२ पढ़ लिया गया था। नाहटा जी के अनुसार उसे सं० १७४० होना चाहिए लेकिन मेनारिया जी उस प्रति को सं० १८७८ की बतलाते हैं। सभा द्वारा मुद्रित प्रति में कुल ६८ प्रस्ताव हैं, परिशिष्ट रूप में छपा हुआ ६९ वाँ समय 'महोबा समय' बृहद् रूपान्तर की किसी प्राचीन प्रति में नहीं मिलता। बहुत संभव है, यह कोई स्वतंत्र ग्रंथ रहा हो। उदयपुर में इस बृहद् रूपान्तर की प्रामाणिक प्रति महाराणा अमर सिंह (द्वितीय) वाली वर्तमान है जिसका लिपिकाल माघ कृष्ण ६ सोमवार सं० १७६० वि० है।

रासो के लघुतम रूपान्तर की जो पूर्ण प्रति प्राप्त हुई है उसका लिपिकाल आषाढ़ शुक्ल पंचमी सं० १६६७ वि० है। इसकी पुष्पिका में दिन का उल्लेख नहीं है। यह प्रति यदि प्रामाणिक है तो निश्चय ही पृथ्वीराज रासो की प्राप्त प्रतियों में सबसे प्राचीन है। बीकानेर से श्री नरोत्तमदास स्वामी इसका संपादन करके शीघ्र ही प्रकाशित करवाने जा रहे हैं।

पृथ्वीराज रासो की प्रामाणिकता

जब से[1] बंगाल की रायल एशियाटिक सोसायटी ने पृथ्वीराज रासो का प्रकाशन [सन १८८३ ई०] आरंभ किया, उसके थोड़े दिन बाद से ही उसकी प्रामाणिकता को लेकर विवाद आरंभ हो गया। डा० बूलर ने इस विवाद को आरंभ किया और उनकी मुख्य आपत्ति यही थी कि यह ग्रंथ अनैतिहासिक है। डा० बूलर इतिहास के विद्वान थे और उनके लिए किसी काव्य-ग्रंथ की ऐतिहासिक उपयोगिता ही सबसे बड़ी थी। पृथ्वीराज रासो उनकी यह आवश्यकता पूरी करता न दिखा, इसलिए उन्होंने इस अनावश्यक ग्रंथ का प्रकाशन बंद करवा दिया। काशी नागरी प्रचारिणी सभा ने इसका पूर्ण रूप प्रकाशित कर विचार करने के लिए सामग्री प्रस्तुत कर दी। इधर तो इसके संपादकों ने इसकी

ऐतिहासिकता का पल्ला पकड़ा और कुछ उस युग में ऐतिहासिक दृष्टि से ही साहित्य की सामग्री के अध्ययन का ज़ोर था, पृथ्वीराज रासो की ऐतिहासिक चीर फाड़ चल पड़ी। अनेक दशकों तक यही चर्चा रही। उसे अप्रमाणिक ही नहीं जाली तक कहा गया। इधर दस बारह वर्षों से जब पृथ्वीराज रासो के अन्य रूपान्तर हुए हैं तो रासो के प्रामाणिकता-संबंधी वाद-विवाद ने नया मोड़ लिया है। जब तक उसका एक रूप प्राप्त था, केवल उसी की घटनाओं की ऐतिहासिक सचाई परखी जाती थी, लेकिन इन नए रूपों अथवा रूपान्तरों ने यह सवाल उठा दिया है कि पृथ्वीराज रासो का कौन सा रूप प्रामाणिक है।

अस्तु पृथ्वीराज रासो की प्रामाणिकता की समस्या में प्रवेश करने से पूर्व यह स्पष्ट कर लेना चाहिए कि प्रामाणिकता के नाम पर हम चाहते क्या हैं?

मोटे रूप में प्रामाणिकता के अंतर्गत निम्नलिखित प्रश्न उठते हैं—

१. पृथ्वीराज रासो का मूल रूप क्या है?
२. मूल पृथ्वीराज रासो का रचनाकाल क्या है?
३. क्या इसके मूल अंश का रचयिता चंदवरदायी है?
४. क्या वह चंद वरदायी इतिहासप्रसिद्ध पृथ्वीराज चौहान का समकालीन है?

पृथ्वीराज रासो का मूल रूप

चारो रूपान्तरों की प्राप्त प्रतियों के तुलनात्मक अध्ययन से जो प्रसंग सामान्य रूप से मिलते हैं वे इस प्रकार हैं:

१. आदि पर्व	६. कैमास वध
२. दिल्ली किल्ली कथा	७. षट्रितु वर्णन
३. अनंगपाल दिल्ली दान	८. कनवज कथा
४. पंग यज्ञ विध्वंस	९. बड़ी लड़ाई
५. संयोगिता नेम आचरण	१०. बान वेध

इन सामान्य कथा-प्रसंगों के वर्णन विस्तार को लेकर सभी रूपान्तरों में काफी अंतर है। बड़े रूपान्तरों में यही प्रसंग विस्तृत ढंग से अनेक छंदों में वर्णित हैं जब कि छोटे रूपान्तरों में अपेक्षाकृत वे अल्पविस्तर हैं। इस दृष्टि से लघुतम रूपान्तर में स्वभावतः ही ये

प्रसंग सर्वाधिक संक्षिप्त हैं। कथा प्रसंगों की दृष्टि से लघु और लघुतम रूपान्तर में बड़ी समानता है। इन दोनों रूपान्तरों में प्रायः वर्णन-विस्तार संबंधी अंतर है। भाषा में भी विशेष असमानता नहीं है।

दूसरी ओर मध्यम और बृहद् रूपान्तरों ने जो विराट रूप ग्रहण कर लिया है वह अनेक नये इतिवृत्तों, कथाओं तथा प्रसगों की सृष्टि द्वारा। बृहद् रूपान्तर के लगभग ५४ तथा मध्यम रूपान्तर के १६ खंडों की कथायें छोटे रूपान्तरों से अधिक हैं और ध्यान देने की बात यह है कि इनकी पुष्टि इतिहास से नहीं होती! इन प्रसंगों की वृद्धि भी मनोरंजक ढंग से हुई है। कहीं होली और दिवाली की कथा छेड़ दी गई हैं, तो कहीं विवाहों की संख्या बढ़ा दी गई है। जहाँ छोटे रूपान्तरों में पृथ्वीराज दो विवाह करता है, बृहद् तक जाते जाते पूरे तेरह ब्याह कर डालता है। इसी तरह युद्धों की संख्या भी बढ़ाई गई है। छोटे रूपान्तरों तक राजा केवल ५ युद्ध करता है तो मध्यम रूपान्तर तक ४३ और बृहद् तक ५५ युद्धों का गौरव प्राप्त करता है। शहाबुद्दीन गोरी को पकड़ने तथा हराने को लेकर भी प्रसंगों की उद्भावना हुई है। बारी बारी से हर सामंत को शहाबुद्दीन गोरी के पकड़ने का अवसर दिया जाता है। ऐसे कल्पनाशील तथा प्रसंग-रचना-पटु जाति की मौखिक परंपरा में प्रवाहित काव्य के मूल रूप का पता लगाना कितना कठिन कार्य है, इसे सहज ही समझा जा सकता है।

ऊपर सभी रूपान्तरों में समान रूप से पाए जाने वाले जिन प्रसंगों की सूची दी गई है वह भी कहाँ तक मूल पृथ्वीराज रासो है, नहीं कहा जा सकता। यदि इतिहास-समर्थित घटनाओं के ही आधार पर 'मूल पृथ्वीराज रासो' का निर्णय करें तो एक कैमासवध को छोड़कर और कोई घटना मूल पृथ्वीराज रासो की नहीं हो सकती। यह 'कैमासवध' भी केवल 'पृथ्वीराज-विजय' में पृथ्वीराज के मंत्री कदंबवास के उल्लेख तथा 'पुरातन प्रबंध संग्रह' में प्राप्त कैमासवध-संबंधी छप्पयों से ही समर्थित है।

इसलिये लघुतम रूपान्तर को 'मूल पृथ्वीराज रासो' तो नहीं, लेकिन इसको अन्य सभी प्रतियों में प्राचीनतम रूप अवश्य कहा जा सकता है। इसकी पुष्टि पुष्पिका में दिए हुए लिपिकाल से तो होती ही है, भाषाशास्त्रीय दृष्टि से भी होती है। बड़े रूपान्तरों के प्रक्षिप्त कथा-प्रसंगों

की भाषा निश्चय ही परवर्ती है और इस तरह लघुतम रूपान्तर के पद-प्रयोग अपेक्षाकृत प्राचीन व्रजभाषा के प्रतीत होते हैं।

कुछ विद्वानों ने 'पुरातन प्रबंध संग्रह' के पृथ्वीराज संबंधी अपभ्रंश छप्पयों के आधार पर अनुमान किया है कि मूल पृथ्वीराज रासो अपभ्रंश काव्य था[1]। इस मत के विरुद्ध यह भी तो कहा जा सकता है कि पुरातन प्रबंध संग्रह में मूल पृथ्वीराज रासो के छंदों का अपभ्रंश रूपान्तर सुरक्षित है। ठोस प्रमाणों के अभाव में इस मत को मानने में अनेक बाधायें हैं।

इस प्रकार यदि पृथ्वीराज रासो का रचयिता चंद पृथ्वीराज का समकालीन था तो प्राप्त प्रतियों में से कोई भी उसकी कृति नहीं है।

पृथ्वीराज रासो का रचनाकाल

ग्रंथ में रचनाकाल का उल्लेख न होने से उसके रचयिता के जीवन-काल के आधार पर ही उसका रचनाकाल निश्चित किया जा सकता है। अधिक से अधिक मौखिक परंपरा से आते हुए पृथ्वीराज रासो के लिपिकाल अथवा संग्रहकाल का ही निश्चय संभव है। सर्वप्रथम 'पृथ्वीराज रासो' का उल्लेख सं०१७०७ में दलपति मिश्र रचित 'जसवंत उद्योत' में मिलता है। सं०१६३५ में चौहान वंशी बूँदीनरेश सुरजन तथा उसके पुत्र भोज के आश्रित कवि चन्द्रशेखर रचित 'सुरजन चरित' नामक संस्कृत काव्य में जहाँ पृथ्वीराज के लिए पूरा सर्ग दिया गया है और पृथ्वीराज के साथ चंद का भी उल्लेख है परंतु चंद को रासोकार नहीं कहा गया है। उससे स्पष्ट है कि सं० १६३५ तक स्वयं पृथ्वीराज के वंशजों को भी पृथ्वीराज रासो का पता न था। श्री मोहन लाल विष्णु पंड्या ने गंगा भाट-रचित जिस 'चंद छंद बरनन की महिमा' ग्रंथ की प्रति का पता दिया है और उसके अनुसार सिद्ध करना चाहा है कि सं०१६२७ तक पृथ्वीराज 'रासो' का उल्लेख मिलता है, वह 'खोज रिपोर्ट' के ही अनुसार फुलस्केप कागज़ पर लिखी हुई बिल्कुल

---

[1] इस मत की विस्तृत जानकारी के लिए देखिये 'राजस्थान भारती' भाग १ अंक १ में डा० दशरथ शर्मा और मीनाराम रंगा का निबंध 'द ऑरिजिनल पृथ्वीराज रासो, ऐन अपभ्रंश वर्क'।

आधुनिक रचना है। इस प्रकार अकबर के शासन काल से पहले पृथ्वीराज रासो के अस्तित्व का पता नहीं चलता। जैसा कि श्री नरोत्तम दास स्वामी का अनुमान है, अकबर की अधीनता स्वीकार करते समय मेवाड़ के राजघराने ने अपना गौरव बढ़ाने के लिए पृथ्वीराज चौहान से अपना संबंध स्थापित किया और इसके लिए पृथ्वीराज की पृथा नामक बहिन की कल्पना की। अंत में उन्होंने इन सबको काव्य रूप देकर परंपरागत 'पृथ्वीराज रासो' में मिलाकर संपूर्ण काव्य को लिपिबद्ध रूप में संग्रह करवाया। रासो-संग्रह का यह क्रम अनेक पीढ़ियों तक चला जिसकी चरम परिणति अमर सिंह द्वितीय के राज्य काल (सं० १७५५-६७ वि०) में हुई।

पृथ्वीराज रासो का रचयिता चंद

सुदृढ़ अनुश्रुति के बावजूद अकबर के शासन काल से प्राचीन कोई ठोस प्रमाण नहीं मिलता जिसमें पृथ्वीराज रासो के रचयिता के रूप में चंद कवि का उल्लेख हो। पुरातन प्रबंध संग्रह (लिपिकाल सं० १५२८) के पृथ्वीराज प्रबंध से अवश्य ही चंद बलद्दिय कृत पृथ्वीराज संबंधी दो छंदों का पता चलता है[1] किन्तु इनके आधार पर यह कहना कठिन है कि ये किसी प्रबंध काव्य के अंश हैं। इन प्रबंधों के रचना-काल का भी ठीक-ठीक पता नहीं है परंतु सं० १२९० से १५२८ के बीच में ही कभी न कभी इनकी रचना हुई होगी। फिर भी इनसे इतना तो निश्चित है कि चंद बलद्दिय नामक एक कवि अवश्य था जिसने पृथ्वीराज के विषय में कुछ काव्य-रचना की थी। वह प्रबंध काव्य था या नहीं और प्रबंध काव्य में भी 'रासो' नाम से अभिहित किया गया था या नहीं इसके लिए कोई ठोस प्रमाण भले न हो परंतु चंद और उसकी पृथ्वीराज-विषयक काव्य-रचना असंदिग्ध है।

विद्वानों ने चंद के वास्तविक नाम को लेकर भी काफी ऊहापोह प्रकट किया है। कुछ लोगों ने उसके चन्द्रक और पृथ्वीभट्ट नामों की भी

[1] [illegible] चंद बलद्दिउ [illegible] ॥१॥
[illegible] ॥२॥
(पु० प्र० संग्र० पृ० ८६)

कल्पना की है। किन्तु जिन्होंने चंद वलद्दिय नाम को स्वीकार कर लिया है उन्होंने भी वलद्दिय को शुद्ध करके 'वरदायी' कर दिया है जिसका अर्थ उनके अनुसार, 'वर देने वाला' अथवा 'जिसे दुर्गा ने वर दिया हो' होता है। वस्तुतः वह 'बलीवर्द' का ही तद्भव रूप है जो 'नर वृषभ' की तरह आदरार्थे विरुद् की तरह जोड़ा जाता है। इसकी पुष्टि उस प्रसंग से भी होती है जिसमें जयचन्द चंद के 'वलद्द' विरुद् पर व्यंग करते हुए पूछता है—'क्यों दूबरो वरद्द ?'

चंद और पृथ्वीराज

पृथ्वीराज रासो के बृहद् और मध्यम रूपान्तरों के अनुसार चंद पृथ्वीराज के जन्म-मरण का अनन्य साथी था[1]। दोनों का जन्म एक ही दिन हुआ था और मरण भी एक ही दिन। गजनी में एक दूसरे को कटार मार कर मर जाने का उल्लेख रासो के सभी रूपान्तर एक स्वर से करते हैं। इतिहास से इन घटनाओं की पुष्टि नहीं होती। दो व्यक्तियों की जन्म-कुंडलियों का इस तरह मिलना कोई आश्चर्य की बात नहीं है परंतु पृथ्वीराज और चंद का संबंध भी ऐसा ही था इसकी पुष्टि रासो के अतिरिक्त किसी अन्य प्रमाण से नहीं होती। इस हिसाब-किताब का यही मतलब है कि पृथ्वीराज से चंद का बहुत घनिष्ठ संबंध था और राजा उसे प्रायः महत्त्वपूर्ण अवसरों पर साथ रखता था।

इन सब बातों से यही निष्कर्ष निकलता है कि पृथ्वीराज के दरबारी कवि के रूप में चंद वलद्दिअ का होना असंभव नहीं है और उसकी पृथ्वीराज विषयक काव्य रचना के उदाहरण प्राप्त हैं परंतु पृथ्वीराज रासो नाम से प्राप्त परवर्ती रूपान्तरों में कितना अंश चंद कृत है अथवा चंद से उसका क्या संबंध है इसका निर्णय करना इस समय असंभव है। संभावना यही है कि चंद की पृथ्वीराज विषयक

[1] इक थान मरन जनमह सु इक, चलहि किंत्ति ससि लग्गि रवि।
(ना० प्र० सभा संस्करण, ७६० वाँ पद्य)

इक्क दीह उप्पन्न, इक्क दीहे समाय क्रम।
(वही, ६२ वाँ पद्य)

कविताएँ उसके वंशजों तथा लोक-कंठों की मौखिक परंपरा द्वारा क्रमशः स्फीत होती गईं। जहाँ तक ऐतिहासिक सामग्री के आधार पर पृथ्वीराज रासो की प्रामाणिकता परखने का प्रश्न है उसके विषय में इतना ही कहना पर्याप्त होगा कि केवल अनैतिहासिक घटनाओं के समावेश से ही पृथ्वीराज रासो चंद की कृति होने के गौरव से वंचित नहीं हो सकता। 'पृथ्वीराज रासो' की प्रामाणिकता पर विचार करते समय यह न भूलना चाहिए कि वह काव्य ग्रंथ है, इतिहास नहीं। यदि जायसी के 'पद्मावत' की अनैतिहासिक घटनाओं को लेकर इतना शोर गुल नहीं हुआ तो कोई आवश्यक नहीं कि पृथ्वीराज रासो पर ऐसा कोप किया जाय। पृथ्वीराज रासो में कितना अंश अनैतिहासिक है इसकी चर्चा यहाँ प्रासंगिक नहीं है। इतिहास में रुचि रखने वाले लोग ओझा जी, मुं० देवी प्रसाद तथा डा० दशरथ शर्मा के शोधपूर्ण प्रयत्नों से अच्छी तरह परिचित होंगे।

पृथ्वीराज रासो का काव्य-सौष्ठव

कथा-प्रवाह—पृथ्वीराज रासो रासक शैली में लिखा हुआ एक चरित काव्य है जिसका चरित नायक पृथ्वीराज चौहान है। इसके वृहद् रूप में अनेक आनुषंगिक कथा-प्रसंगों के बावजूद आधिकारिक कथा पृथ्वीराज से ही किसी न किसी प्रकार संबद्ध है। आरंभ में मंगलाचरण, पूर्ववर्ती कवियों के प्रति कृतज्ञता-ज्ञापन, आत्म नम्रता, दुर्जन-निन्दा, सज्जन-प्रशंसा तथा ग्रंथ-रचना का उद्देश्य निवेदन करने के बाद कवि ने पृथ्वीराज के जन्म और शिशु-क्रीड़ा के साथ मुख्य कथा का श्रीगणेश किया है; संक्षेप में चरित नायक के विद्याभ्यास की चर्चा करके मुख्य कवि उसे राजकीय कर्म क्षेत्र में प्रवेश कराता है। यहाँ एक दिन उसके सामंतों में प्रमुख कन्ह गुर्जरेश भीमदेव चालुक्य के एक भाई का वध कर देता है जो भीमदेव से असंतुष्ट रहने के कारण पृथ्वीराज के दरबार में रहने लगा था। इस दुर्घटना का कारण केवल इतना था कि कन्ह के सम्मुख उसने अपनी मूँछों पर हाथ रख दिया था और कन्ह को यह सह्य न था। [illegible] कन्ह की भी [illegible] थी। पृथ्वीराज ने कन्ह से आँखों पर पट्टी बाँधे रहने का अनुरोध किया। लेकिन भीमदेव

चालुक्य को तो इतने से शान्ति मिल नहीं सकती थी। उसने पृथ्वीराज से वैर ठान लिया। इस वैर का विस्फोट आगे चलकर सलप की पुत्री इंछिनी के विवाह के अवसर पर हुआ। भीमदेव इंछिनी की बड़ी बहिन मंदोदरी से शादी कर चुका था फिर भी उसने द्वितीय पत्नी के रूप में इंछिनी की माँग की। यह संबंध इंछिनी के पिता और भाई किसी को पसंद न था। उन्होंने पृथ्वीराज के पास विवाह का प्रस्ताव भेजा। पृथ्वीराज उस निवेदन को स्वीकार कर सदल बल चढ़ आया। उधर भीमदेव की भी सेना आ रही थी। जमकर लड़ाई हुई। पृथ्वीराज विजयी हुआ। विधिवत् पृथ्वीराज और इंछिनी का विवाह-कार्य संपन्न हुआ।

कुछ दिनों बाद पृथ्वीराज एक नट तथा हंस से शशिव्रता का गुण-श्रवण कर उस पर अनुरक्त हो गया। उधर शशिव्रता की शादी पृथ्वीराज के प्रतिद्वन्द्वी कान्यकुब्जेश्वर जयचंद्र गाहड़वाल के भतीजे से होने वाली थी परंतु उसके अल्पायु होने की भविष्यवाणी सुनकर शशिव्रता का मन उधर से उचट गया। इसी बीच हंस ने शशिव्रता से पृथ्वीराज का बखान किया। इधर भी अनुराग अंकुरित हुआ। फलतः पृथ्वीराज सदल-बल चढ़ गया और शिव-पूजन को जाती हुई शशिव्रता का हरण कर जयचंद की सेना को हराता हुआ अपने राज्य में वापस लौट आया।

दिन मृगयादि में सुख से बीत ही रहे थे कि पृथ्वीराज को अपने मंत्री कैमास (कदम्बवास) की दासी-अनुरक्ति का पता चला। यह बात यशस्वी राजा के लिए इतनी अपमानजनक लगी कि उसने एक रात छिपकर मंत्री पर प्रहार किया और इस तरह उसे मार डाला। पीछे कवि चंद ने तनिक से अपराध पर इतना कड़ा दण्ड देने तथा ऐसे योग्य मंत्री को खो देने के लिए राजा को बुरी तरह धिक्कारा।

युद्ध और विवाहों से तो पृथ्वीराज को तृप्ति थी नहीं। थोड़े दिनों बाद उसे जयचंद्र की पुत्री संयोगिता के नेम-आचरण की सूचना मिली। क्षत्रिय राजा के लिए यह असंभव था कि संयोगिता का व्रत निष्फल जाने दे। फलतः उसने अनेक सामंतों, शुभचिंतकों तथा ज्योतिषियों के मना करने पर भी कन्नौज जाने का निश्चय किया। लेकिन नगर छोड़ने के पूर्व इस बार रनिवास से अनुमति लेना आवश्यक प्रतीत हुआ। राजा सर्वप्रथम बड़ी रानी इंछिनी के मंदिर

में गया। वसंत ऋतु थी। ऐसे समय रानी भला कब छोड़ने वाली थी। सारी ऋतु राजा वहीं बंदी रहे। वहाँ से मुक्त होने पर दूसरी रानियों के यहाँ भी जाना कर्तव्य था। शेष पाँचों रानियों ने भी क्रमशः ग्रीष्म, पावस, शरत्, हेमंत और शिशिर ऋतु में राजा को अपने-अपने यहाँ रोक रखा। अंत में जब फिर वसंत आया तो राजा ने चंद कवि की शरण ली और मुक्ति का उपाय पूछा कि कौन सी ऋतु है जिसमें स्त्री को पति नहीं रुचता। चतुर कवि ने 'ऋतु' शब्द पर दूर की उड़ान ली और राजा मुक्त हुए। फलतः चंद को साथ लेकर ससैन्य राजा कन्नौज की ओर चल पड़े। वहाँ जयचंद के दरबार में पृथ्वीराज ने छद्म रूप में चंद का सेवक बनाकर प्रवेश किया किन्तु अंत में पहचान लिए गये। जयचंद ने उस पर पहरा डलवा दिया। किंतु एक दिन पृथ्वीराज ने गंगा के किनारे स्थित संयोगिता से भेंटकर उसे घोड़े पर चढ़ा दिल्ली की राह ली। राह में अवरोध हुआ। किन्तु संयोगिता को साथ लिए शत्रु-सैन्य को काटता हुआ पृथ्वीराज निकल गया। इस युद्ध में पृथ्वीराज के कन्ह आदि अनेक महान सामंत योद्धा काम आए। थोड़े दिनों तक रुष्ट रहने के बाद जयचंद ने विवश होकर पृथ्वीराज के पास कन्या के विधिवत ब्याह के लिए पुरोहित भेजा, साथ ही पर्याप्त दहेज भी।

पट्टरानी के रूप में संयोगिता के आने पर बड़ी रानी इंछिनी के मान को धक्का लगा। इधर पृथ्वीराज भी नई रानी को ही अपना सारा समय देने लगे। ऐसा होना स्वाभाविक था। इंछिनी ने अपने पाले हुए शुक के द्वारा राजा तक अपनी विरह-दशा की सूचना पहुँचाई। सहृदय पति पिघला। दोनों रानियों में समझौता हुआ। यह चरित नायक के सुखोपभोग का परिचायक है। कवि ने उसके सुखद दिनों का वर्णन किया है।

राज गजनी ले जाया गया और वहाँ उसकी आँखें फोड़कर उसे क़ैदखाने में डाल दिया गया। क़ैद में पड़े-पड़े वह अपने विगत वैभव तथा पूर्वकृत कुकर्मों पर पश्चाताप करता रहा। कुछ दिनों बाद एक दिन कवि चंद उससे मिलने आया और उसने संकेत से गोरी को शब्दवेधी बाण द्वारा मारने की सलाह दी। दूसरी ओर चंद ने अपनी कवित्व प्रतिभा से गोरी को प्रभावित करके पृथ्वीराज के शब्दवेधी लक्ष्य के प्रदर्शन की व्यवस्था कराई। योजनानुसार पृथ्वीराज द्वारा गोरी का वध हुआ और अंत में चंद तथा पृथ्वीराज कटार से एक दूसरे को मार मरे।

संक्षेप में पृथ्वीराज रासो की यही मुख्य कथा है। इसके अतिरिक्त जो आनुषंगिक कथा अथवा कथायें हैं उनमें अधिकांश विवाह वर्णन, युद्ध वर्णन तथा अनेकानेक सामंतों द्वारा गोरी के पकड़े जाने का विस्तार है। बीच-बीच में कुछ अतिमानवीय उपाख्यानों तथा होली-दिवाली-संबंधी किंवदंतियों का भी समावेश हो गया है।

रासो की यह कथा प्रधानतः शुक और शुकी के संवाद द्वारा कहलाई गई है। भारतीय साहित्य के लिए यह कोई सर्वथा नया प्रयोग नहीं है। एक प्रकार से यह कथोपकथन की पौराणिक शैली है।[1]

संपूर्ण कथा चंद कृत नहीं है यह तो इतने से ही स्पष्ट है कि बाण वेध प्रसंग लिखने के लिए कवि के पास समय कहाँ था! इसके अतिरिक्त गजनी-प्रसंग के आरंभ में ही रासो स्पष्ट कर देता है कि 'पुस्तक जल्हन हत्थ दै चलि गज्जन नृप काज!' इस पर अनुमान लगाया गया है कि चंद कृत रासो संयोगिता विवाह के बाद ही समाप्त हो जाता है। जो हो, वर्तमान रासो अपने पूर्वार्द्ध और उत्तरार्द्ध दोनों रूपों में हमारे सामने है और इसीलिए अपने संपूर्ण रूप में विचारणीय भी।

कथा के मार्मिक प्रसंग तथा कवि की विशेषता—मध्ययुग के अन्य चरित काव्यों की भाँति रासो की भी कथा में कथा-बंध के उतार चढ़ाव तथा चमत्कार पूर्ण मोड़-संबंधी कोई विशेषता दृष्टिगोचर नहीं होती;

---

[1] विशेष विस्तार के लिए देखिए 'हिंदी साहित्य का आदि काल' पृ० ७५-७६।

क्योंकि उस युग के प्रायः सभी चरितनायक आधुनिक उपन्यासों की भाँति व्यक्ति-विशिष्ट चरित्र न होकर इनके विपरीत वे 'टाइप' मात्र हैं। इसलिए घटनाओं की नवीनता के अभाव में प्राचीन चरित काव्यों के कथा-बंध का सौन्दर्य केवल दो बातों में देखा जाता है—या तो उसमें नाटिक प्रसंगों की सृष्टि की गई हो अथवा कम से कम कवि ने कथा-प्रवाह में उसकी संभावना को पहचाना हो। ऐसे प्रसंगों के वर्णन में ही कवि-दृष्टि तथा कवित्व-शक्ति का पता चलता है।

सर्वप्रथम रासोकार ने माँ की कोख में पृथ्वीराज के गर्भाधान का प्रभाव परखा है और उसे इन शब्दों में काव्यात्मक रूप दिया है—

> कितिक दिवस अंतरह रहिय आधान रानि उर।
> दिन दिन कला बढ़ंत मेघ ज्यों चढ़त भद्द धुर॥
> चन्द्र कला सित पष्प जेम बाढ़ंत दिनं दिन।
> मुगधा जोबन चढ़त मिलत भरतार पिनं पिनं॥
> उदित अधान सुभ गातनह, जेम जलधि पुनिम बढ़हि।
> कुलसंत दीप जे प्रीय बिन जिम सु जोति वनिता चढ़हि॥

गर्भस्थ शिशु की निरंतर बढ़ती हुई कला तथा माँ के रूप पर पड़ने वाले उसके अन्तः प्रभाव का चित्रण यहाँ देखने योग्य है।

पर्यवेक्षण का दूसरा स्थल है शिशु-क्रीड़ा। बाल-लीला के सिद्ध कवि सूर के आगे तो सभी कवि फीके हैं फिर चंद की कहाँ गिनती! फिर भी कुछ चित्र द्रष्टव्य हैं—

> [illegible] दिन रदन, हुलसि हुलसि उठि उठि गिरत।

[illegible] होकर जमीन पर लोटने की बाल-प्रकृति तथा इस [illegible] में बार-बार उठने का असफल प्रयत्न करना अत्यंत स्वाभाविक है और संभवतः सूर के यहाँ भी इसका चित्रण नहीं हुआ है। माँ का [illegible] की उंगली पकड़कर चलने का वर्णन तो सूर ने भी किया है किन्तु इस पर [illegible] का [illegible] चंद के यहाँ ही देखा जा सकता है—

> [illegible] ॥

और [illegible] के बीच—

> [illegible] ॥

[illegible] के जीवन के मधुर प्रसंगों में [illegible] का स्थान

अन्यतम है। अनेक विवाह-वृत्तान्तों के बीच कवि का मन केवल तीन-विवाहों में विशेष रमा है। ये हैं इंछिनी, शशिव्रता तथा संयोगिता-विवाह। इन विवाहों के वर्णन में कवि की सबसे बड़ी विशेषता है पुनरावृत्ति को बचा जाना। प्रायः एक प्रकार की घटनाओं के वर्णन में पुनरावृत्तियों की आशंका बनी रहती है किन्तु ऐसे ही स्थलों पर विशिष्ट कवि की पहचान होती है। हर्ष की बात है कि चंद ने इन प्रसंगों में अपनी विशिष्टता प्रमाणित कर दी ही है। तीनों विवाह तीन प्रकार से होते हैं। इंछिनी-विवाह हिंदू-विवाह प्रणाली का पूरा प्रतिनिधित्व करता है जिसमें ब्राह्मण द्वारा लग्न भेजने से लेकर बरात का सजना, अगवानी, तोरण-कलश-द्वारचार विधान, जनवासा, मण्डप-निर्माण, कन्यादान, गठबंधन, भाँवरी, गणेश-नवग्रह-कुलदेवता पूजन, गारी, शाखोच्चार, ज्योनार, दान-दहेज, विदाई आदि का सुंदर वर्णन है। शशिव्रता विवाह में ये बातें नहीं दुहराई जातीं। इसमें कवि काव्यों में वर्णित पूर्वानुराग की प्रसंगोद्भावना करके हंस और गंधर्व द्वारा दोनों पक्षों को पहले से ही परस्पर अनुरक्त बनाता है। पश्चात् पृथ्वीराज शशिव्रता का हरण करता है। संयोगिता विवाह में ये दोनों बातें नहीं होतीं। यहाँ पूर्वानुराग केवल एक ओर से आरंभ होता है। वस्तुतः संयोगिता पृथ्वीराज का स्वयंवर करती है और समय पाते ही पृथ्वीराज उसके पास जाकर सखियों के बीच विवाह कर लेता है। हरण तो यहाँ भी होता है पर विषम परिस्थिति के कारण हरण का रूप यहाँ कुछ भिन्न है।

अब इनमें से एक-एक विवाह का सौन्दर्य-अंकन देखें—

नारी की वयः संधि-शोभा कवियों के लिए सदैव आकर्षण की वस्तु रही है। इसके लिए नाना उपमाओं का जमघट लगाया गया है। रासो में इंछिनी और शशिव्रता की वयः संधि का वर्णन तुलनीय है।

इंछिनी —

> बाले तन्वय मुग्ध मध्यत इमं स्वपनाय वै संधयं।
> मुग्धे मध्यम स्वांम वामंति इमं मध्यान्ह छाया पगं॥
> बालप्पन तन मध्य जीवन इमं सरसी अवगी जलं।
> अंगं मद्धि सुनीरजे मल ससी सुम्भै सुसैसव इमं॥

शशिव्रता —

राका अरु सूरज्ज बिन, उदै अस्त दुहुँ बेर ।
बर शशिवृत्ता सोभई, मनो श्रृंगार सुमेर ॥

वस्तुतः शशिव्रता का रूप और शील इंछिनी से कहीं अधिक आकर्षक था। इसीलिए कवि ने शशिव्रता के रूप-वर्णन में अधिक ध्यान दिया है। ऊपर के उदात्त वर्णन से संतुष्ट न होकर चंद ने शशिव्रता के यौवनागम को बसंत से उपमित किया—

पत्त पुरातन झरिग पत्त अंकुरिय उट्ठ तुच्छ ।
ज्यों सैसव उत्तरिय चढ़िय बैसब किसोर कुच्छ ॥
शीतल मंद सुगंध आइ रितिराज अचानं ।
रोमराइ सँग कुछ नितंब तुच्छ सरसानं ॥
वड्डै न सीत कटि छीन ह्वै लज्ज मांन टंकनि फिरै ।
ढंकै न पत्त ढंकै कहै, वन बसंत मन्त जु करै ॥

प्रायः कवियों ने युवती नायिका के रूप को विभिन्न स्थितियों, तथा वातावरणों की मनोरम पटभूमि में रख कर नया-नया चित्र उतारा है। सद्यः स्नाता का चित्र भी इन्हीं में से एक है। रासो में सद्यः स्नाता इंछिनी की यह उपमा रूढ़ियों से अलग नई सूझ प्रकट करती है—

करि मंजन अंगोछि तन, धूप वासि बहु रंग ।
मनो देह जनु नेह फुलि, हेम मोज जन गंग ॥

इसी प्रकार सौन्दर्यद्रष्टा कवि ने प्रिय के सम्मुख जाने से पूर्व डरती हुई नववधू इंछिनी के बाह्य रूप-वर्णन में सूक्ष्म मनोवैज्ञानिक रेखाओं को उभार कर चित्र में नई ओप ला दी है—

हलहलै लता कछु मंद वाय । नव वधू केलि भय कंप पाय ॥
उपमां उर कवी कहीय तांम । जुब्बन तरंग अंगि-अंगि कांम ॥

नारी-सौन्दर्य की चरम परिणति है उसकी सौभाग्य-तिलकित दशा। सौभाग्यवती इंछिनी के नख-शिख का परिपाटी-विहित लम्बा वर्णन करने के बाद अंत में कवि उसकी मंगल मूर्ति का परिचय देता है—

जरकस घुघर घसंड जांनु रवि क्रिन कदल ग्रह
कुसुंभ लरे नीसार, रंग छवि छंडि हुंड हर
पीत कंचुकी संचि पंडि कस अंग उपट्टिय
कंकन कर वर वरत गंध हरदीय उपट्टिय
आलोल नैंन गति वचन वहु, सपिन सोभ मंडिय तनह।
फुल्ली सु साँझ कवि चंद कहि, मनहु वीजु थरकी घनह॥

शशिव्रता-विवाह में पूर्वराग के लिए रूप-गुण वर्णन को विस्तार देने के बाद कवि ने जिस प्रियदर्शन प्रसंग पर ध्यान केन्द्रित किया है, वह है शशिव्रता और पृथ्वीराज का प्रथम साक्षात्कार। इंछिनी विवाह में इस प्रसंग की सृष्टि उतनी मनोरम नहीं हो सकती थी क्योंकि वहाँ पूर्वराग का अस्तित्व ही नदारद था। बहुत दिनों से जिसका गुण-श्रवण करते करते मानस-प्रतिमा निर्मित होती रहती है उसके प्रथम साक्षात्कार के समय की मानसिक स्थिति कितनी रूमानी हो सकती है इसे चंद के शब्दों में देखिये—

यों करंत दुत्तिय वियौ, कथा श्रवन सुनि मंत।
जाकौ तें पतिवृत्त लिय, सो आयौ अलिकंत॥
श्रवन नयन को मेल कै, भय चंचल चल चित्त।
श्रोतानं दिष्टान अरु, मिलि पुच्छै दोइ मित्त॥

कर्नं प्रयंत कटाछ सुरंग विराजही।
कछु पुच्छन को जाहि पै पुच्छत लाजही॥
नैन सैन में वात जु स्रवनन सों कहै।
काम किधौं प्रथिराज भेदि करि ना लहै॥

प्रायः दीर्घ दृगों के लिए कवियों ने 'कानन चारी नयन मृग नागर नरनु सिकार' जैसा चमत्कार दिखाया है परंतु 'कान तक खिंचे नयनों' को देखकर उनके मधुर वार्तालाप की सुंदर उत्प्रेक्षा चंद ने ही की। विशेषता श्रवण नयन के वार्तालाप में नहीं बल्कि 'कछु पुच्छन को जाहि पै पुच्छत लाजहीं' में है क्योंकि श्रवण-नयन की बातचीत वास्तविक नहीं है। इस उत्प्रेक्षा का सौन्दर्य इससे भी अधिक प्रासंगिकता में है। बात यह है कि अब तक श्रवणों ने ही प्रिय का रूप-गुण सुन रखा था; नयनों को तो आज पहले-पहल देखने का अवसर मिला है।

इसलिए नयनों का श्रवणों के पास पूछने के लिए जाना स्वाभाविक ही है कि क्या जिनके विषय में सुन रखा था वे यही हैं? क्या ऐसा तो नहीं है कि जो मैं देख रहा हूँ वह सुने हुए रूप-गुण से कहीं अधिक है? ये तमाम बातें तथा इससे भी अधिक 'पुच्छत लाजहीं' द्वारा संकेतित हैं। तुलसीदास ने तो इतना ही कहा कि 'गिरा अनयन नयन बिनु बानी' लेकिन चंद ने इस तथ्यपरक कथन में अपनी सूझ से मधुर विशेषता ला दी।

इस प्रथम दर्शन से भी अधिक मार्मिक है प्रथम स्पर्श। सहसा पृथ्वीराज जन-समूह के बीच शशिव्रता को हाथ से पकड़कर अपनी ओर खींचता है और तुरंत चंद की फड़कती उपमा निकलती है 'मानों कि लता कंचन लहरि मत्त बीर गजराज गहि'! पूरी पदावली जैसे स्नेह-उमंगित बाहु की तरह लहरा उठी है!

इस पर लज्जाशीला शशिव्रता की भावशबलता देखने योग्य है—

गहत बाल पिय पानि सु गुरुजन संभरे।
लोचन मोचि सुरंग सु अंसु बहे ढरे॥
अपमंगल जिय जानि सु नेने मुप वही।
मनो पंजन मुप मुक्ति मरक्कत नंपही॥

इसके बाद जब शशिव्रता को उठाकर पृथ्वीराज सीढ़ी लाँघते हुए आगे बढ़ता है तो कवि की उत्प्रेक्षा-शक्ति फिर मुखर हो उठती है—

कामलता कल्हरी प्रेम मारुत झकझोरी।'

इसके बाद ही भीषण युद्ध की पटभूमि आती है और उसी के बीच पृथ्वीराज तथा शशिव्रता की प्रथम मधुयामिनी व्यतीत होती है—

कुमुद उघरि मूंदिय सु बंधि सत पत्र प्रकारय।
चकिय चक्क बिच्छुरहि, चक्कि ससिवृत्त निहारय॥
जुवती जन चढ़ि काम जोंह कोतर तर पंषी।
आवृत वृत्त सुंदरिय काम वढ्ढिय वर अंषी॥
नव नित्त हंस हंसह मिलै, विमल चंद उग्यौ सु नभ।
सामंत सूर अप रप्पिकै, करहि वीर वीश्राम सभ॥

संयोगिता-विवाह की विशेषता उसकी मार्मिक प्राकृतिक पृष्ठभूमि में है। वैसे तो शशिव्रता विवाह के आरंभ में भी थोड़ा-सा उद्दीपक ऋतु

वर्णन है किन्तु संयोगिता विवाह से पूर्व के पट ऋतु वर्णन की सी स्वाभाविक प्रासंगिकता तथा अनुभूति की तीव्रता उसमें कहाँ ? इससे पूर्व किसी नई विवाह-यात्रा के लिए प्रस्थान करते समय पृथ्वीराज अपनी रानियों से अनुमति लेने नहीं जाता। किन्तु इस बार बहुत बड़े शत्रु का सामना है। पता नहीं लौटना संभव हो सकेगा या नहीं ? फलतः पृथ्वीराज अनुमति के लिए सर्वप्रथम बड़ी रानी इंच्छिनी के पास जाता है। संयोग ऐसा कि वह ऋतुराज का शासन काल था। आखिर पटरानी का मिलना कवि ऋतुराज में न करायें तो कहाँ करायें। रानी के मुख से यह निकलना स्वाभाविक था—

मवरि अंब फुल्लिग कदंब रयनी दिघ दीसं।
भवर भाव भुल्ले भ्रमंत मकरंदव सीसं॥
वहत वात उज्जलति मौर अति विरह अगनि किय।
कुह कुहंत कल कंठ पत्र रापस रति अग्गिय॥
पय लग्गि प्रान पति बीनवौं, नाह नेह मुक्त चित धरहु।
दिन दिन अवद्धि जुब्बन घटय, कंत वसंत न गम करहु॥

राजा उस ऋतु में वहीं रुक जाता है। ग्रीष्म ऋतु के आरंभ होते ही वह दूसरी रानी के मंदिर में जाता है और वहाँ भी ग्रीष्म का भीष्म रूप दिखलाकर रानी रोकती है—

दीरघ दिन निस हीन छीन जलधर वैसंनर।
चक्रवाक चित मुदित उदित रवि थकित पंथनर॥
चलत पवन पावक समान परसत सु ताप मन।
सुकत सरोवर मचत कीच तलफंत मीन तन॥
दीसंत दिगंबर सम सुरत, तरु लतान गय पत्त झरि।
अवकुलं दीह संपति विपति, कंत गमन ग्रीषम न करि॥

इसी तरह ग्रीष्म भी बीत जाता है और पावस ऋतु में तीसरी रानी इन्द्रावती नाना प्रकार से राजा को रोकती है। एक ओर तो 'जल वद्दल वरषंत प्रेम पल्हरै निरंतर' और दूसरी ओर 'सजल सरोवर पिष्पि हियौ तत छिन धन फट्टै'। इसलिए वह निवेदन करती है—

घुमड़ि घोर घन गरजि करत आडंबर अंबर।
पूरत जलधर धसत धारपथ थकित दिगंबर॥

झंझकित द्रिग शिशुमृग समान दमकत दामिनि द्रिस।
बिहरत चात्रग चुवत पीय दुपंत समं निसि॥
ग्रीषम विरह द्रुम लता तन, परिरंभन क्रत सेन हरि।
सज्जंत काम निसि पंचसर, पावस पिय न प्रवास करि॥

शरत् का आकर्षण पावस से कम नहीं है। यदि पावस इंद्रावती के यहाँ बीता तो शरत् को हंसावती के यहाँ बीतना चाहिए था—

द्रप्पन सम आकास स्रवत जल अमृत हिमकर।
उज्जल जल सलिता सु सिद्धि सुंदर सरोज सर॥
प्रफुलित ललित लतानि करत गुंजारव भ्रमर।
उद्दति छित्त निसि नूर अंग अति उमंगि अंग बर॥
तलफंत प्रान निसि भवन तन, देपत दुति रिति मुष जरद।
नन करहु गवन नन भवन तजि, कंत दुसह दारुन सरद॥

हंसावती का अंतिम तीर है 'सरद दरद करि मति चलौ!' राजा इतना कठोर थोड़े ही सकता है! इसके बाद हेमंत का कठिन शीत तो यों ही रोकने के लिए काफी था, फिर उसके साथ रानी का मृदुल निवेदन भी नत्थी हो तो क्या कहना—

न चलि कंत सुभचित्त धनी बहुवित्त प्रगासौ।
गहगहि ऐसी प्रेम सौज आनंद उहासौ॥
दीरघ निसि दिन तुच्छ सीत संतावै अंगा।
अधर दसन थरहरे प्रात परजरे अनंगा॥
जा ऐनि रैनि हर हर जपत, चक्क सह चक्की कियौ।
हिमवंत कंत सुम्रह म्रहति, हहकरंत फुट्टै हियौ॥

इसी तरह रुकते-रुकाते वर्ष की अंतिम ऋतु शिशिर आ धमकती है, तब जैसे पाँच ऋतुएँ गईं वैसे छठीं भी जाय तो क्या हर्ज है। लेकिन शिशिर का अपना आग्रह भी है—

आगम फाग अवंत कंत सुनि मित्त सनेही।
सीत अंत तप तुच्छ होइ आनँद सब ग्रेही॥
नर नारी दिन रैनि मैन-मदमाते डुल्लैं।
सकुच न हिय छिन एक वचन मनमाने बुल्लैं॥
सुनौ कंत सुभ चित करि, रयनि गवन किम कीजियइ।
कहि नारि पीय विन कामिनी, रिति ससिहर किम जीजियइ॥

ध्यान देने की बात है कि शिशिर की प्राकृतिक शोभा में विशेपता न होने के कारण कवि ने उधर से दृष्टि हटाकर मानवीय क्रियाओं का प्रलोभन दिखाया है।

स्पष्ट है कि रानियों के आग्रह और ऋतुओं के उद्दीपन के अतिरिक्त राजा का अपना प्रणय-लुब्ध मन भी था जो उसने साल भर के लिए कनवज्ज-गमन का कार्यक्रम रद्द कर दिया। किन्तु दूसरा ऋतु-चक्र आरंभ होते ही राजा की परेशानी के साथ पाठक की उत्सुकता भी लगी हुई है कि देखें कवि इसी तरह कथा-प्रसंग को ऋतु वर्णन के आवर्त में ही घुमाते घुमाते डुबा देता है अथवा राजा के साथ ही कथा-प्रवाह की भी मुक्ति के लिए कोई युक्ति-संगत प्रसंग की उद्भावना करता है। यहीं कवि-प्रतिभा की परीक्षा है। इतने सुंदर ऋतु वर्णन का समापन भी मधुर ढंग से ही होना चाहिए अन्यथा अब तक की सारी करीगरी गुड़-गोबर हो सकती है। ऐसे महत्त्वपूर्ण प्रसंग पर चंद स्वयं उपस्थित होता है। ज्यों ही दूसरा वसंत आता है कि पृथ्वीराज चंद के पास परामर्श के लिए जाते हैं। लेकिन वे ठहरे राज-धिराज, सीधे साधे मुक्ति का उपाय पूछना हेठी हो सकती थी। इसलिए वे कवि को भी तोलते हुए से पूछते हैं—

> षट रिति बारह मास गय, फिरि आयौ रु वसंत।
> सो रिति चंद बताउ मुहि, तिया न भावै कंत॥

और चंद जैसे पहले ही से इस सवाल के लिए तैयार बैठा हो वह तुरंत 'ऋतु' शब्द पर श्लेप करता है—

> रोस भरे उर कामिनी, होइ मलिन सिर अंग।
> उहि रिति त्रिया न मानई, सुनि चुहान चतुरंग॥

इस प्रकार यह मधुर प्रसंग समाप्त होता है। निस्सन्देह 'कनवज्ज समय' का षट्-ऋतु वर्णन रासो के दो तीन मार्मिक तथा सुंदर प्रसंगों में तो है ही, हिंदी काव्य परंपरा के षटऋतु वर्णनों में भी ऊँचा स्थान रखता है। ऊपर से देखने पर इसमें परिपाटी-विहित बातें पर्याप्त मिलेंगी और उद्दीपन के ही रूप में प्राकृतिक सुषमा का प्रयोग दिखेगा किन्तु यह उस ह्रास-युग के दृष्टिकोण की सीमा है। रासो के षट्ऋतु वर्णन की विशेपता इस बात में है कि वह आरोपित न होकर मानवीय

क्रियाकलाप का अभिन्न अंग बनकर आया है और इस प्रकार कथा-प्रवाह को गति देता है। उसकी क्रियाशीलता में ही शोभा है।

इसके बाद भी कवि चंद ने वर्णन-कौशल दिखाने का अवसर निकाल लिया है। उस युग की सबसे समृद्ध नगरी कान्यकुब्ज की शोभा का वर्णन न करना कवि की अरसिकता ही होती। इसलिए रसिक कवि ने कान्यकुब्ज के प्रथम दर्शन-जनित प्रभाव में नाम परिगणन ही नहीं बल्कि दृश्य-चयन और उपमा-उत्प्रेक्षा-मंडन का खूब परिचय दिया है। गंगा के तीर पर बसे हुए विशाल भवनों वाले नगर की नागरियों के क्रियाकलापों को भी कवि ने शब्दों में चित्रित किया है।

आगे कान्यकुब्जेश्वर के दरबार में चंद के उपस्थित होने का प्रसंग आता है। राजाओं के यहाँ मानसिक थकान मिटाने अथवा मनोरंजक के निमित्त कुछ नोंक-झोंक अक्सर होती ही रहती थी और उसमें रसिक राजा भी भाग लिया करते थे। कवियों के साथ राजा के कलात्मक विनोद की अनेक कहानियाँ आज तक प्रचलित हैं। चंद दरबार की एक झलक देने के लिए आत्मघटित सा प्रसंग छेड़ देता है। राजा जयचन्द्र चंद वलिद के नाम अथवा 'वलिद्द' विरुद् को ही लेकर मज़ाक करते हैं—

मुह दरिद्द पसु तन चरन, जंगल राव सुहद्द।
वन उजार पसु तन चरन, क्यों दूबरो वरद्द॥

इस पर चंद कब चूकने वाला है। धाराप्रवाह पाँच छप्पयों में वह खरी स्पष्टोक्ति द्वारा राजा को निरुत्तर कर देता है। एक बानगी देखिए—

हंस न्याय दुब्बरौ मुत्ति लब्भे न चुनंतह।
सिंघ न्याय दुब्बरौ करी चंपे न कंठ कह॥
त्रिग न्याय दुब्बरौ नाद वंधियै सुवंधन।
छैल छक्क दुब्बरौ त्रिया दुब्बरी मीत मन॥
आसाढ गाढ़ वंधन धुरा, एकहि गहि हहरद्दिया।
जंगर जुरारि उज्जर परन, यौं दुब्बरौ वरद्दिया॥

इसके बाद संयोगिता और पृथ्वीराज के साक्षात्कार, गंधर्व विवाह तथा संयोगिता-हरण प्रकरण में कवि की सरस्वती पूर्ण रूप से मुखरित हुई है। शशिव्रता की तरह संयोगिता का साक्षात्कार मंदिर में नहीं

बल्कि गंगा के किनारे होता है जब पृथ्वीराज अनमने भाव से मछलियों को मोती चुँगा रहा था। देखा पहले संयोगिता ने और थोड़ा संदेह हुआ। उसने तुरंत चित्रशाला में रखे हुए चित्र से मिलान किया और फिर लौट आई। पृथ्वीराज की भी आँखें उठीं। सहसा उसने उस रूप में जानु, कटि, कुच, कुचकोर, मुख, नासिका, दृग, भौंह, वेणी आदि न देखकर आश्चर्यचकित क्या देखा कि—

कुंजर उप्पर सिंघ सिंघ उप्पर दो पब्बय।
पब्बय उप्पर भृंग भृंग उप्पर ससि सुब्भय॥
ससि उप्पर इक कीर कीर उप्पर मृग दिट्ठौ।
मृग उप्पर कोवंड संध कंद्रप्प वयट्ठौ॥
अहि मयूर महि उप्परह हीर सरस हेमन जर्यो।
सुर भुवन छंडि कविचंद कहि तिहि धोपे राजन पर्यो॥

शिकारी राजा आखिर यह सब न देखता तो क्या देखता!

प्रथम दर्शन में ही दोनों सुध-बुध खो बैठते हैं। समझ में नहीं आता कि बात क्या करें। संयोगिता सोचती है—

जो जंपौ तौ चित्त हर, अनजंपै विहरंत।
अहि डट्ठै छच्छुन्दरी हियै विलग्गी वंति॥

दूसरा प्रसंग वह है जब पृथ्वीराज संयोगिता को घोड़े पर चढ़ाने का आग्रह करता है और वह लजा उठती है। आगे चलकर घोर संग्राम में लड़ते हुए अश्वारोही दम्पति की शोभा मन को रोमांचित कर देती है। दाम्पत्य प्रणय का प्रस्फुटन कर्मक्षेत्र में ही होता है जहाँ युगल हृदय एक दूसरे को सहयोग देते हुए परस्पर श्रमसिक्त मुख देखते चलते हैं। होता यह है कि कोई योद्धा पृथ्वीराज के गले में कमान डालकर खींच लेना चाहता है कि—

गुन कट्टिय रमनिय सुवर, डसनह पंग कुंआरि।
असि वर कर प्रथिराज हनि, सूर हथ्थ नर वारि॥

इसके बाद—

देषि संजोगिय पिय सुबल, स्रम जल बूंद वदन्न।
रति पति अहित पवित्र सुप, जालि प्रजालि मरन्न॥

इन सुखमय प्रसंगों के बाद रासो में दुखमय स्थल आते हैं। इतने सुख और विलास के बाद करुण प्रसंगों का आगमन उनको और

भी मार्मिक बना देता है। पृथ्वीराज ग़ोरी से लोहा लेने के लिए प्रस्थान करता है। यों तो ग़ोरी से पहले भी उसकी कई बार मुठभेड़ हो चुकी है परंतु इस बार ऐसा प्रतीत हुआ जैसे अब फिर मिलना न होगा। अभी किसी रानी के सामने पृथ्वीराज के दीर्घ-वियोग का अवसर आया ही न था। यह वियोग वर्णन का पहला अवसर है और यहाँ रासोकार की सहृदयता देखने योग्य है—

वही रत्ति पावस्स वही मघवान धनुष्पं।
वही चपल चमकंत वही बग्गपंत निरप्पं॥
वही घटा घन घोर वही पप्पीह मोर सुर।
वही जमीं असमान, वही रवि ससि निसि वासुर॥
वेई आवास जुग्गिन पुरह, वेई सहचरि मंडलिय।
संजोगि पयंपति कंत बिन, मुहि न कछु लागत रलिय॥

भावों के आवेग में सभी अलंकार बह जाते हैं और भाषा ही भावों का साक्षात् रूप धारण कर लेती है। इन पंक्तियों को देखकर सहसा विश्वास नहीं होता कि इनका रचयिता पूर्व प्रसंगों में उपमा-उत्प्रेक्षा आदि की राशि उडेलने वाला कविचंद ही है। इसी प्रकार पृथ्वीराज के बंदी बनाये जाने का समाचार मिलने पर सहगामिनी संयोगिता का आर्त्त क्रंदन तथा वैधव्य-रूप हृदयविदारक है।

उधर ग़ज़नी के कैदख़ाने में पड़े हुए अंधे महाराज पृथ्वीराज का पश्चाताप और भी करुण है। राजा अपने इस पतन के कारणों का मन ही मन विश्लेपण करता है और पाता है कि यह सब उसके कुकृत्यों और अत्याचारों का परिणाम है। उसकी आँखों के सामने एक-एककर सभी अत्याचार साकार हो उठते हैं। फिर उसे अपने अतीत वैभव तथा सुखोपभोग का स्मरण हो आता है। अभाव की पटभूमि में वे सुखमय दिन बड़े मोहक प्रतीत होने हैं, फिर उस मोहक पटभूमि के विरोध में कैद की दारुण दशा और भी मार्मिक हो उठी है। रासोकार ने महाराज के इस मानसिक द्वन्द्व का अत्यंत सफल अंकन किया है—

राजा सोचता है—

सही फूल की फूलनी नाहि नाथं। तुरत्तं तरायौ जु मालीन हाथं॥
नहीं सूर सामंत परिवार देसं। नहीं गज्ज बाजं भंडारं निलेसं॥

नहीं पंगजा प्रान ते अत्ति प्यारी। नहीं गोप महिला इतं चित्रसारी॥
नहीं मृगनयनी चरन्नं तलासै। नहीं कूक कोका सबदं उलासै॥
नहीं पातुरं चातुरं नृत्यकारी। नहीं ताल संगीत आलापचारी॥

और अंत में—

नहीं चोम मौजं करूँ लष्प दानं। नहीं भट्ट चंदं विरदं वषानं॥

उस समय तो नहीं लेकिन कुछ दिनों बाद चंद अवश्य उसके पास आ पहुँचता है और फिर एक बार विरुदावली सुनाता है। लेकिन इस बार की विरुदावली कुछ और है। वह अंधे तथा हताश योद्धा के हृदय से कई आशा का संचार करती है; वह मुक्ति का संदेश देती है; वह कार्य-विशेष के लिए तैयार करती है। लेकिन वह प्रसंग कितना मार्मिक है जब अंधा नरेश अपने प्रिय सहचर चंद का स्वर सुनता है। पहले वह पहचान नहीं पाता। फिर थोड़ी देर बाद स्वर के सहारे पहचान लेता है। उल्लास होता है। लेकिन फिर न जाने कितने भाव मन में उठते हैं। शायद यह कि आज इस विरुद् के उपलक्ष में पहले की तरह पुरस्कार देने के लिए मेरे पास कुछ नहीं है; शायद यह कि आज यह विरुद् व्यंग की तरह चुभता है; शायद यह कि अपना यह विपन्न रूप चंद को दिखाने के लिए मैं क्यों जीवित हूँ; शायद यह कि डूबते को तिनके का सहारा तो मिला और बहुत दिनों के बाद परदेश में स्वजन का स्वर सुनने का सौभाग्य प्राप्त हुआ है। पृथ्वीराज कुछ नहीं बोलता, केवल—

नेह नीर रुकि कंठ कवि, नैंन झलभ्भल पानि।
बिन बोलत बोल्यो नृपति, चंद चिंति बर बानि॥

ऐसे शोकपर्यवसायी महाकाव्य का अंत भी भारतीय कवि ने सुखांत से उद्भासित कर दिया क्योंकि धरणी का म्लेच्छ से उद्धार होना राजशोक से अधिक आनंदप्रद है।

मरन चंद बरदाइ, राज पुनि सुनिग साहि हनि।
पुहपंजलि असमान, सीस छोड़ी सुदेव तनि॥
मेछ अवद्धित धरनि, धरनि सब तीय सोह सिग।
तिनहि तिनहि संजोति, जोति जोतिहि संपातिग॥
रासो असंभ नव रस सरस, चंद छंद किय अमिय सम।
शृंगार वीर करुना बिभछ, भय अद्भुत्त हसंत सम॥

ऐसे चरित काव्य के विषय में इस अंतिम उल्लाला की गर्वोक्ति उचित ही है। युद्ध के प्रसंगों का उदाहृत करना उतना आवश्यक नहीं क्योंकि वीर काव्य के रूप में तो इसकी ख्याति है ही।

ऐसे काव्य में यदि यदा-कदा ऐतिहासिक तथ्यों का उल्लंघन हो गया हो तो उससे कुछ नहीं बिगड़ता; क्योंकि इसमें तथ्यों से भी बड़े मानवीय सत्यों की अवहेलना नहीं की गई है; बल्कि सच तो यह है कि कवि ने मानवीय सत्य की रक्षा के लिए ही सुविधानुसार ऐतिहासिक तथ्यों से इधर-उधर हटकर अपनी कल्पना शक्ति का जौहर दिखाया है।

अभिव्यक्ति-कौशल—ऐसी भाव-प्रगल्भता कुशल कवि से ही संभव है। रासो के शिल्प सौन्दर्य पर विचार करते हुए सबसे पहले जिस बात की ओर ध्यान जाता है, वह यह है कि इसके कवि को काव्य की पूर्व परंपरा का अद्भुत ज्ञान था और साथ ही भावावेग के अभिनव उत्थान में पूर्ववर्ती काव्य-परंपरा को ढालने की क्षमता भी थी। ह्रास-युग की उस कृति में इससे अधिक शिल्प-सौन्दर्य की शक्ति संभव भी न थी। उस युग के अन्य कुशल कवियों की भाँति रासोकार ने भी पूर्व कवियों की कही हुई उक्तियों में अपनी सूझ के अनुसार थोड़ी-बहुत विशेषता झलकाने में अक्सर जौहर दिखाया है और यही उस युग का सबसे बड़ा बहुप्रशंसित काव्य कौशल था। शशिव्रता की 'नयन-श्रवण वार्ता' में चंद की यह प्रवृत्ति देखी जा सकती है। इसी प्रकार नख-शिख वर्णन में भी काव्य रूढ़ियों का पुनर्मार्जन लक्षित होता है। इस प्रवृत्ति से जायसी, सूर और तुलसी जैसे रससिद्ध कवि भी मुक्त न थे। प्रायः उन कवियों की विशेषता मानवीय मनोभावों की सहज परख में लक्षित हुई है और ऐसे प्रसंगों में रासोकार भी ऊँचे उठ जाता है।

रासो के कवि की अभिव्यक्ति-क्षमता सबसे अधिक भाषा पर अधिकार के रूप में देखी जा सकती है। कवि जैसे चाहता है शब्दों का प्रवाह मोड़ देता है; हर शब्द जैसे उसके इशारे पर नाचता चलता है और भावावेग में धाराप्रवाह शब्दों को देखकर ऐसा प्रतीत होता है जैसे इस कवि को शब्द की कमी खटकती ही नहीं। निश्चय ही, चंद बिहारी की भाँति एक-एक शब्द को बहुत तराश खरादकर, बहुत सोच

विचार के साथ प्रयोग करने वाले जड़ाऊ या शिल्पियों में से न थे। वे मस्तमौला की तरह शब्दों का बेलाग प्रयोग करते थे। इसीलिए जो विद्वान 'नपा-तुलापन', 'अत्यंत व्यवस्था' आदि के अनुसार कवि की भाषा-शक्ति परखते हैं वे चंद को पसंद नहीं कर सकते; वे तो विहारी पर ही बलिहारी होते हैं। किन्तु जिन्हें भावनुकूल भाषा के मन्द्र और तीव्र सौन्दर्य की चाट है वे चंद के पास बार-बार मड़रायेंगे।

छंद भाषा की गति तथा भंगिमा है। इसलिए चंद जैसा भाषा पर अचूक अधिकार रखने वाले कवि की छंद-भंगी स्वाभाविक है। वस्तुतः हिंदी में चंद को छंदों का राजा कहा जा सकता है। भाव-भंगिमा के साथ-साथ दनादन भाषा नये-नये छंदों की गति धारण करती चलती है और विशेषता यह कि इस बल खाती हुई नदी में बहते हुए चित्त को कोई मोड़ नहीं खटकता। छंद परिवर्तन के प्रवाह में सहज आत्म विस्मृति का ऐसा सुख अन्यत्र कहीं नहीं मिलता। रासो एक ही साथ संस्कृत प्राकृत तथा अपभ्रंश की प्राचीन छंद परंपरा के पुनरुज्जीवन तथा हिंदी के नूतन छंद-संगीत के सूत्रपात की संधि वेला है। इस तमाम छंद-संघटन में भी रासो का अपना हिंदी काव्योचित संगीत सर्वोपरि है। इसीलिए तो 'सरोज' के रचयिता श्री शिव सिंह सेंगर ने चंद को छप्पयों का राजा कहा है। विभिन्न यतियों के छप्पय की जो सुकर भंगिमा छंद ने दिखलाई है वह दुर्लभ है।

इस प्रकार चंद ने अनूठे अभिव्यक्ति-कौशल का परिचय दिया है।

रासो और युग की वास्तविकता—चाहे पृथ्वीराज रासो की रचना आठ दश वर्षों में एक कवि द्वारा हुई हो चाहे शताब्दियों में अनेक कवियों द्वारा, उसमें प्रतिबिंबित वास्तविकता में कोई महत्त्वपूर्ण स्तर-भेद लक्षित नहीं होता। जिस प्रकार कबीर जायसी सूर तुलसी आदि की रचनाओं में चौदहवीं से सोलहवीं शताब्दी का सांस्कृतिक पुनर्जागरण प्रतिबिम्बित हुआ है और सामान्य जन समूह की आशाओं आकांक्षाओं का उभार लक्षित होता है, उस तरह पृथ्वीराज रासो में नहीं मिलता। वस्तुतः वह पृथ्वीराज तथा उससे संबंधित राजाओं और सामंतों के प्रणय तथा युद्ध विषयक संबंधों के माध्यम से उस युग के ह्रासोन्मुख उपरले समुदाय की वास्तविकता प्रकट करता है। निस्सन्देह चंद अपने चरित नायक पृथ्वीराज का सखा था और

पृथ्वीराज के प्रति उसका पक्षपात भी स्वाभाविक था। इस सहानुभूति के बावजूद उसके अनजाने पृथ्वीराज तथा उसके समाज की कमज़ोरियाँ उभर गई हैं। संभवतः इसी सहानुभूति के कारण रासो में उस युग की सचाई अपने नग्न रूप में व्यक्त हो सकी है।

जब गोरी के हमले की खबर पृथ्वीराज की प्रजा में पहुँचती है तो वह अपने को अरक्षित तथा असहाय अनुभव करती हुई अंत में रनिवास-लुब्ध राजा की शरण जाने की मंत्रणा करती है उस समय चंद की इन पंक्तियों में 'रतिवंतौ राजन' का संकेत ध्यान देने योग्य है—

मिलिय सकल एकंत महाजन। किम बुज्झैं रतिवंतौ राजन।

मृगया रत और केलि-विलासी राजा के जीवन का उद्‌घाटन करने के साथ ही परस्पर घातक रजपूती शान की ओर भी कन्ह के चप-बंधन कथानक से संकेत किया है। चंद ने इस सचाई का यथातथ अंकन ही नहीं किया है बल्कि पृथ्वीराज के पराभव तथा क़ैद वाले पश्चताप के द्वारा अनजाने ही उस ह्रास युगीन भावना के घातक परिणाम की ओर भी ध्यान दिलाया है।

इस प्रकार पृथ्वीराज रासो संत-भक्ति काव्य की भाँति सामान्य जन-जागरण की उत्थान शील भावना का प्रतिबिंब न होते हुए भी ह्रासोन्मुखी सामंती शक्तियों के अंतर्विरोध का चित्रण करने वाला महाकाव्य है। इसीलिए इसकी वीर भावना में न तो महाभारत का सा उदात्त शौर्य और पराक्रम है, और न इसकी शृङ्गार भावना में कालिदास की सी मुग्ध तन्मय भावाकुलता। ह्रासयुग का प्रभाव रासो की वीरता और शृङ्गार दोनों भावनाओं पर पड़ा।

इसलिए रासो की महिमा वीरता और शृङ्गार के उदात्त तथा उज्ज्वल चित्रण में उतनी नहीं जितनी अपने युग की वास्तविक वीरता तथा प्रेम भावना को प्रतिबिम्बित करने में है। कहना न होगा कि इस कार्य में चंद ने जितने व्यापक क्षेत्र को समेटा है वह संत-भक्ति काव्य को छोड़कर अन्यत्र कहीं नहीं मिलता। रासो मानव जीवन की विविध परिस्थितियों और भावदशाओं का महासागर है। यही वह विशेषता है जिसने ह्रास-युग के सभी काव्यों में रासो को सर्वोपरि स्थान दिया

है। निश्चय ही यह उस युग की सांस्कृतिक परिस्थितियों तथा पूर्व परंपराओं का बृहद् कोश है और है मध्ययुगीन भारतीय समाज का एक काव्यात्मक इतिहास।

पृथ्वीराज रासो की भाषा

राजस्थान की अनुश्रुति या परंपरा के अनुसार पृथ्वीराज रासो की रचना पिंगल (ब्रज भाषा) में हुई। डा० उदयनारायण तिवारी के अनुसार लंदन की रायल एशियाटिक सोसायटी में सुरक्षित पृथ्वीराज रासो की एक हस्तलिखित प्रति के ऊपर फारसी में लिखा है कि 'चंदवरदायी लिखित *पिंगल भाषा* में पृथुराज का इतिहास'।[1] यद्यपि तिवारी जी ने उस प्रति के लिपि-काल आदि के विषय में कोई सूचना नहीं दी, फिर भी वहाँ की प्रतियों के बारे में जो विवरण प्राप्त हैं उनको देखते हुए कहा जा सकता है कि यह अनुश्रुति १७ वीं १८ वीं शताब्दी से पूर्व की ही है। इस अनुश्रुति की पुष्टि आधुनिक युग के फ्रांसीसी विद्वान तासी ने १८३९ ई० में की और डा० तिवारी के अनुसार उसने लिखा है कि रासो की रचना कन्नौजी बोली (ब्रज के अंतर्गत) में हुई है।[2] उसी समय, बल्कि उससे दो वर्ष पहले ग्राउज़ ने पृथ्वीराज रासो की भाषा का विस्तृत अध्ययन लंदन की रा० ए० सो० जर्नल में प्रकाशित करवाया जिसका सारांश देते हुए डा० धीरेन्द्र वर्मा ने लिखा है "ग्राउज़ की दी हुई रासो के व्याकरण की रूपरेखा से यह स्पष्ट हो जाता है कि जहाँ तक व्याकरण के ढाँचे का प्रश्न है, रासो की भाषा प्रधानतया १६वीं शताब्दी में साहित्य के क्षेत्र में प्रयुक्त ब्रजभाषा है, न डिंगल अथवा प्राचीन साहित्यिक मारवाड़ी और न अपभ्रंश। किन्तु शब्द समूह में अपभ्रंशाभास और डिंगल रूपों का प्रयोग रासो में बहुत हुआ है। यह एक शैलीमात्र थी जिसका प्रयोग वीररस संबंधी स्थलों पर अनेक समकालीन कवियों ने किया है। जैसे केशव, तुलसी, भूषण, चन्द्रशेखर आदि। अंतर इतना ही है कि युद्ध-प्रधान ग्रंथ होने के कारण ही रासो में इसका प्रयोग आद्योपान्त और अधिक मात्रा में

---

[1] वीर काव्य, सं० २००५, पृ० ६२

[2] वही, पृ० १५४

आचार्य रामचन्द्र शुक्ल जैसे विद्वानों ने झुँझला कर कहा है कि 'न तो यह भाषा के इतिहास के और न साहित्य के जिज्ञासुओं के ही काम का है'।[1] इस झुँझलाहट में इतना तथ्य तो है ही कि वैज्ञानिक ढंग से संपादित न होने के कारण लिपिकार की प्रमाद-जनित अनेक त्रुटियाँ रासो के पाठक को क़दम क़दम पर परेशानी में डालती हैं लेकिन जहाँ तक 'व्याकरण की व्यवस्था' का प्रश्न है, ध्यान से देखने पर वह मिलेगी। हाँ, इतना तो ध्यान रखना ही चाहिए कि यह काव्य है, व्याकरण-ग्रंथ नहीं। जब रससिद्ध कवि गो० तुलसीदास के धर्मग्रंथ की तरह पूज्य तथा सुरक्षित 'रामचरित मानस' में भी एक ही शब्द के अनेक रूप मिलते हैं, तो चंद बलद्दिय भाट कृत तथा मौखिक परंपरा में रूपान्तरित इस राजप्रशस्ति में शब्द रूपों की किंचित् अव्यवस्था स्वाभाविक ही है। इतने पर भी वह 'भाषा के इतिहास के काम का' है या नहीं, यह तो अध्ययन के बाद ही कहा जा सकता है।

भाषा-संबंधी कतिपय विशेषताएँ

शब्दावली—रासो के शब्दकोश में संस्कृत तत्सम, अपभ्रंश-तत्सम, अपभ्रंश-तद्भव (आधुनिक भारतीय आर्यभाषा में प्रचलित अपभ्रंश के भी घिसे शब्द रूप), अनुकरणात्मक और देशी तथा अरबी फ़ारसी के तत्सम और तद्भव शब्द प्रायः मिलते हैं। इनके अतिरिक्त रासो में कुछ विशेष ढंग से शब्दों में ध्वनि-परिवर्तन कर दिया गया है। जैसे—

१. छंदोऽनुरोध से शब्दान्तर्गत तथा शब्दान्त में अनुस्वार द्वारा लघु व्यंजन को गुरु करना; जैसे 'कनक' का 'कनंक' और 'घरी सत्त सत्तं उग्यौ चंद नानं।'

शब्दांत में अनुस्वार-प्रयोग संस्कृत-रूप देने के लिये नहीं बल्कि छंदःपूर्ति के लिए मात्रावृद्धि का एक ढंग है जैसा कि तुलसीदास ने भी किया है 'चंद्रहास हरु मम परितापं। रघुपति विरह अनल संजातं॥' ये वस्तुतः 'परितापा' और 'संजाता' के लिए प्रयुक्त शब्द हैं।

---

[1] हिंदी साहित्य का इतिहास, पाँचवाँ संस्करण पृ० ४४

इसलिये रासो की विशेषता शब्दान्तर्गत परिवर्तन में ही समझना चाहिए।

२. छंदःपूर्ति के लिए व्यंजन-द्वित्व—(क) एक ही शब्द में, जैसे—गत्ति, मानव्व, निकट्ट, मुरल्ली, निरप्पत
(ख) परवर्ती शब्द में—दिसद्दिसि, हयग्गय।

परवर्ती शब्द का आदि व्यंजन-द्वित्व 'स्वरपात' की सूचना देता है।

३. छंदःपूर्ति के लिये दीर्घीकरण—निसान का 'नीसान'

४. छंदःपूर्ति के लिये स्वार्थिक प्रत्यय—य ∠ —क का आगम— मनोहर का 'मनोहरयं'

५. छंदःपूर्ति के लिये स्वर-भक्ति के साथ ही परवर्ती व्यंजन-द्वित्व— सामान्यतः धर्म7 धरम होता है पर रासो में धरम्म; सप्त 7 सपत्त

६. छंदःपूर्ति के लिये रेफ का मनमाना स्थान-परिवर्तन—भ्रम, भ्रम्म; म्रजाद, म्रज्जाद

७. संयुक्त व्यंजन का स्थानापन्न अनुस्वार-विधान—'नच्चति' से नंचति, 'चमक्कि' से 'चमंकि'।

संक्षेप में, व्यंजन-द्वित्व अनुस्वार-विधान तथा रेफ-विपर्यय की ये प्रवृत्तियाँ थोड़ी बहुत मात्रा में अपभ्रंशकाल से ही चली आ रही थीं जिन्हें रासोकार ने स्वच्छंद भाव से बहुतायत के साथ अपनाया।

पद-रचना—मुख्यतः व्रजभाषा की ही है। कोई एक छप्पय लेकर उसके पदों का विश्लेषण करके देखा जा सकता है। सभी रूपान्तरों में प्राप्त तथा ऐतिहासिक मुहर लगे हुए 'एक वान पहुमी नरेश कैमासह मुक्यौ' के विश्लेषण से भी इसकी पुष्टि होगी। यहाँ ध्यान देने योग्य बात यह है कि रासो में राजस्थानी की षष्ठी विभक्ति का चिह्न 'रा' कहीं नहीं मिलता। इसी तरह और भी कई बातें हैं जो इसे राजस्थानी भाषा से अलग करती हैं।

अंकूर = (सं०) अंकुर

अंषि }
अंषी } (सं०) अक्षि—आँख

अंचं = (पृ० ६६—रोमयं अंचं) रोमाञ्च हुआ

अंछनि = (सं० अक्षि) आँखों में

अंजर = (सं० उज्ज्वल) उज्ज्वल

अंदू = (पृ० १४३) ? बंधन ?

अंबं = आम

अंबंवरं = सुवस्त्र

अंप्प = (सं० आत्मन्), प्रा० अप्पा—आप (स्वयं)

अंबजा = (सं० अंबुज)—कमल

अंबाह = आम का

अंभ = (सं०) जल

अंमर < अम्बर

अंमि = (१) अमृत (२) आम का छोटा फल

अंसपति = (१) सं० अंशपति अंशावतार (२) अश्वपति

अकस = (१) ऐंठ के साथ (२) ईर्ष्या (३) अकस्मात्

अकित्ती = अकीर्ति

अखि = कहकर, कहा

अख्यिय = (१) आखों से (अप अख्यिय = अपनी आँखों से) (२) कहा

अख्खी = (१) कहा, (२) आँख

अखार्‍यो = ललकारा, अखाड़ने लगा, क्रोधपूर्वक कहने लगा।

अगनिता = अगणित

अगाद = अगाध

अगिवान = अगुवान

अग्गा = अग्र

अग्गर = अधिक, अग्रणी (तु० अग्गलौ-रा० रू० १६)

अग्गसारि = आगे के अनुसार

अग्यौन = अगुवान

अचानं = एकाएक अचानक

अचिज्ज = आश्चर्य

अच्छरि = अप्सरा

अच्छरिअं < आश्चर्य

अछग = (१) अतृप्त, (२) हुए

अच्छ = (१) अच्छा, (२) अक्षि; आँख

अच्छिय = (१) हुआ (सं० अस्—प्रा० अच्छ—), (२) अच्छा

अच्छिर = अक्षर

अजपह = व्याकुलता पूर्वक, (संभवतः अलपह = थोड़ा पृ०१०६) अच्छा पाठ है

अज्ज < अद्य = आज

अज्जान < आजानु = जंघे तक

अठार = अट्ठारह

अठी = सैनिक

अडंड = अदंड्य

अणछेह = अपार

अत्त < आप्त, प्राप्त

अथार<अस्तार = सिमटा हुआ, न फैला हुआ
अदब्ब<आदान
अद्ध<अर्ध
अद्धय = अध्ययन किया, पढ़ा
अधारित = आधार पर स्थित
अधारी = धारण किया
अध्यैंन = अध्ययन
अनि (१) सेना, (२) अन्या, दूसरी
अनेही<अस्नेही
अनोट = अनवट, पैर के अंगूठे में पहना जाने वाला आभूषण
अनीह = निठुर, निर्दय
अपअष्षिय = अपनी आंखों से ?
अपकानन = अपनेकानों से ?
अपच्छरी = अप्सरा
अपमंगल = अमंगल
अपूब्ब = अपूर्व
अप्परस<आत्मरस
अप्प = (१) आप ही (सं० आत्मम्) (२)<अल्प
अप्पन (१)<अर्पण = देना; (२)<आत्मन् = अपना
अप्पान = अपनापन
अप्पी = अर्पित किया
अपुट्ठि<आपृष्ठ = पश्च, पीछे
अप्पौ = अर्पण कर
अबधारी = तेज धारण करने वाला ? आबू को धारण करने वाला ?
अबर = अपर, दूसरा
अबरं = आकाश में
अबास = आवास
अब्बूवनी = आबू का राजा
अब्बवै = (सं० अर्बुदपति) = आबू का राजा
अब्धा<अविधा = नियमों से स्वतंत्र
अबीह = निर्दय (तुल० राजरूपक पृ० ३६, २४६)
अब्भ<अभ्र = बादल
अभ्रपटी = आकाश
अभंग = भंगिमा से, ढंग से
अभानं = आकाश से
अभिग्गिय = अभग्न रूप से
अमग्गी<अमार्गी = टेढ़ी
अमंत<अमंत्र, = राय या आज्ञा न माननेवाल
अमग्ग = <अमार्ग
अमीवर = अमृत
अमुभक्के = अंबुधि में, समुद्र ?
अमुंद्ध = <मुग्ध = मूर्ख, मुग्धा
अयान = अज्ञानी
अर = शीघ्रता
अरक = (१) (सं० अर्क) सूर्य,
अरषि<हर्षित = रोमांचित
अरदास<अर्जदाश्त (फ़ा०) प्रार्थना
अराँवँ = छोटी तोपें
अरितं = आ गया है
अरि-सीम - शत्रु की मर्यादा, सीमा
अरुट्ठ = रुष्ट
अरोस, अरोह = न दबने वाला (दे० राजरूपक पृ० ३१)
अलग्गनि = अलग, अलग

अलंकिय = अलंकृत
अलल्ल = घोड़ा
अलीन = भौंरों में
अलियल = अलिकुल, भ्रमरगण
अलुद्ध = अलुब्ध
अल्लोल = लोल, चंचल
अवग्गी < अवल्गित = वाग न मानने वाला ?
अवर = अपर, और
अवाह = अप्रहरणीय
अवन्निय = अवनी में, पृथ्वी में
अवरिय = आवृत
अवास = आवास
अविधानं < अभिधान = कोश
असदग्गा = असवार ?
असपति = अश्वपति ?
असहां = शत्रुओं पर (तु० राजरूपक, पृ० ३८१)
असंधं = संधिहीन होकर, टूट-टूट कर
असार < अश्ववार = असवार
असुत्त (१) शुक्ति ? (२) असुत
अस्स < अश्व
अहप्पति = अहिपति, शेषनाग
अहुट्टिय = लोटने लगे
आएति < आयत्ति ?
आक्रित = आकृति
आकूत < आकूति = उत्साह
आपेवनं < आसेवनं = सेवन
आगर < आकर = खान
असिष्य = आशीष, आशीर्वाद
आहंन = दिन में

इंषी = } इंछिनी रानी
इंछी = }
इंद = (१) इंद्र, (२) इंदु, चंद्र
इंदुव रंग = इंदीवर (नील कमल) रंग
इष्प < इषु = वाण
इष्यौ = देखा
इछ = इच्छा
इछु = इच्छुक
इम = इस प्रकार
इला = पृथ्वी
इश्व = ईश्वर, शिव
उअर = उर, हृदय
उकिर = अंकुरित हुआ
उकती = उक्ति
उग्रंत = उग्र
उरगं = उरग, साँप
उग्गार < उद्गार = उगलना
उचिष्टी < उच्छिष्ट
उछ्छंत = उछलता हुआ
उछार = उछाल
उच्छाह < उत्साह
उझार < उत् + ज्वाल = जलती हुई (ज्वाला)
उट्टे < उत्ते = वहाँ
उडंदं = उड़न्त = उड़ते हुए ?
उतर्क < अतर्क
उतथ्थ = उतंथ = जवान
उतंगं = उत्तुंग, ऊंचा
उत्तंकिय < उत् + तंकित = आतंकित
उत्तमंग = सिर

उद्दयौ = उदित हुआ
उद्दार,उद्दारयं = उदार
उद्दिग = उदय हुआ
उद्धरौ = उद्धार किया
उद्यौ = उदय हुआ
उधतद्दि = उधर (परलोक) गए ?
उनमानिय<अनुमानित
उनंगी = (१)झुकी हुई, (२) नंगी-बनी
उपट्टिय = उभर गई
उपसम्म<उपशमन
उप्पन्न<उत्पन्न
उप्पम = उपमा
उपाइयं = (सं०) उत्पादित
उपाउ = उपाय करो
उब्भरे = उभड़े
उब्भौ = उभय, दोनों
उमद्दयं = उन्मद हुआ
उमन्नें = उन्मन भाव से
उमह्यौय = उमाह (उमंग—)—प्राप्त
उम्मे = उमंग
उर्भं = पड़े हुए
उरद्धर = हृदय को धारण करनेवाले
या ऊर्ध्व से आए हुए
उरह = उर का, हृदय का
उल्लाली = (१) उत्+लालित =
उल्लालित किया, पाला-पोसा
(२) उल्लालाहल से लिया (?)
हेमचन्द्र (८-४-३६) के अनुसार
उत् पूर्वक नम धातु के लिए 'उन्नम'
आता है उसका एक आदेश
'उल्लाल' होता है अर्थात्
उल्लालित का अर्थ हुआ
उन्नमित, उन्नत किया हुआ।
उवद्द = बोलता था
उप्पया<उत्त्क्षिप्त
उस्ससे = उच्छ्वास
ऊक = आगे, मुंह के बल (सं० उत्क)
ऊमंती = उमड़ती हुई
एकत्तौ = एकत्र
एकथ्थोय } एकस्थ, एक ही जगह
एकत्थौ } स्थित होकर
एम = इस प्रकार
ऐराक = घोड़ा
ओड्डन = ढाल, जिससे कोई चीज़ ओड़
या रोक ली जाय
ओपम < उपमा
ओप=शोभा, कान्ति
ओड्डन(१) ढाल (२) आर्द्रीभूत
कंक = (१) कंक पक्षी के परवाला बाण
(२)>कंकट = कवच(पृ० ११८)
(३) मृत्यु, काल (पृ० १०६)
कंदिय<कांक्षित = आकांक्षा की, ताका;
सिर कंपिय = सिर को देखा
कंतार<कान्तार=वन
कंति<कान्ता
कंद्रप<कंदर्प = कामदेव
कंधांइ = कंधे पर
कंत<कान्त = प्रिय
कंपी = कल्पित किया, रचा [कप<कल्प्]
(२) कांपी [कंप<कम्प्]
कंमेम = पृथ्वीराज (?)
कंमर = कमर

कंसुभ = कुसुंभी रंग का

कंदे = उन्मूलन कारिणी ? (अघकंदे = पाप विनाशिनी)

कक्का = काका, पिता, गुरुजन

कप्पिय < कांक्षित

कप्पंतर < कल्पान्तर = काँख में

कग्ग = काग

कग्गद, कग्गर } < कागद, काग़ज, चिट्ठी

कच्छी = कच्छ देश का घोड़ा

कज्जइ = के लिये

कज्जं < कार्य

कट्टिय = काट दिया

कटाप्पय < कटाक्षित = कटाक्ष किया

कट्टी = लज्जिता, हतभाग्या

कठज़ोनि = कठरे, कठोते

कठ्ठौ = छोड़ दो

कट्ठ < काष्ठ = चंदन काष्ठ

कठ्ठियां = काष्ठा, सीमा

कड्ढ < कट्ठ < काष्ठ = चंदन काष्ठ

कढ्ढाइं = कढ़ाया जायगा [चच्छ कढ्ढाइं = आंखें काढ़ ली जायँगी]

कढ्यौ = कढ़ा, निकला

कत्तरी < कर्तरी = कैंची, छुरा (दुःखं करी कर्तरी = दुख को कर्तन करनेवाली)

...थ्थ < कथा

...दव < कर्दम = कीचड़

...न < कर्ण (पृ० ३३)

कनय < कणिक = कनिक, गेंहू का आटा या गेहूँ

कनवज्ज < कन्नौज, कान्यकुब्ज

कनव्रत = कण चुनने का व्रत

कन्ना = (कछु + ना ?) कुछ नहीं ?

कन्ह = सरदार कन्ह

कन्हह = कन्ह का

कप्परिय = कापड़िये

कमध ∠ कबंध

कमधज्ज, कमधुज्ज, कमधपुंज = जयचंद

कमंध, कमद्धं } (१) < कबंध = बिना सिर का धड़ (२) < कमंद (फा०) = फंदा

कमांमय = कमान युक्त

कमोदिन = कुमुदिनी

कंमोद = कुमुद

करक्कै = कड़कता है।

करिकरस्तुद्दीर उद्दारयं = हाथी का सूड़, उदार तुद्दीर (मोटी तोंद)

करकंसी = कण

करंम = कर्म

करार = कगार

करिग = किया

करह = ऊंट

करूर = क्रूर, निर्दय

कलपंत = कल्पान्त

कलभ = हाथी का बच्चा, ऊंट

कल्हार = कमल

कलिये = कलित करना चाहिए, गिनना चाहिए (बल कालियै अवान)

कलै = कलित करता है

कसुंभ = कुसुंभी रंग

कसाये = कषायित

कहर<कह् = बला, आफत, पराक्रम [केहरि-कहर = सिंह-पराक्रम]

कहल = दे० कहर [कद्दव कहल = कर्दम का प्राबल्य]

काइथ<कायस्थ

कागर = (१) काग़ज़, पत्र (२) पंख

कांन = कृष्ण, कन्ह, कान्ह

कायक<कायिक = शरीर संबंधी

कलिय = कली (अंबुज-कल्लिय = कमल की कली)

कालंकनिय—(पं० पृ० ६) कालं या कालन से कालिंजर देश का मतलब जान पड़ता है। कनिय 'क्रन्दित' का रूप। इस प्रकार 'कन्नौज देश, गज्जन, पट्टन और कालिंजर को हिला डाला है ये पृथ्वीराज के जन्म से रो उठे—ऐसा अर्थ जान पड़ता है। परवर्ती पद्य से भी यही बात समर्थित होती है।

कानु [illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

किलाव<कलाप, (कंचन-किलाव = सुवर्ण कलाप)

किलोर = किलोल<कल्लोल

किवारं } <कपाट
किवाट }

क्रीलइ = क्रीड़ा करता है

क्रीला<क्रीड़ा

कुटवाल<कोट्टपाल = कोतवाल

कुठ्ठे = कुंठित हुए

कुप्पी = कुपित हुए

कुंभह = कुंभ के

कुरपि = कुरोप होकर, चिढ़कर?

कुलह = कुलही, आँख का ढक्कन

कुलंगन = एक प्रकार के लड़ाके पक्षी, लड़नेवाले मुर्गे

कुलाह = (१) टोप, (२) एक जाति का घोड़ा

कुहु = कुही, एक तरह का घोड़ा (पृ० २०)

कुहू = अमावस्या

कुहौकुहु = कोकिल की कुहू कुहू आवाज

कुइ कालं = कौन काल बना है।

[illegible]<[illegible], कौन

कूरंभ = एक सरदार

कूर = (१) क्रोध, (२) नीच, निठुर (३) [illegible]

केन = [illegible]

केवन = एक सरदार का नाम

केमास<[illegible] — कैमास मंत्री

कोइ = [illegible]

कोदर = [illegible]

कोटकं<कोटिकं, करोड़ों

कोत्तर<कोटर

कोद्दह=ओर, कोना

कोर=किनारा

कोवंडं<कोदंड=धनुष

कोहं=क्रोध

कौतिग, कौतिग्ग <कौतुक

क्रक<कर्क, चौथी राशि

क्रत (१) कृत=किया हुआ (२) क्रतु =यज्ञ

क्रन्न (१)<कर्ण=कान (२) करण

क्रत्य<कृत्य

क्रद्दमं<कर्दम=कीचड़ (२) संकट,

क्रमनारिय<कर्म+नारिय=नारी का कर्म

क्रयन=क्रय करना

क्रम्यौ=आक्रमण किया

पंग<खड्ग

पंड=खंड, नो खंड

पंडल—खंड धारण करने वाला या खंडित

पंचौ=खचित किया गया

पग्ग<खड्ग

खग्ग-पानं=खड्ग का (किसी के रक्त का) पी जाना

पचै=खिचे

पछै=उलझता है (?)

पज्जुरी=बिच्छू (?) [पृ० २९ पर पज्जुरी के स्थान पर खिज्जुरी पाठ उत्तम होता]

पटंग=पिल पड़े (?) खटखटाने लगे, तलवार से युद्ध करने लगे

पढय (पृ० ५ पर पढ़य अशुद्ध छपा है) 'पढय' होना चाहिए। पढ़य-पढ़े

पत्ती<क्षत्रिय

खनिय=पृ० ११७ पर 'खनिय' छप गया है जो 'रवनिय' होता तो अच्छा होता। रवनिय अर्थात् रमण कीजिए। वस्तुतः रासो में 'ख' के स्थान पर्व सर्वत्र 'प' दिया गया है। यहाँ का 'ख' वस्तुतः 'ख' होना चाहिए

खनै<खण्डे ?

पब्बरि<ख़ब्बर

पयकार<क्षयकार=क्षय करनेवाला

पय काल<क्षय काल=प्रलय काल

परह=पूरा-पूरा

परादि=खराद कर

परिग<खटक गया

पल<खल, (१) दुष्ट (२) खलिहान

पलक<खलक=जीवसमष्टि, संसार, लोकसमूह

पल—हलिय=खरभर पड़ गया

पवास<ख़वास (अ०) ख़ास ख़िदमतगार, नाई

पह, पहं खेह=धूल

पानं=ख़ान

पावास=<ख़वास=ख़ास ख़िदमतगार, साधारणतः नाई

प्याल<ख़्याल

षिडुरी = खाँड़ा

षिजि / षिझ्यौ } = खीझे

षित्तइ < क्षिप्त = मत्त व्यक्ति

षिनंषिन / षिन्नषिन } < क्षण-क्षण

षिभिर = खरभराए

षिभ्यौ = क्षुब्ध हुआ

षिरक्की = खिड़की

षित्र < क्षेत्र

षित्रिवट < क्षत्रिय वर्त्म? क्षत्रियों का मार्ग, क्षत्रियोचित

षुट्टी = खुटक गया

षुप्परी = खोपड़ी

षुंभीय = क्षुब्ध हुई

षुर = खुर (घोड़ों के खुर)

षुरसान / षुरासांन } = एक देश (ईरान देश का पूर्वी हिस्सा)

षूव = ख़ूब

षेलनह = खेलने के लिये, क्रीड़ा का

षेह = खेह, धूल

षेहति = धूल

षेत = खेत, संग्राम भूमि, रणक्षेत्र

षोटं = खोटा

गंजि = नष्ट करके,

गंजे = नष्ट किया

गंठिय < ग्रंथित = गांठ देना, गाँठ बाँधना

गंसि = ग्रास करके, चारों ओर से घेर के, कसके

गच्छि = सम्हाल कर ?

गज्जन < ग़ज़नी

गड्डहि = ढेर में ?

गडुंवा = गडुआ, टोंटीदार लोटा

गद्दौइ = गदा

गत्यै = गति (तृ०)

गभार = गहरा

गद्दरी = ग़दर मचाने वाली

गर्दंन = गर्द से

गर = गला

गरसी = गर्म पानी का

गरिष्ट = गरिष्ठ, भारी

गरुआयं = गुरुत्व प्राप्त होता है

गरुअत्त = महान्

गलती = गले से, सिर पर से

गल्ल = हल्ला, गाल बजाना

गल्ह < (१) जल्ह, जल्हण, (२) गल्भ = प्रगल्भा, धृष्ट

गवष / गवष्ष } < गवाक्ष, खिड़की

गवरि ∠ गौरि, गौरी

गसि = ग्रसित करके

गस्त < गश्त, घूम-घूम कर दिया जाने वाला पहरा या ऐसे पहरेदार

गहकि = ललक कर, उल्लसित होकर

गहर (१) दुर्गम, भयंकर, (२) देर

गहरगूल = अत्यन्त गहिरा

गहिलौत = एक राजपूत वंश

गहंमह = गहगहाते है

गाज < गर्ज, (१) गर्जन (२) वज्र

गाद्दीय = गद्दी, गद्दा

गांन < गान

गाहंन-गहन = गहन (कार्य भार) को ग्रहण करने वाला
गिरद<गिर्द ? सब ओर,
गिरन = गिरि का बहुव०
गिलण = निगलना, निगलनेवाला
गिलम्मे = ऊनी कालीन, गिलम
गिलोल = गुलेल
गुंड = चूर्ण, पुष्प-पराग
गुंडीर = चूर्ण विचूर्ण करनेवाले
गुंडंदति = गुड़ के बने भोज्यान्न
गुर्ज (फा०) = गदा या गदाधारी सैनिक
गुज्जर = गुर्जर-गुजरात, गुजरात का राजा
गुज्जरवै<गुर्जर पति
गुनेयं = गुणों का
गुपंति<गुप्त
गुफंति = गुम्फित करता है, गूंथता है
गुरथ्थ<गुर्वर्थ (?) भारी या बड़ा अर्थ
गुरयं<गुरु
गुराइ, उराउ, गुराव } = तोप लादने की गाड़ी
गुरदाही = छोटी तोपों की
गुरिग, गुरिय } = ग़ोरी (मुम्मद)
गुरज = गुर्ज, गदा
गुल<गुल्म = सेना का एक विभाग
गेंवर<गजवर, हाथी
गै<गय, गज
गैर<ग़ैर
गैति = गजसमूह
गैन<गगन, आकाश

गोष<गवाक्ष = खिड़की
गोठ, गोठि } <गोष्ठी
गोमग्ग<गोमार्ग
गोनं<गमन
गोमगांम<धूल (?)
गोस = <गोश (फा०) कमान कोना
गोदर = गदराया हुआ, यौवनागमन से भरता हुआ
गौ = (१) गाय (२) गया
गौषी, गौष } <गवाक्ष
ग्रधन्न = गृद्ध गण
ग्रब्ब<गर्व
ग्रब्बहन<गर्वघ्न, गर्व को नष्ट करनेवाला
ग्रब्बापहारी<गर्वापहारिन, गर्व को अपहरण करने वाला
ग्रभ्भ = गर्भ
गमारि = गँवार स्त्री
ग्रीष्च = ग्रीष्म (पृ० ८६ पर ग्रीष्म के स्थान पर यह अशुद्ध पाठ है)
ग्रह, ग्रेह = गेह, गृह
घटाइ = घटाता है
घटठ्<गोष्ठ = सलाह
घडन<घटन = गढ़ना
घननंत = घनघनाते हुए
घरघयार = घड़घड़ा कर
घरियार = घड़ियाल, समय बताने के लिये बजाया जानेवाला घंटा
घरीव = घड़ी
घहाई = घहराया

घाई<घात
घायां = चोट पड़ने पर
घार<घात = चोट। (पृ० ७२ पर 'घार' के स्थान पर 'घार' अधिक उपयुक्त पाठ होता।)
घुंटित = घुटा हुआ
घुंमर = घुमड़
घुरि = चारों ओर से घूमकर, घुड़ककर
घूठन = घुटनों के बल
घूंमरि = घुमड़कर
घोड़ानभंति = कई प्रकार के घोड़े, रासो में देश भेद से सिंधी, कच्छी, पहाड़ी, अरबी, ताजी आदि तथा लक्षण और गुण भेद से लक्खी, कुल्ला, कुम्मेत, सिरगा, सुरंग, गुलाबी, हरिया, समद, स्याह, हंसी आदि कई प्रकार के घोड़ों का उल्लेख है।
चंपाई = प्राप्त हुआ
चंपि = दबाकर
चंप = दबाना, चढ़ बैठना
चकि = चकित होकर
चक्क<चक्र
चप<चक्षु
चप्पहीन = अंधा
चच्चरं = चाँचर, होली में गाया जाने वाला प्रमोदगान
चच्छ
चच्छि } <चक्षु
चव = (१) (क्रि०) कहना (२) चार
चवं<चतुर्थ
चयं = मिले ?
चवथ्थ = वचन ?
चवदसु = चौदह
चारतारी = चारु तड़ित्, सुंदर विद्यु[त्]
चालुक्कां = चालुक्य
चावंड = चामुंड
चिग्ग = चिक, परदा
चिंघाई = चिंघाड़ते हैं
चिहलै = आनंद
चिहारं = चिंघाड़
चिल्ही = चील्ह, चील (पक्षी)
चिहु = चहु, चहुँ
चिहुरार<चिकुरभार = केशराजि
चीकट = मैल से चिकना, बना, मल[िन]
चीस = चीख
चुंगल = चंगुल
चुटक्के = चुटकी बजाते बजाते
चूरि = चोरी से
चोम<ज़ोम (अ०) = गर्व, घमंड
चौरं = <चामर
चौज<चोज, चमत्कारी उक्ति
चौडोल = पालकी
छुँड = छोड़ना
छक्क = छका हुआ; तृप्त
छग्गर = शकट = सग्गड़
छग्यौ = छक्यौ
छत्ती = क्षत्रिय
छयल्ल = रसिक, विदग्ध
छिछ = छूछा
छित<सित

छिनकुरहि = क्षण भर रहो, थोड़ी देर रुको
छिपौ = छुपा
छोनी = क्षोणी
छोह < क्षोभ (स्नेह)
जंपी = झंखी
जंजर < जर्ज्जर
जंजं = जो, जो
जंप < √जल्प् = बोलना
जंबूनद = सोना
जंम < (१) यम (२) < जन्म
जष्षि < यक्षिणी
जग्ग < (१) यज्ञ, (२) पृ० ३० पर 'जंग' के अर्थ में व्यवहृत जान पड़ता है।
जत्तौ = गया
जथ्थ = जाओ
जद्दनं, जद्दौ = यादव वंशी राजा
जद्दोवै = यादव देश का राजा
जनेउ = जनेव
जम < यम, = यमधार, दुधारी तलवार
जर < ज़र (स्वर्ण)
जरकस < ज़रकश (फ़ा) ज़री या कलाबत्तू का काम किया हुआ
जरकि = झरक, झलक
जरजरयौ = जर्जर होगया।
जराव = जड़ाव
जरे = जल रहा है, चमक रहा है
जाज्जुलित = जाज्वलित
जाँवि = जामकर, जन्म लेकर

जीमूत = बादल
जकत्तिय < युक्ति
जुग्ग < युग, दो
जुग्गिनी = योगिनीपुर (दिल्ली)
जुग्गिनवै = योगिनीपुर का राजा पृथ्वीराज
जुज्झ < युद्ध
जुलियं = जुड़े
जूना < जीर्ण
जूपी = यूपवद्ध पशु, बलि के लिये निर्मित खंभे से बंधा पशु
जूव < युवती
जूह < यूथ
जेव, जेम, जेमं = जैसे
जेहरि = पाजेब
जैत = जैतकुमार
जोगिंद < योगीन्द्र
झंकि = झाँक कर
झंझलियं < जाज्वलित
झंझा पया < झंझापगा।
झुज्झहुति = जूझ हुई
झरिप्पय = झड़पा
झलहल = झलाझल, चमकदार ?
झल्लरी = वाद्यविशेष, झाँझ, हुडुक
झार < ज्वाल = ज्वाला, लौ,
झराहर < ज्वालाधर = सूर्य
झूझ, झुज्झ < जुज्झ < युद्ध
झुज्झि = जूझकर

झौर = (१) झुंड (२) झुरमुट (३) झब्बा
ठई = स्थापित की, स्थिर की
ठठ्ठा = ठठेरा (?)
ठट्टनवै = ठट्टनो (?) का राजा
ठढ्यो = डट गए
ठाम = ठाँव, स्थान
ठिल्लौ = ठेल दिया
ठोठ = ठूँठा, निरा
डंकित = झंकृत
डंडइय = दंडित कीजिए
डंडमाली = दंडी कवि ?
डंडूरिय = धुंधुरित होना, हवा का धूल से भर जाना
डंडूर = रक्त (?)
डंवर, डंमरं, डम्मर = डंबर, आडंबर, मेघडंबर
डंमरी<(१) डंबरी = मेघडंबर से युक्त [डंबरी बाल, मेघडंबर से घिरा बाल सूर्य] (२) एक प्रकार का चँदोवा
डढ्ढ<दग्ध
डब्बे = ढब से, ढंग से
डहक्क = चिघाड़ता हुआ
डांम = <दाम, रस्सी
डिंभ = (१) बच्चा, (२) अंकुर, (३) दंभ
डुक्कर<दुक्कट<दुष्कृत = कठिन कार्य,
डोहं<द्रोह
ढिग = समीप
ढिल्ली = दिल्ली

ढरिग = ढर गया
ढिल्लीवै<दिल्लीपति
ढिल्लेसं<दिल्लीश
ढुरहि = ? ढरकते हैं, फिसलते हैं
ढोह = ढोए
तंत, तंत = (१) तंत्र, (२) तंतु
तंभोर, तंम्मोर = <तांबूल
तकसीर = कसूर, दोष
तष्षि = (१) नागिन ? (२) तीक्ष्ण
तष्षी = तीक्ष्ण ? तेज़
तच्छयं<तक्षक-नाग
तत<तत्त्व
ततविन = उसके बिना ?
तत्त<तत्त्व
तथ्थ = (१) तत्र (वहाँ) (२) तथ्य
तथ्थु = तोभी
तद्दिन = उस दिन
तत्ती = (१) तेज़ (घोड़ा) (२) उतने
तप्पनह = तपने के लिये, तप करने के०
तब्बल = डग्गा ?
तमि = तमककर
तमी = अंधकार
तरक्कंत = तड़कते हैं, तड़तड़ाकर गिरते हैं
तलपह<तल्प = बिछौने पर
तवल्लह = तबले का
तबीयन<तबीब (अ) चिकित्सक
तांम = (१) उनका (२) लाल, गोरा

तामंस
तामस्स } <तामस-तमोगुणी

तासंत = (त्रासन्त) त्रास पाते हुए

तित्तह = वह, वहाँ

तित्थ = वहाँ

तिनप्पी = तिनककर, बिगड़कर

तिरिगत्त<त्रिगर्त = एक देश, वर्तमान जालंधर और कांगड़ा प्रदेश

तिष्ट<तिष्ठ (ति) (सं), रहता है

तिस्न=(मृग-तिस्न = मृग तृष्णा)

तिह = उसे

तुट्टि = टूटा

तुण्ड = मुख का अग्रभाग, चोंच

तुछ<तुच्छ, छोटा, कोमल, सूक्ष्म

तुबक = तुपक

तुरय=तुरग घोड़ा

तुररा<(१) तुर्रा (फा०) अनोखा (२) (अ०) पगड़ी की या किसी पक्षी की शिखा

तुल्ल<तुल्य

तेम = उस प्रकार

तेह = उसे

तोअर<तोमर

तोन<तूण, तूणीर

थट्ट, थाट=ठाट

थपी = स्थापित कर

थपे = स्थापित किया

थवा = थपा

थार = थाली

थान<स्थान

थावै = स्थापित करै

थी<स्थित

थुत<स्तुत

थोभ < स्तोभ = रुकावट

दंगह = दंग करने वाला, अद्भुत

दंगे = दंग करनेवाली

दंद = द्वन्द्व

दप्पी = देखो

दभ्भै = दग्ध होता है

दड्ढ<(१) दग्ध (२) जलदड्ढ<यम-दंष्ट्रा

दत्ती = दत्त (दत्तात्रेय) मत के मानने वाले योगी ?

दप्प<दर्प

दव्वू<द्रव्य ?

दई = दिया (संभवतः पृ० १४ पर 'दीह' पाठ है)

दरद<दर्द

दरिय<(१) दलिय<दलित, दलन किया; (२) दरी, गुफ़ा

दवानं<दुवानं = दोनों का

दसियं<दर्शित

दाग<दाघ = दाह

दातार < दातृ = दाता

दाबन = द्रव्यों से (द्रव्य>दव्व>दाव)

दाव = दो

दिघ्घ<दीर्घ

दिट्ट<दृष्ट = देखा

दिट्टि<दृष्टि

दिढवर<दृढांबर ?

दियौ
दिद्ध
दिध्व
दिद्धिय
दिन्ने
दिन्नेव } दिया

दिपत्तौ—दीप्त हुआ
दिलेसं दिलीश
दिष्ट<दृष्ट
दिष्टानं—दृष्टि
दीलीय=दिल्ली में
दीसत = दीखते हैं
दीह=(१)<देह, (२)<दीर्घ
दुअ<द्रुत
दुअध = दो खंड, दो टुकड़े
दुकम<दुष्क्राम्य, जिस पर आक्रमण करना कठिन हो
दुक्कति<दुष्यति-दोष देती
दुक्रित<दुष्कृत

दुज
दुज्ज } <द्विज-(१) पक्षी, (२) ब्राह्मण

दुझारय=झटकार रहे हैं, झाड़ रहे हैं।
दुत्तर<दुस्तर
दुती<द्वितीय
दुत्तिय = दूती ने
दुपंत = दुःख का अन्त (पृ० ६० पर 'दुपन्त' के स्थान पर 'दुष्यन्त' पाठ अच्छा होता)
दुरद<द्विरद

दुलीचे
दुल्लीच } दुलीचा

दुहथ्थ<दोहा
दूंद<द्वन्द
देव बंडी = देवता ने क्रोध पूर्वक कहा?
देवस = देवता के
दोत<दूत ? [दलदोत = यम दूतों का दल ? अशुभ चिन्ह]

द्रग
द्रग्ग } दृग, दृष्टि

द्रप्पन<दर्पण
द्रह = ह्रद
द्रिगयं = दृष्टि
द्रुग्ग<दुर्ग
धंषि = धर्षण करके
धंधो<द्वन्द्व
धत्ता = धत् कह कर ?
धन्नि<धन्या
धपि धाय = दौड़ कर
धय्यौ = दौड़ा
धर = धरा
धरद्धर=धड़ाधड़
धांम<धर्म [तु० वीरधांम धुज्जिय धरा; काम धाम<कर्म धर्म]
धाराहर<धाराधर, बादल
धिषन<धिषण = बृहस्पति
धींग (१) धींगा, दुष्ट, (२) धक्कामुक्की
धुअ<ध्रुव
धुज्जिय = छिन्न विछिन्न हो गई
धुनक (१)<धनुष्, (२) धानुक, धनुर्धर
धुनयं<ध्वनित
धुम्मर<धूम्र

धुर = मध्य
धूत = (१) धौत, (२) धूर्त
धूंम = धुआँ
धूंमरी<धूम्र
धोमय<धूम, धूममय, धूसर
ध्रग = धिक्

ध्रम्म
ध्रंम } <धर्म
ध्रंमन

ध्रम्मह = धर्म का
ध्रम्मायन = धर्मायन कायस्थ
नंषि = डालकर, गिराकर, रोककर

नंषिय
नंषियं } डाला, गिराया, रोका
नंष्यौ

नंचि = नाचकर
नंजन < नर्तन, नाचना
नंतयौ = निमंत्रित किया
नंधि = <नद्ध—बाँधकर ?
नक = नाक (नभ)
नषि = डालकर
नछत्त = नक्षत्र
नछित्रन = नक्षत्र (बहुव०)
नटकीयनहन्नह = नट गई और नहीं नहीं किया नट गई और किया (नहन्नह =)
नटिठग = नष्ट हुआ
नट्ठेय<नष्ट
नथि<नास्ति
नथ्थ<अनर्थ
नद = नाद, नदि

नंद<नाद
नफ्फेरी = नफ़ीरी, शहनाई
नभ्यसी<नभस्, (१) आका[श] सावन का महीना
नय = नदी, नद
नयर<नगर
नरभ्भरं<नर भट, मर्दाने सैनिक
नरवै<नरपति
नलवाही = बंदूक धारण करनेवाले
नह = नहीं, नहीं हो तो,
नहन्नह = नहीं, नहीं
नाल = पास, साथ, को, से
नालं = नाल, बंदूक (?)
नालकेर<नारिकेल
निकरिग = निकला
निग्राहनुग्राहिनी = निग्रह और अनुग्रह करने वाली, कृपा-कोप में समर्थ
निपत्रन = नक्षत्रों (का)
निप = तनिक, थोड़ा
निघोर = घोर
निजरि = नज़र ? सामने
निज्जरिय = निजका, अपना
निज्जै = स्वय
निठ्ठत<निष्ठित
निघातिय = मारा
निनायकं = नायक हीन
निनारे = न्यारे, अलग
निय<निज
निग्घोसौ = निर्घोष [(१) युद्धनिर्घोष (२) काम केलि]
निवत्त = निवृत्त

निसुरत्ति = बिलाशर्त (?)
निहाइ = दबाकर, नष्ट करके
नीठ = अनिच्छापूर्वक
नीप = कदंब
नीरद्<नीरद, बादल
नीसान = निसान, निशान
नीसार<नीशर = आवरण, पर्दा
नृध्धति = नृपधति
नेजे = भाले
नेत = चादर, चुनरी
नै<नद, नदी
नैपथ<नैपथ्य
नैर<नयर<नगर
न्रप, न्रपति <नृप, नृपति
न्रिमंयौ = निर्मित किया
न्रिम्मल<निर्मल
न्रिम्मान<निर्माण
पंपी<पक्षी
पंपीय<पक्षी
पंग<कन्नौज का राजा, जयचंद
पंगजा = संयोगिता
पंगानि, पंगानिय = पंग की स्त्री, पंग के देश की स्त्री
पंगानी = पंग राज को
पंगुरा, पंगुरे जयचंद
पंचास = पचास
पंपनिय = अपनी (आँखों की)
पंमार = पँवार वंशी राजा या क्षत्रिय तोमर पांवार
पंवारि = पंवार जाति की स्त्री
पष्य = पक्ष
पष्षर = लड़ाई के समय हाथी-घोड़ों को पहनाया जाने वाला लोहे का झूल
पज्जाई = प्रजा भाव
पटन<पत्तन, पट्टन
पटनेर<पट्टनगर = श्रेष्ठ नगर राजधानी
पट्टन<पत्तन
पटा = पाट पर, विवाह-वेदिका पर
पटठाई = पठाई
पट्टिय = पाटी, केश-विन्यास
पडिहाय<प्रतिघात, धसकना
पढ्ढी = पढ़ी
पत्त<(१) प्राप्त, (२) पत्र (३) लाज
पत्ति<पति
पत्तौ = प्राप्त हुआ, पहुँचा
पथ्थार<प्रस्तार, विस्तार
पद्ध हारं = पद्धरी छंद, पद्धड़िया बंध
पद्धरि = पगडंडी
पप्पील<पिपीलिका, चींटी
पब्बय, पव्वय पर्वत
पयं<पदं
पयल्ल<पहला ?
पयसा = दूध से
पयानह = प्रमाणिका

पुव्व<पूर्व
पुव्वय=पुराना (पूर्विल)
पुरिष=पुरुष
पुहप=पुष्प
पुह्य=पोहा
पुहचि=पहुँची
पुहप्प<पुष्प
पुहवै<प्रभु
पूषनि=पोषण करनेवाली
पूजारा=पुजारी
पृच्छि=पूछा
पैज=प्रतिज्ञा
पेलै=वेगपूर्वक चलता है
पै=से
पैरंग=पैर
पैसंगी<पेशीनगोई=भविष्य-वाणी
पोम्मिनि=पद्मिनी
पोस<पोश (फा०) [बालपोस-बाला-पोश, ओवरकोट जैसा पहनावा]
प्रंगं=प्रकार
प्रछन<प्रच्छन्न
प्रछेद=प्रस्वेद, पसीना
प्रजरंत=प्रज्वलित
प्रतषि<प्रत्यक्ष
प्रथ्थ=पृथ्वीराज
प्रपील<पिपीलिका, चींटी
प्रव्व<पर्व
प्रव्वत<पर्वत
प्रयतं<पर्यन्त
प्रष्ण<प्रश्न
प्रसद्दं=ज़ोर से शब्द करता हुआ
प्रसन<प्रसन्न
प्रस्स=स्पर्श करके
प्रह<प्रभा, प्रकाश
प्रोढह<प्रौढा
प्रोहित्त<पुरोहित
फरस=परशु
फरहारि=फरहरा कर
फारिक=तेज़ चलनेवाला (अ० फरक़)
फारि=(१) फाड़कर, (२) प्रहार कर
फीफुनि=पुनः पुनः
फुट्ठि=फूटकर
फुनि=पुनः
फुरमान<फ़रमान
वंक<वक्र
वंछि=वाञ्छा की, चाह
वंध=वट्टा, विवाह की स्वीकृति
वंद<विन्दु
वंब=आवाज़, भंभ
वंभ<ब्रह्म
वंभान<ब्राह्मण
वपत्त<वक्त
वग्ग, वग्गु<वेल्गा, बाग, लगाम
वज्जुन<वाद्य=बाजा
वट्ट<वर्त्म=बाट, राह
वड्ड=बड़ा
वद=मूर्ख
वत्त, वत्तं=बात वार्ता
वत्तरी, वत्तरीय, वत्तरिय } <वार्ता
वथ्थ<वस्तु

भवरयं = भाँवरी
भविछ्त<भविष्यत्
भारथ्थ<भारत, युद्ध
भांमि<भामिनी
भारथी<भारती, सरस्वती
भार<भट (सुभार = सुभट)
भारिय = भारी
भासह } कहा
भासो }
भिष्ट<अभीष्ट
भुअ (१)<भू, (२) भुज, (३) हुआ
भुअन = भ्रू, भौंह
भुआर<भूपाल
भुप = भूपित
भुगति<भुक्ति
भुत<भूत, हुआ
भुसंत = भूकता है
भुल्लै = भूलता है
भृत<भृत्य
भोडलयं<भमंडल, नक्षत्र-समूह
भोयंसी = भोग,
-भ्रत्त<भृत्या
भ्रत्तार<भर्तृ, भरतार
भ्रसुंड<भुशुंड
मंडिय<मंडित
मंत<मंत्र
मंमि<अमृत ?
मक्र<मकर
मग्ग<मार्ग
मज्झ = मध्य में
मज्झि = (मुखं मज्झिपायं = मुख में से पैर निकल रहा है, तेज़ी के कारण)
मत्ता<मात्रा
मथ्थं = मत्त हो उठे
मयमत्त<मदमत्त
मन्नयं = माना
मय<मद
मरनय<मरण
महिय = पृथ्वी
महीव = महती
महु<मधु
महुर<मधुर
माजं<मज्जन
मार = (१) चोट, (२) माँड़ या शोभा
मिग<मृग
मित्तह = मित्र का
मुक्ति = मोती
मुक्क<मुक्त
मुकालि = देना, छोड़ना
मुख, मुष्प<मुख,<मुख्य
मुत्ति = मूर्ति, (२) मोती
मुर<मुद
मुर वेस } मुदवयस् = युवाकाल
मुर वैस }
मुरी<मूली, लता
मुद्ध<मुग्धा
मुहर<मुखर
मेगल } मत्तगज, हाथी
मेगज }
मेछ<म्लेच्छ

मेतं<मैत्र
मल्हइ=छोड़ता है
मेर<मेरु
मैंन<मदन
मोकल=(१) भेजना, संदेशा देना (२) बहुत
म्रग, म्रग्ग<मृग
म्रगमद, म्रग्गमय } मृगमद, कस्तूरी
म्रत<मृत्यु, मृत
रंगभोम<रंगभूमि
रंभ (१) आरंभ (२) रंभा
रष्पन<रक्षण
रष्पिय, रष्यौ } <रक्षित, रखा
रज, रज्ज } <राज्य, राजा
रतंन<रत्न
रत्तरी<रात्रि
रत्ति<रात्रि
रत्तं<रक्त, (१) खून, लाल
रत्तौ=अनुरक्त हुआ
रबद्दं=आवाज़
रब्बरिय=रावड़ी, मट्ठा से बना हुआ भोज्य पदार्थ
रम=रम्या, (सु-रम=सुरम्या)
रलिय=मिले
रली=आनंद, मौज
रवन=रमण, प्रिय
रवन्निय<रमणी, स्त्री
रह<रथ
रावत्त<राजपुत्र, राउत

रावर<राजकुल, अन्तःपुर
राहु<राहु
रिद एवं<हृदये, हृदय में
रिन, रिन्न } =अरिन, शत्रुओं
रुवंत, रुदंत=रोता हुआ
रुधिधार<रुधिर धार
रुनौ, रुन्नौ=रोया
रूपधरारी=रूपवती
रूव, रूव्व } रूप
रूरिग=आवाज़ की
रूहिर<रुधिर, रक्त
रूप<वृक्ष
रूरी=(१) उत्तम (२) रोली
रेहंत=उरेहना, आँजना
रोमयं थंचं=रोमांच हुआ
रोही=लाल, खून
लष्प=(१) देखा; (२) लाख (एक लष्प दस अग्ग=११००००)
लष्पी=एक प्रकार का घोड़ा
लछिन्न<लक्षण
लच्छीस<लक्ष्मीश
लत, लति, लत्त, लत्ता } लता
लज्ज, लज्जी=प्रिया,
लद्दी<लब्धा
लंभि=प्राप्त करके
लरथ्थर=कंपित, लड़खड़ाते हुए
लल्लरिय=खूब लड़े ।

भवरयं = भाँवरी
भविष्यत<भविष्यत्
भारथ्थ<भारत, युद्ध
भांमि<भामिनी
भारथी<भारतो, सरस्वती
भार<भट (सुभार = सुभट)
भारिय = भारी
भासह } कहा
भासो }
भिष्ट<अभीष्ट
भुअ (१)<भू, (२) भुज, (३) हुआ
भुअन = भ्रू, भौंह
भुआर<भूपाल
भुप = भूषित
भुगति<भुक्ति
भुत<भूत, हुआ
भुसंत = भूकता है
भुल्ले = भूलता है
भृत<भृत्य
भोडलयं<भमंडल, नक्षत्र-समूह
भोयंसी = भोग,
भ्रत्त<भृत्या
भ्रत्तार<भर्तृ, भरतार
भ्रसुंड<भशुंड
मंडिय<मंडित
मंत<मंत्र
मंमि<अमृत ?
मक्र<मकर
मग्ग<मार्ग
मज्झ = मध्य में

मज्झि = (मुखं मज्झिपायं = मुख में से पैर निकल रहा है, तेज़ी के कारण)
मत्ता<मात्रा
मथ्थं = मत्त हो उठे
मयमत्त<मदमत्त
मन्नयं = माना
मय<मद
मरनय<मरण
महिय = पृथ्वी
महीव = महती
महु<मधु
महुर<मधुर
माजं<मञ्जन
मार = (१) चोट, (२) माँड़ या शोभा
मिग<मृग
मित्तह = मित्र का
मुक्ति = मोती
मुक्क<मुक्त
मुकालि = देना, छोड़ना
मुख, मुष्प<मुख,<मुख्य
मुति = मूर्ति, (२) मोती
मुर<मुद
मुर वेस } मुदवयस् = युवाकाल
मुर वैस }
मुरो<मूली, लता
मुद्ध<मुग्धा
मुहर<मुखर
मेगल } मत्तगज, हाथी
मेगज }
मेछ<म्लेच्छ

मेतं<मैत्र
मल्हइ = छोड़ता है
मेर<मेरु
मैंन<मदन
मोकल = (१) भेजना, संदेशा देना (२) बहुत
म्रग, म्रग्ग<मृग
म्रगमद, म्रगम्मय } मृगमद, कस्तूरी
म्रत<मृत्यु, मृत
रंगभोम<रंगभूमि
रंभ (१) आरंभ (२) रंभा
रष्पन<रक्षण
रष्पिय, रष्यौ } <रक्षित, रखा
रज, रज्ज } <राज्य, राजा
रतंन<रत्न
रत्तरी<रात्रि
रत्ति<रात्रि
रत्तं<रक्त, (१) खून, लाल
रत्तौ = अनुरक्त हुआ
रवद्दं = आवाज
रब्बरिय = राबड़ी, मट्ठा से बना हुआ भोज्य पदार्थ
रम = रम्या, (सु-रम = सुरम्या)
रलिय = मिले
रली = आनंद, मौज
रवन = रमण, प्रिय
रवन्निय<रमणी, स्त्री
रह<रथ
रावत्त<राजपुत्र, राउत
रावर<राजकुल, अन्तःपुर
राह<राहु
रिद एवं<हृदये, हृदय में
रिन, रिन्न } = अरिन, शत्रुओं
रुवंत, रुदंत = रोता हुआ
रुधिंधार<रुधिर धार
रूनौ, रुन्नौ = रोया
रूपधरारी = रूपवती
रूव, रूव्व } रूप
रूरिग = आवाज की
रूहिर<रुधिर, रक्त
रूप<वृत्त
रूरी = (१) उत्तम (२) रोली
रेहंत = उरेहना, आँजना
रोमयं श्रंचं = रोमांच हुआ
रोही = लाल, खून
लष्प = (१) देखा; (२) लाख (एक लष्प दस अग्ग = ११००००)
लष्पी = एक प्रकार का घोड़ा
लछ्छिन्न<लक्षण
लच्छीस<लक्ष्मीश
लत, लति, लत्त, लत्ता } लता
लज्ज, लज्जी = प्रिया,
लद्दी<लब्धा
लंभि = प्राप्त करके
लरथ्थर = कंपित, लड़खड़ाते हुए
लन्नरिय = खून लड़े ।

लहू (१)<लघु, (२) रक्त
लिद्धि = लिया, ली
लुथ्थि = लोथ
लुंपति = लोप करता है, या लोप होता है।
लोय<लोक
लोयन } लोइन } <लोचन, आंख
वंक<वक्र
वंकम<वक्रिम
व्यंद<बिंदु
वकारिय,<वगारिय = फैलाया
वग्ग = (१) वर्ग (२) वल्गा, लगाम
वचन्न = (१) वचन (२) वचनिका, गद्य लेख
वत्त } वत्तरी } वृत्त,<वार्त्ता
वथ्थ<वस्तु
वद्दि = बोली ?
वनथ्थि = वर्ण से
वय (१) वयस, उमर, (२) चिड़िया
वरउंच = वर योग्या
वरष्ष = वर्ष
वरद्दिय = वरदायी, चंद
वसीठ<विसृष्ट = दूत
वहिग = (१) वही, २) वह गया
वाइ } वाय } <वायु
वागवानी<वाक्, वाणी
वाजित्र<वाद्य
वानीय<वाणी

वामंन<वामन
बारुन्न<वारण = हाथी
बारौठि = बरौठे का, द्वार चार
विकम<विक्रम
विगत = बीती बात, घटित वार्ता
विगस्सि = विकसित होकर
विचष्षन<विचक्षण
विंटन = वींटना, छितराना
विडारना = तितर बितर कर देना
वित्तां करै = बातें करता है
वित्थार<विस्तार
विद्दी = वेधा
विनह = विना
विनानं = बनाव ?
विफार<विस्फार = कंपन, ज्य-निर्घोष
विमग्ग<विमार्ग
विय = (१) इव, (२) द्वितीय
विरष्य<वृक्ष
विलहान<बोल्लाह (एक प्रकार का घोड़ा) का बहुवचन ?
विरदै = विरुद गाते हैं
विविहा = विविध
विवानं<विमान
विसष्पै = विशिष्ट होवे
विसव्वा = विश्वा
विसेक = विशेष ?
विहंडि = नष्ट करके
बीय = द्वितीय
वृत } वृत्त } वृत्तह } व्रत

वृत्य<वृत्ति

वृन्न = वर्ण

वोहत्थ / वोहत्थयं } जहाज

व्रन्नै = वर्णन करता है

श्रप्प = (१) शाप, (२) सर्प

श्रप्पौ = शाप दिया

श्रव्व<सर्व

श्रव्वन-विवरि = श्रवण-विवर में

श्रव्वान<श्रव्य

श्रोतान = (१) सुलतान (सं० सुरत्राण), (२) श्रवण

श्रोतानं = श्रुतो में, सुने हुए लोगों में

श्रोन<(१) श्रवण, (२) लाल (शोण)

संकमौ<संक्रम

संकरयं = संधिकाल

संष = (१) शंख, (२) संख्या

संषुलै<संकुलित

संघन = साथी

संघातिय = संगी ?

सच / संची } = सच

संधं = संधि

सन्नाह = सनाह

संपत्तौ<संप्रात

संन्नरिय = सुमिरा

संभ = शंभु

सभरि / संभरी } = शाकंभरी क्षेत्र, सांभर का इलाक़ा

संभरिधनी / संभरवै / संभरेस } पृथ्वीराज

संभरौ = स्मरण करो

संमुह<सम्मुख

सक्करी<शर्करा = चीनी

सष्पिय / सष्पी } = सखी,

सग्गा = सगाई

सगत्ति<शक्ति

सगपन / सगप्पन } संबंध

सगीन = सखियों या हमजोलियों में

सच्चीव = शची, इंद्राणी

सच्छ<स्वच्छ

सज्जन = प्रिय, साजन

सझ्झ = <साध्य

सट्ठयो = साठ

सतपत्रं = कमल

सतफल<शतफला, घुंघुची

सत्त = (१) सत्य, (२) सत, सात, (३) सत्त्व, बल

सत्तमि = सतमी

सत्ति = (१) सत्य (२) शक्ति

सथ / सथ्थह / सथ्थय } साथ

सद्द<शब्द

सद्दि = बुलाकर

सद्धै = सिद्ध होता है, शोभता है

सयन्नं<शयन

सयन्न-पगारं = सैन या इशारे के प्रकार से

सभ<सभा

समष्पन<समक्ष
समग्ग<समग्र
समथ<समर्थ
समप्पन<समर्पण
समप्पो = समर्पण किया
समह = साथ
सपत्तौ = संप्राप्त हुआ, पहुँचा
सयनंतर<शयनांतर, शयन में
सयन = (१) शयन (२) सेना (३) इशारा
सयल<सकल
सरित्त = सरिता
सरूव = स्वरूप
सलष = सलख पांवार नामक सरदार
सल्लै = सालता है
साहब = शहाबुद्दीन गोरी
सत्र = यज्ञ
साइक = सायक, बाण
साकत्ति = शक्ति
साकत्ति, साकति वाजं — शक्ति या शक्तिवज्र नामक पृथ्वीराज का घोड़ा
साकृत = शक-संबंधी,
साष<शाखा
साकुन<शकुन (१) सगुन (२) गृद्ध
साज = (१) साजता है, शोभता है, (२) सज्जा (३) साजिश, साट-गांठ
साजं = सज्जित किया
साटक = शार्दूल-विक्रीड़ित के समान छंद, सद्दूल सट्टक
साम<संमुख
स्याल = स्यार
सार = तलवार, लोहा
सारंगहर<शार्ङ्गधर, विष्णु
सारि = (१) शतरंज की गोटी, (२) मैना
सावज = वन्यजीव, श्वापद
सावत्त, सावर्त — सावित्र
सावरं<शावक = बच्चा
सिषंड = शिखंड, मयूर की शिखा
सिषंडिय = मयूर
सिज्या<शय्या
सिढ़ि = सीढ़ी
सित्त (१)<शत (२)<सप्त,
सित्तावह = शीघ्र
सिंभ = (१) सिंह (२) नाच-गान, सिंगार
सिलह = हथियार
सिष्ट<सृष्टि
सिस = शीर्ष, पत्र-शीर्ष
सिलीपा = (१) शिला-सी
सु = अच्छा; कई जगह पाद-पूरणार्थक अव्यय
सुइंद = इंद्र
सुकलेव = सुकल्पित पूजा के लिये रचित
सुंजुरी = संयुक्त, जुड़ी हुई
सुतिभावहि = सत्यभाव से
सुथनं<सुस्तन
सुद्रव्य = सुद्रव्य

सुदीह = सुदीर्घ, लंबा

सुबर<सुभट

सुभंत=शोभित

सुभत्तौ=सु-भक्त; अच्छा भात

सुरंभ = सुरम्य ·

सुर=(१) देवता, (२) सुरत्राण (सुल्तान)

सुरतान = सुलतान

सुरम = सुरम्या

सुरसुरी = गंगा

सुरी = छुरी

सेज = सैन, इशारा ?

सैंध = संधि

सोवन, सोवन्न=सौवर्ण

स्रग = स्रक्, माला

स्रग्ग } स्वर्ग
स्रुग्ग }

सब्ब=सर्व

हंक = हांकना, प्रचारना

हंड = खोजना, ढीढ़ंना

हक्कयौ = हाँका, ललकारा

हको हक्कवक्कं = सभी आश्चर्य चकित रह गए।

हथलेवं = हथलेवा, पाणिग्रहण

हल=हड़कंप

हथ्थि = हाथी

हव्विस = हवि

हलहलिय = खरभरा गए

हलै = हिलता है

हली = हिली

हारयं<हार

हाहुलीराय = एक सरदादर

हुज्जाव = ग़ोर का एक सरदार

हुलं<फुल्ल = प्रफुल्ल

हेजम } दूत, हज्जाम (?)
हेजम्म }

हेंवर } हयवर, घोड़ा
हैवर }

है = हय, घोड़ा